अथ—

* श्रीमिथिलामाहात्म्यम्भाषाटीका सहितम् *

॥ प्रारभ्यते ॥

श्रीरामचन्द्रायनमः ।



श्रीरामायण सरण

पुस्तकमिलनेकापता—

कन्हैयालाल कृष्णदास

"श्रीरमेश्वर" छापाखाना,

दरभंगा

पुस्तकमिलनेका पता—

श्रीमहन्थलाल मालिकके ड्योढ़ पर

मो० ओ पो० देवोधा जि० दरभंगा

अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०
कीतु	किंतु	१६	१
याम	यामः	१६	१
विस्तार	विस्तारः	१६	२
राजा	राज	१६	४
इस्वाकु	क्ष्वाको	१६	४
खानिरू	खनिरु	१६	६
धनु	धनू	१७	३
भंवत्	भवत्	१७	२
शिरः	शिर	१७	४
पुन्य	पुण्य	१७	५
स्मूत	स्मुत	१५	५
ह	द	१७	६
विस्व	विश्व	१८	३
भुक्ति	मुक्ति	१८	४
पुण्यदा	सर्वदा	१८	५
तुष्टी	तुष्टि	१९	१
सांके	साके	१९	१
त्यक्ता	त्यक्त्वा	१९	२
स्थां	स्यां	१९	३
शम	शमः	१९	४
पुण्यां	पुण्यो	१९	४
त्पु	त्सु	२०	१
यज्ञा	याज्ञ	२०	२
शनदी	सनदी	२०	३
भूक्तिइ	भूक्तिरि	२०	४
लक्षणा	लक्षणाः	२१	२
वंस्या	वंश्या	२१	३
दायका	दायकाः	२१	४
क्रिका	क्रिकः	२२	२
यस्या	यस्याः	२२	३
पिणेनि	पिणा	२२	३
निभिः	धिभिः	२३	१
यपि	अपि	२३	२
वस	वसे	२३	३

शुद्धिपत्र.

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंन्ती	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०
मैत्र	मैत्रेय	१	२	द्वयो	द्वयोः	७	२	ज्ञान	ज्ञातं	१३	१
पूर्व	पूर्वं	१	२	ईति	इति	७	२	वदः	वद्	१३	२
परासर	पराशर	१	४	मनो	मनस	९	२	दवि	दपि	१३	३
ना	न	२	३	तर्को	तर्का	१०	२	देवतास्त	देवास्त	१४	१
घु	घू	३	१	पै	प	१०	२	पसर	पराशर	१४	१
घु	घू	३	३	सु	सू	१०	४	मति	मती	१४	३
द्वा	द्वा	४	२	ज्ञता	ज्ञात्वा	११	१	वेच्छा	वेच्छा	१४	५
ज्ञे	ज्ञेः	५	२	स्ये	स्थै	११	१	वन्तोद्भव	वतोभ	१५	२
ति	त्ति	६	१	स्वा	सा	१२	२	मोक्ता	मोक्ताः	१५	२
नीसका	निष्का	६	३	गर्ति	गति	१२	२	सखय	सखयः	१५	३
ये	य	६	४	स्येपा	स्येषा	१२	३	क्रितिता	क्रितिताः	१५	३
म्ती	म्ति	७	१	परम	परः	१२	२	दन्ती	दन्ति	१५	३

श्रीजानकीवल्लभोविजयतेतराम् (मतेन्द्रस्य) श्रीमन्मारुतनन्दनायनमः
श्रीमैत्रेउवाच ॥ श्रुतंतवत्तोमयापूर्वंरहस्यं जानकीपतेः अयोध्यायाश्चमहात्म्यं-
तत्रावासफलंतथा ॥१॥ इदानीं श्रोतुमिच्छामि रामतत्वविवेचनं ज्ञानवया-
स्तत्वसर्वस्वं यथावेदेषुवर्णितम् ॥२॥ श्रीपराशरउवाच ॥ सीतारामात्मकंतत्वं

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ॥ श्रीगनेशाय नमः श्रीमीथिलामहात्म्य ॥दो०॥ रामजानकीतत्वकोव
रणयोअध्याऐक रामायणसवक्षाडिके राखहूमनयहटेक ॥१॥ श्रीमैत्रयमुनिकहतेहै किहेसर्व्वरहस्यज्ञ
मुनीश्वर परासरजी आपसेश्रीजानकीपति श्रीरामचंद्रजीके सम्पूर्णरहस्यऔरअयोध्यापुरीकामहा
त्म्य और उसी प्रकार अयोध्यापुरी में यात्रा करने का फल हम सुन चुके ॥ १ ॥ अब श्रीराम

चन्द्र और श्रीजानकी जीके तत्वका विचार जो वेदने वर्णन किया है वह सुना चाहता हूं ॥ २ ॥
परासरजी बोले कि हे मुनि श्रीसीताराम मय जो है तत्व वह सब कारणों का कारण है और रूप अ० १.

सर्वकारणकारणम् ॥ अनयोरैकतातत्वं गुणतोरूपतोपिच ॥ ३ ॥ तत्पदंराम
इत्युक्तंजानकीभावरूपिणी ॥ तयोरैक्यंभवेत्तत्व मितिवेदविदोविदुः ॥४॥ तत्व
तो मन्त्रतोवापि रूपतो गुणतोपिवा ॥ नापृथग्भावना यस्यमज्ञेपोभावकोत्तम ५
एवमेवम यापृष्टो वशिष्ठोमासमादिशत् यथातंपद्मजः प्राह तत्समासेन मेश्रृणु

और गुण दोनो की जो एकता है उसी को तत्व कहते हैं ॥ ३ ॥ तत्व एसा इस पदमें तत्पद से २.
श्रीरामजू समझना और त्व पदका अर्थ है भाव उसको श्रीजानकीजी समझना इसी प्रकार दोनों

की एकता जो है उसी को वेद जानने वाले लोग तत्व कहते हैं ॥ ४ ॥ और तत्व ते और मंत्रते और रूपते अथवा गुणते भी जिस को भावना पृथक् नहीं है उसी को उत्तम भाव कहते हैं ॥५॥

॥६॥ रामान्न मैथिलीभिन्ना मैथिल्यानरघूत्तम ॥ द्वयोरैक्यंविजानीयात्तत्वतो नैकरूपतः ॥ ७ ॥ द्वयोर्नित्यंद्विधारूपं तत्वतोनित्यमेकता ॥ राममंत्रस्थिता सीता सीतामन्त्रेरघूत्तमः ॥८॥ यतोवर्णात्मकोरामः सीतामात्रात्मिकाभवेत् ॥

इस प्रसंग को मैंने वशिष्ठ मुनिसे पूछा था और वशिष्ठ जीने जिस प्रकार श्रीब्रह्माजी के मुख से सुन कर मुझसे कहा था वह सब मै कहता हूं सुनिये ॥ ६ ॥ श्रीरामचन्द्र जूसे श्रीजानकीजू और श्रीजानकी जूसे श्रीरामचन्द्रजू कदाचित् भिन्न नहीं हैं दोनों को तत्व करिकै एकही जानो

केवल रूप देखनेमें दोहैं ॥ ७ ॥ दोनों स्वरूप नित्य अर्थात् अविनाशी है और देखनेमें तो दोहै
परन्तु तत्त्व मे दोनों एकही हैं और राममंत्र में सीता औ सीतामंत्रमें रामजू सदा निवास कर

यद्वाशब्दात्मकोरामः सीताशब्दार्थरूपिणी ॥ ९ ॥ यद्वावाणी भवेत्सीतारामः
शब्दार्थरूपवान् ॥ एवमेवविधानेन यथासूर्येप्रभास्थिता ॥१०॥ रत्नेमौल्यंनृपे

ते हैं ॥ ८ ॥ जो वर्ण रूप रामचन्द्रजी हैं तो मात्रा रूप श्रीजानकीजी हैं और जो घटादि शब्द के
समान श्रीराम चन्द्रजी है तो घटादि सब्दका जो अर्थ है उस अर्थ के समान श्रीजानकीजी
को समझो ॥९॥ और वर्ण रूप श्रीजानकीजी है तो अर्थ रूप श्रीरामचद्रजी है जिस प्रकार ४.
सूर्य मण्डल में प्रभा रहती है उसी प्रकार श्रीरामचन्द्रजी में श्रीजानकीजी रहती हैं ॥ १० ॥

जिस प्रकार रत्नमें मोल और राजामें कीर्ति रहती है उसी प्रकार रामचन्द्र जीमें सीताजी
रहती है और इसी प्रकार रामचन्द्र जी अर्थात् दोनों शरीर में दोनों सदा वीराजते हैं ॥११॥

कीर्ति स्तथारामेस्थितातुसा ॥ जानक्यां राघवोप्येव महैतेनसदास्थितः ॥११॥
एवमेवद्वयोरैक्यं वेदज्ञैः परिनिश्चितं ॥ यथायोध्यापुरीनित्या मिथिलापि तथा
स्मृता ॥१२॥ सर्वैश्वर्य्यगुणवीपि नायोध्यातः पृथग्मता ॥ अयोध्यका यथा
नित्या स्सर्वमंगलरूपीणः ॥ १३ ॥ तथैव मैथिलास्सर्वे सर्वमंगलविग्रहाः नित्य

इसी कारन वेदके जानने वाले लोग रामचन्द्र जी और जानकीजी के स्वरूप को एकही कर
के मानते हैं और जिस प्रकार अवधपुरी अविनासी है उसी प्रकार मिथिलापुरी कोभी अवि

नामी कहते है ॥ १२ ॥ सम्पूर्ण एश्वर्य्य और गुणोंमे किसी प्रकार अवधसे मिथिला पृथक
नहीं जानी जाती हैं और जिस प्रकार अवध वासी लोग नित्य और मंगल रूपहै ॥ १३ ॥

भुताः सदाशूद्धा पुनरावृत्तिवर्जिताः ॥१४॥ नित्यानंदरसास्वादु रूपीणो राम-
पार्षदाः ॥ श्रीरामाराधकानाञ्च निवासार्थ विशेषतः ॥ १५ ॥ मिथिलासर्वथा
पुण्या यथायोध्यातथाहिसा ॥ नीष्कामानां सकामाना मज्ञानां ज्ञानशालि
नाम् ॥१६॥ कथंचित्तत्रचेद्वास उद्धारार्थंभवेदलम् ॥ तत्रयात्रामहापुण्या सर्वका

उसी प्रकार मिथिला वासी लोगभी सम्पूर्ण मंगल रूप है और नित्य और पवित्र और जरा
मरन से रहित हैं ॥ १४ ॥ और नित्यानन्द रूप जो रस है उसीको येलोग पान करते है

और ये लोग श्रीरामचन्द्रजी के पास में रहने वाले हैं और श्रीरामचन्द्र जीके आराधक लोगों के रहने के लिये यह मिथिला देस निर्मित है ॥ १५ ॥ और यह मिथिला पुरी सर्वथा प्रशस्त और अवधके समान है और जिस को नाना प्रकार की कामना है अथवा जो कामना से

मसमृद्धिनी ॥१७॥ एवंरहस्यंतत्वस्य वर्णयन्त्रीमनीषिणः ॥ द्वयोर्नाम द्वयोर्धाम द्वयोस्तत्वं द्वयोर्व्रतम् ॥१८॥ द्वयोराराधनंचैव द्वयोर्प्रीतिकरंसमम् ॥ इति येषांनचेद्भाव स्तेनराः पापभागिनः ॥ १९ ॥ संसारेषुनिमज्जंति स्वकर्मपरिवं-

रहित अर्थात् ज्ञानी है अथवा अज्ञानी है ॥ १६ ॥ जो किसी प्रकार प्राणी मिथिला पुरी मे निवास करै तो वह और लोगों का उद्धार करने में समर्थ होता है और मिथिला पुरी की यात्रा महा

पुन्य दायक है और सब कामना देनेकी सामर्थ्य रखनी है ॥ १७ ॥ इस प्रकार रहस्य तत्व के
पण्डित लोग वर्णन करते हैं और श्रीराम जानकीजी के नाम और स्थान और तत्व और
व्रत ॥ १८ ॥ और दोनों रूप का आराधन एक है और वेदोनों प्रीति करने में तुल्य हैं यह

चिताः वशिष्टेनसमाख्यातं त्वत्प्रीत्यै वर्णितंमया ॥ २० ॥ सिद्धान्तवीजमपरं
शृणुष्वैकमनामुने सर्वाधारं जगन्मूलं सर्वकारण कारणम् ॥ २१ ॥ वेदवेदान्त

ज्ञान जिन को नहीं है वहीं लोग पाप के भोग करने वाले हैं ॥ १९ ॥ और वही मनुष्य इस
संसार में अपने कर्म्म से वञ्चित हो कर विषय में डूवा हुआ है इतना कह कर पराशरजी
बोले कि हे मुनि वशिष्ठ जीने जो मिथिला महात्म्य मुझसे कहाथा उसको मैंने आपुकी प्रीति

से वर्णन किया है ॥ २० ॥ हे मुनि अवमै शिद्धान्त का परस्पर कारण कहताहूं एक चित्त हो कर सुनिए कि जो सब का आधार और जगतका कारण है उस कारण का भी यह कारण अर्थात् हेतु है ॥ २१ ॥ वेद और वेदान्त और सिद्धान्तों के और ॐकार के स्वरूप है आदि

सिद्धान्तं यत्तत्प्रणवरूपकम् अनादिमध्यनिधनंव्यपदेशगुणैः परम् ॥ २२ ॥
वहिरन्तश्च निस्यूत मवाङ्मनोगोचरम् ।निष्कलंनिष्प्रतिद्वंद्वं निर्विकारं निरंञ्ज

और मध्य और अन्त रहित हैं कोई उनके गुण वर्णन नही करशक्ता ॥ २२ ॥ और वाहर और भीतर निस्यूत अर्थात् समाये हुए है और मन और वचन से अगोचर अर्थात् अदृष्टि और निष्पाप और एक और विकार से रहित और निरंजन हैं ॥ २३ ॥ और सत्तामात्र अर्थात् अंश

ज्ञान हैं और परब्रह्म और सत् असत् अर्थात् स्थूल और सूक्ष्म के परे है यह बात विद्यवान्
महातमा लोग अपनी बुद्धि के अनुसार ॥ २४ ॥ तत्व के जानने वाले अपने ग्रथों में जिस नि-

नम् ॥२३॥ सत्तामात्रपरंब्रह्म सदसत्परमेवयत विद्यावन्तोमहात्मानः स्वस्वत
र्कोनुसारतः ॥ २४ ॥ निरूपयन्तियत्किञ्चित् स्वस्वग्रंथेषु सात्विकं ॥ तस्य
व्याप्यस्वरूपस्य निर्गुणस्य परात्मनः ॥ २५ ॥ प्रभावात्कारणंराम इति नार-
द संमतिः तच्छक्ति जानकीरूपा तेनाभिन्नामहामुने ॥ २६ ॥ सुक्ष्मासं ज्ञानस-

गुण को निरूपण किया है उस निखिल रूपी निर्गुण परमात्मा का ॥ २५ ॥ कारण प्रभाव कर
के श्रीरामचन्द्रजी जो परम ईश्वर है उनकी इच्छा रूपी जो सक्ति है सोई श्रीजानकीजी हैं इस

लिये श्रीरामचन्द्रजी से श्रीजानकीजी भीन्न नहीं है हे मुनि यह नारदजी की सम्मति है ॥२६॥
ब्रह्म ज्ञान के थोड़ी कला कोभी मनुष्य अच्छे प्रकार से जान कर संसार पाश से मुक्त होजाते
र्वस्व मितिज्ञात्वा प्रमुच्यते ॥ ज्ञानस्यैषा पराकाष्टा सर्वभाव ज्ञसंमतिः ॥ २७ ॥
समाप्तिरत्रग्रन्थानां वाच्यवाच कसंपदां एतावद्वेद सर्वस्व मेषावैब्रह्मसम्मतिः
॥ २८ ॥ यदनेनप्रकारेण सीतारामौ हृदिन्यसेत् ॥ सीतारामौस्वयंधर्म्मौ सीता
हैं और ज्ञानी की उत्तम दसा एही है यह पदार्थ के जानने वालों कि सम्मति है ॥२७॥ वाच्य
और वाचक की सम्पदा जो है ग्रन्थ उसका ऐश्वर्य्य यही जानना यह ब्रह्माजी की सम्मतिहै ॥२८॥
इस प्रकार से जो सीताराम है उनकी अपने हृदय में धारण कर के दोनों स्वरूप को धर्म्म रूप और
सबके प्रभु एक समझना चाहिये ॥२९॥ और वही सीताराम संसार स्वरूप और संसार के कारण

है जिनके लिये सब साधकों का बड़ा परिश्रम है ॥३०॥ और कितने चिन्हों से वह सीताराम
चिन्हित हैं औ सज्जन लोगों के गति है और ज्ञान की उत्तम दिसा और विज्ञान कहिये अनुभव

रामौस्वयंप्रभुः ॥ २९ ॥ सीतारामौजगद्बीजं सीतारामौस्वयंजगत् ॥ सर्वेषां
स्वाधकानाञ्च यदर्थंवै परिश्रमः ॥३०॥ लक्षणैर्वहुभिर्लक्ष्यैः सीतारामौ गतिं-
सतां ज्ञानस्यै षापराकाष्टा विज्ञानस्याश्रयः परम् ॥ ३१ ॥ विज्ञायैतत्प्रयत्नेन
कृतकृत्यो भवेन्नरः ॥ पठनाच्छ्रवणान्मर्त्यो मुच्यते सर्वपातकैः ॥३२॥ इति

के आश्रय है ॥३१॥ इसी प्रकार इस तत्व को जान कर वह मनुष्य कृत्य कृत्य हो जाते हैं ॥३२॥ ❀

इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिला महात्म्ये त्रयोदसोऽध्याय ॥ १३ ॥ १ ॥

दो०-पराशर ने उत्तर दियो, मिथला भूविस्तार। जुग अध्या देवता सकल, रामायण सुखसार ॥२॥
फिर मैत्रय जी ने कहा कि हे मुनि श्रीसीतापति के अतुल रहस्य मैंने सुना परंतु संक्षेप मात्र आप

मैत्रेयउवाच ॥ एतद्रहस्यमतुलं विज्ञानंजानकीपतेः ॥ पुनर्विस्तारतः किंचिच्छ्रो-
तुमिच्छामि तद्वद ॥ १ ॥ स्वरूपंनामचव्यक्तं चरित्रं चापिविश्रुतं केषांचिद
पिलोकेस्मिन्केषु शंकानविद्यते ॥ २ ॥ परंत्वयोध्ययातुल्या मिथिलावर्णितात्व
या तस्याविस्तारव्यायाम स्वरूपानिवदस्वमे ॥ ३ ॥ तस्यायात्राकथंकस्मिन्

ने वर्णन कियाहै और मुझको विस्तार पूर्वक सुननेके इछाहै इसलिये आप विस्तार पूर्व्वक वर्णन कीजिय ॥१॥ श्रीराम जानकीजी के रूपका वर्णन और नाम और उन दोनोस्वरूपके चरित्र जो लोकमे विख्यातहै उसकोमैने सुना यद्यपि इस लोकमें कोई वस्तुके कोई स्थानमें मुझको शंका करना योग्य नही हैं ॥२॥ तथापि अवधके बराबर मिथिलापुरीको आपने वर्णन कियाहै अब उसका

प्रमाण वतलाइये कि कितना दीर्घ वो कितना विस्तारहै ॥३॥ और वहांपर किसकिस स्थानमे कौन
कौन देवताहैं और मुक्तिकी इच्छावाले लोग किस किस कालमे वहांकी यात्रा करतेहैं सो वर्णन
कालेकार्य्यामुमुक्षुभिः कैदेवतास्तत्रवसन्ति तेषांनामानिमेवद ॥ ४ ॥ श्रीपराशर
उवाच॥ गंगाहिमवतोर्मध्ये नदीपंचदशान्तरे तैरभुक्तिरितिख्यातो देशःपरमपा
वनः ॥ ५ ॥ कौशिकीकमलाचैव तथावेल्लमतीमता यमुनाचेतिविख्याता मू
यसीगैरिकातथा ॥६॥ जलाधिकादुग्धवती तथा व्याघ्रवतीमता । विरजामण्ड
नाचैव तथैवेच्छावतीतिच ॥ ७ ॥ लक्ष्मणावाग्वतीख्याता गण्डकीतिततःपरा।
कीजिये ॥४॥ परासरजीबोले कि हे मुनि गंगा और हिमवंत पर्व्वतके वीचमे और पन्द्रह नदीके
अन्तरमे परम पवित्र तिर्हुतदेश त्रयलोकमे प्रसिद्धहै ॥५॥ अव मैं उन उन नदियोंके नाम कहता
हूं प्रथम कौशिकी १ कमला २ वेलवती ३ यमुना ४ भूयसी ५ गैरिका ६॥६॥ जलादि ७ दुग्धव

१४.

ती ८ व्याघ्रवती ९ विरजा १० मण्डना ११ इच्छावती १२।७। लक्ष्मणादेई १३ बागवती १४ गण्डकी
अर्थात् नारायणी १५ यह सब पूर्व दिशाके क्रमसे नदियोंके नाम मैंने वर्णन कियाहै ॥ ८ ॥
सिवाय इन नदियों के अकुछी और वर्त्तिनी और जंघा ॥ जीवायिका इत्यादि कितनी

इति पूर्व्वक्रमात्प्रोक्तं नदीनामानिदर्शयन् ॥८॥ अकुछी वर्त्तनीचैव जंघाजीवा-
पिकातथा । इत्याद्यावहवःसन्ति नद्योहिमवन्तोद्भवाः ॥९॥ कौशिकीतिनवप्रोक्ताः
सीतासख्यप्रकीर्तिताः सखीरूपेणक्रीडन्ती जनकस्यगृहेसदा ॥ १० ॥ त्रियुगा
कमलाचेति गण्डकीअधिवारिणी । घुस्राचोखवर्त्ताचैव वनघोषाचलक्ष्मणा ॥ ११ ॥

नदियां हिमवान् पर्व्वतसे निकलकर इस मिथिला देश में वहती हैं ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥
कौसकी से नारायणी तक मिथिलापुरी की लम्बाई पूर्व्व पश्चिम में छियानवे कोशहैं ॥ १२ ॥
और हे कुलनन्दन श्री गंगाजीके प्रवाहसे हिमवन्त वनतक इस देशका प्रमान चौसठ कोशका

है ॥१३॥ और इस देसके मध्यमें जो मिथिला नाम पुरी अति प्रसिद्ध और अत्यन्त पुण्या है इसके पांचकारण है ॥ १४ ॥ एकतो यहकी राजा इक्ष्वाकुके पुत्र राजा निमिने यहांपर

कौशिकींतु समारभ्य गण्डकीमाधिगम्यवै योजनानिचतुर्विंशत व्यायामंपरि कीर्तितः॥१२॥ गंगाप्रवाहमारभ्य यावद्धैमवतंवनं। विस्तारःषोडशप्रोक्तो देशस्य कुलनन्दन ॥ १३ ॥ मिथिलानामनगरी तत्रास्तेलोकविश्रुता पंचभिः कारणैः पुण्या विख्याताजगतीत्रये ॥ १४ ॥ निमिर्नाममहराजा इक्ष्वाकुस्तनयोनृपः तेनतप्तंतपोघोरं तेनख्यातंतपोवनम् ॥ १५ ॥ सुवर्णखानिरुत्पन्ना पूर्वेवास्मिंस्तु

आकर अत्यन्त घोर तपकिया इसलिये इसकानाम तपोवन विख्यातहुआ ॥ १५॥ फिर उसी तपोवन में पूर्वकालमें सोनेकी खानि उत्पन्नहुईथी इसलिए उसकानाम स्वर्णकानन भी प्रसिद्ध १६,
हुआ ॥ १६॥ फिर उसी राजा निमीने वहांपर एकनगर निर्म्माणकिया और वहांका मालिक अ

पने पुत्र मिथि नामको बनाया इसलिये उसकानाम मिथिला बिख्यातहुआ ॥१७॥ एकतो यह भूमि राजा निमिका तपस्थानहै और शिवके सन्तुष्ट करनेमे समर्थहै और यहांपर धनुषरत्न

तपोवने। सुवर्णकाननं नाम तेनख्यातं पथंमतं ॥ १६ ॥ पुनस्तथैवनगरी निर्मितानिमिनामुने। तत्रजातो मिथिर्नाम तेनसामिथिलाभवत् ॥ १७ ॥ देवरात तपोभूमिः शिवतुष्टीकरं मता। यत्रप्राप्तंधनूरत्नं तेनसा शांम्भवीवभौ ॥ १८ ॥ पुनःशिरध्वरोराजा स्वर्णलांगलपद्धतौ। प्राप्तवांस्तनयांयत्र तेनसाधिकविश्रुता ॥ १९ ॥ धनुर्यज्ञंकृतंपूर्वं पुत्र्यर्थंयत्स्वयम्वरे। वित्रोटितंधनुर्यत्र रामेणाद्भुत कर्मणा ॥ २० ॥ एतद्दूर्थविशेषेण ब्रह्मरुद्रादिदेवताः। समर्चयन्तियत्नेन निब-

प्राप्तहै इसलिये इस अस्थानका नाम साम्भवीभी विख्यात हुआ ॥१८॥ और इहांपर उसीवंसके राजा शीरध्वजने सोनेके हलसे पृथवीको जोताथा और जानकीनाम कन्या पायाथा इससे यह १७.

भूमि अधिक तीनोंलोकमें विख्यातहुई ॥१९॥ उसी कन्याके लिये वह राजा शीरध्वजने धनुष जज्ञकिय था कि जिसस्वयम्बरमें आश्चर्यित कर्म्म करनेवाले श्रीरामचन्द्र जीने धनुषको तोडा

सन्तिस्तुवंतिच ॥ २१॥ मिथिलातैरभुक्तिश्च वैदेहीनैमिकाननम् । ज्ञानक्षत्रंकृपा पीठं श्वर्णलांगलपद्धतिः ॥२२॥ जानकीजन्मभूमिश्च निरपेक्षाविकल्मषा । रामा नन्दकरीविश्व भावनीनित्यमंगला ॥२३॥ इतिद्वादशनामानि यःपठेच्छृणुयादपि । सप्राप्नुयाद्रघुश्रेष्ठं भुक्तिमुक्तिंचविन्दति ॥२४॥ प्रयागादीनितीर्थानि सन्ति लोकेषुपुण्यदा । परन्तुरामप्राप्त्यर्थं तपांशक्तिर्नविद्यते ॥२५। इयंसर्वप्रकारेण

था ॥२०॥ इसलिये ब्रह्माजी और महादेवजी आदि संपूर्ण देवता मिथिला देशकी पूजाकरते हैं और यत्नपूर्वक वहां निवासकरतेहैं और सदा मिथिलाके गुणानुवाद गातेहैं ॥२१॥ मिथिला और तिरभुक्ति वैदेही और नैमिकानन और यज्ञक्षेत्र और कृपापीठ और स्वर्णलांगलपद्धति ॥

२२॥ और श्री जानकी जन्मभूमि और निरपेक्षा और विकलमखा और रामानन्दकरी और नि तामंगला ॥२३॥ इन वारहनामोंको जो मनुष्य पढै अथवा सुनै वहभी श्रीरघुनाथजी को प्राप्त होकर भुक्ति अर्थात् नानाप्रकारके भोग और चारो प्रकार की मुक्ति पाताहै ॥२४॥ इसलोकमे प्रयागादि

रामतुष्टिकरीध्रुवम् । यथा साकेतनगरी जगतःकारणंस्फुटम् ॥२६॥ तथैवानन्द सर्वस्व कारणंनगरीत्वियम् । महर्षयो महाभागास्त्यक्तासर्वपरिग्रहम् ॥२७॥ निवसन्ति प्रयत्नेन रामाराधनहेतवे । विश्वामित्रस्तुपूर्वस्यां दिशिवासमकल्प यत् ।२८। विभाण्डकोमहायोगी दक्षिणेनिवसत्यसौ । गौतमस्याश्रमंपुण्योयाम्य

जितनें तीर्थहैं वहसव पुण्यदहैं परन्तु उनसव तीर्थोंमें कोई तीर्थ ऐसा समर्थ नहीहै जो श्रीरामचन्द्रजी तक पहुचादे ।२५। यहजो मिथिलापुरी है सो श्रीरामचन्द्रजीको संतुष्ट करनेमें समर्थहै निश्चय करके जिसतरह साकेतनगर सब जगतका कारणहै ॥२६॥ उसीप्रकार आनन्दरूप जो सर्वस्वहै उसका

कारण मिथिलापुरीहै और बड़ेबड़े महर्षि और भाग्यवान् लोग जो हैं सो अपना सम्पूर्ण विषय छोड़ कर ॥२७॥ श्रीरामचन्द्रजी के अराधन के लिये निवास करतेहैं और इसके पूर्व्वदिसामें यत्न पुर्व्वक विश्वामित्र निवास करतेहैं ॥ २८ ॥ और विभाण्ड नाम महायोगी इसके दक्षिणदिसामें नि-

पश्चिमकोणके ॥२९॥ निवसत्पुटजंकृत्वा वाल्मीकिस्तत्रपश्चिमे । उत्तरेयज्ञावल्क्यस्तु निवासेभिरतः सदा ॥ ३० ॥ एवमेवप्रकारेण वसंत्यन्यमहर्षयः ॥ श्रनदीमातृकादेशः दुर्भिक्षादिविवर्जितः ॥ ३१ ॥ सदाम्रवनसम्पन्नो नदीतीरेषु संस्थितः तीरेषुभुक्तियोगेन तैरभुक्तिरितिस्मृतः ॥ ३२ ॥ हिमालयस्य चासन्ने

वासकरतेहैं और गौतमजीका महापुण्यद आश्रम इसके दक्षिण पश्चिमकोण परहै ॥२९॥ और इसके पश्चिमदिसामें पत्रकुटी बनाकर वाल्मीकजी और उत्तरदिशामे याग्यवल्क्यजी निवास करते हैं ॥ ३० ॥ इसी प्रकार और औरभी कितनें महर्षि लोग मिथिलापुरीमें निवास करतेहैं और जो

कि यह पुरी नदियों से संयुक्तहै इसलिये यहां दुर्भिक्षादि नहीं पडताहै ॥ ३१ ॥ और नानाप्रकार के धान्यादिक से युक्त और अनेक प्रकारके वन वाटिका से शोभितहै और सुन्दर स्त्री और पुरुष सम्पूर्ण दुखसेवर्जित इसमें निवास करतेहैं और यहां की भूमि सर्व्वकाल सम्पन्न रहतीहै

मुनिभिः परिरंजितः ॥ राजानश्चमहाभागा ज्ञानविज्ञानदर्शनाः ॥ ३३ ॥ जीवन्मुक्ताविदेहाश्च देहवन्तोविकल्मषाः ॥ अनुष्ठातारोयज्ञानाम् ब्राह्मणातिथिपूजकाः ॥ ३४ ॥ निमिवंश्याऋषिप्राया वसन्त्यत्रमहामुने ॥ अन्यत्किंयत्रसावित्री गौरीश्रीदेवशक्तयः ॥ ३५ ॥ निवसंतिप्रयत्नेन सर्व्वसिद्धिप्रदायकाः यत्रसाक्षा

और सब बस्ती नदियों के किनारे परहै और उन नदियोंके तटपर नाना प्रकार के भुक्ति अर्थात भोगहै इसलिये यह पुरी तैर भुक्ति नाम से विख्यातहै ॥ ३२ ॥ यह मिथिलापुरी जो हिमालय पर्वत के समीप वडे वडे महात्मा मुनिलोगोंसे शोभितहै इसमे जो राजालोग थे वह सब ज्ञान

और विज्ञानके दर्शी और भाग्यवानथे ॥ ३३ ॥ और वहलोग जीवन मुक्त और निष्पाप और विदेह योगी और अर्थात् सदा यज्ञ करनेवाले और ब्राह्मणपूजक थे ॥ ३४ ॥ यहांपर निमिवंशी राजालोग ऋषि के समान निवास करतेहैं और कहांतक कहूं की लक्ष्मी और गौरी और सावित्री

त्स्वयम्भूमौ सीतासर्वेश्वरेश्वरी ॥ ३६ ॥ आविर्भूताविशेषेण श्रेष्ठाराघववल्लभा । सर्वेदेवामहाभागा ऋषयोब्रह्मलौकिकाः ॥ ३७ ॥ अराधयंतियांयत्नात्स्वस्वेष्टार्थप्रकाम्यया यस्याःप्रसादतोन्यत्र कल्पकोटिशतैरपि ॥ ३८ ॥ नप्रीणाति

इत्यादिक देवशक्तियां ॥ ३५ ॥ यत्नपूर्वक संपूर्ण सिद्धियोंकी देनेवाली निवास करतीहै और सब इश्वरोंकी इश्वरी अर्थात् सबदेवताओं की पालन करनेवाली श्री सीताजी पर साक्षात् आप आकर ॥ ३६ । श्रीरघुनाथजीकी श्रेष्ठ प्रिया प्रगट हुईहैं और देवता और ऋषि और बडे बडे भाग्यवान्लोग वेद और लोक दोनोके जाननेवाले जोहैं सो ॥ ३७ । जिन श्री जानकीजीका आ-

राधन अपने अपने अर्थसिद्धि होनेके लिये करतेहैं और जिस प्रसादके लिये दूसरे स्थानों पर
सौ कल्प वासकरके ॥ ३८ । और कोटियोग तपस्या करके भी श्री रामचन्द्रजीको तृप्त करके
प्राप्त करै यह सामर्थ्य सिवाय मिथिलाके और किसी तीर्थको नहीहै इसलिये यह मिथिलापुरी
रघुश्रेष्ठस्तपोयोगसमाधिभिः ॥ अतस्तीर्थेषुसर्वेषु मिथिलापूज्यतेसदा ॥३९॥
मिथिलांयेनमस्यन्ति देशान्तरगताअपि तेषांभुक्तिश्चमुक्तिश्च जायतेनात्रसंश
यः ॥ ४० ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन रामस्याराधकोनरः । निवसेन्मैथिलांपुण्यां
त्यक्त्वासर्वपरिग्रहम् ॥ ४१ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये द्विती
सब तीर्थोंपर सदापूजनीयहै ॥ ३९ ॥ जोकोई देशान्तर में भी रहकर मिथिलापुरी को नमस्कार
करताहै वह निस्सन्देह भुक्ति और मुक्ति पाताहै ॥ ४० ॥ इसलिये रामाराधक लोगोंको चाहिये
कि अपनासब परिग्रह अर्थात् संसारी कार्यत्याग कर यत्नपूर्वक मिथिलापुरीमें निवासकरना आज्ञ

कारकरै ॥ ४१ ॥ ❁ ॥ इति श्री वृहद्विष्णु पुराने मिथिलामहात्म्ये चतुर्दशोऽध्यायः ॥२॥१४॥
दो०शील सरोवर देवी ओ परिकरमातीन सरणरामायण तीनमें वरणों संतप्रवीन॥३॥टी० मैत्रेयमुनि
फिर प्रश्नकरतेभये।कि हेमहाभागअवमिथिलामें जोलिङ्ग औरजहांपरजिसदेवताकमन्दिरहै उसका
योऽध्यायः ॥ २ ॥ ❁ ॥ मैत्रेयउवाच ॥ यानिलिंगानिपुण्यानि यानिदेवालयानि
च। तत्रसंतिमहाभाग तेषांनामानिमेवद ॥१॥ श्रीपरासर उवाच ॥ शिलानाथा-
भिधंलिंगंतथावैकपिलेश्वरम। सर्वसिद्धिप्रदंनृणांपूर्वद्वारेप्रतिष्ठितम्॥२॥ कूपेश्वरं
तथाग्नेये लिंगंसर्वाघनाशनम्। याम्यांसिद्धिप्रदंलिंगं कल्याणेश्वरनामकम्॥३॥
नाम मुझसे वर्णन कीजिये ॥१॥ परासरजी बोले कि हे मुनि श्रीनिमिपुरीके पूर्वद्वारपर शिलानाथ
नाम करके महादेव और कपिलेश्वरनाम लिङ्ग मनुष्योंको सिद्धि देनेवाले है।२॥ और अग्नेयकोण
पर कूपेश्वर नाम लिंग सम्पूर्ण पापके नासक और दक्षिण दिसापर कल्याणेश्वर नाम लिंग

सर्व्वसिद्धियो के देनेवालेहैं ॥३॥ और वरूण दिसा में जलेश्वर नाम लिङ्ग सब सिद्धियों के देनेवालेहैं और उत्तरदिसा में जलाधिनाथ और क्षीरेश्वर नामकर के लिङ्गहै ॥४॥ और इसानकोन पर तीनोलोक में विख्यात मिथिलेश्वर महादेवहैं और नैर्ऋत्यकोण पर ग्रामके रक्षा

सर्वसिद्धिकरंलिंगं वारुण्यांच जलेश्वरं ॥ सौम्यंजलाधिनाथाख्यं तथा क्षीरेश्वरं मतं ॥४॥ ऐशान्यांत्रिजगत्ख्यातं नम्नावैमिथिलेश्वरम् ॥ भैरवाख्योमहादेवो नैर्ऋत्यांग्रामरक्षकः ॥५॥ एवमादिनिलिंगानि नैकशः संस्थितानिच ॥ योगनिद्रामहामाया तथा नगरदेवताः ॥६॥ गिरिजाद्यामहाभागा ख्यातापरमश-

करनेवाले भैरव नाम महादेवहैं ॥५॥ वह आदिकरके पृथक् पृथक् कितने लिंगहै और नगर देवता योग निद्रामहामायाहैं ॥६॥ और गिरिजा आदि महाभगवती शक्तियांतोसब मिथिलापुरी में विदितहीहै परन्तु अन्य२ सरोवर भीपुण्यदायक वहां वर्त्तमानहैं उनके नाम सुनीये ॥७॥

वड़ापवित्र पुरन्दरसर और दसरथसर और भार्गवसर और मण्डनासर और रक्षसर और बिडालसर आर रुक्मिणीसर अर्थात् तालावहै ॥ ८ ॥ और वड़ापवित्र जनकसर और

त्कथ्यः॥ वहूनिपुण्यखातानि तेषां नामानिमेशृणु ॥ ७ ॥ पुरन्दरसरःपुण्यं ततो दाशरथंसरः ॥ भार्गवंमण्डनञ्चाच्छंविडालं रुक्मिणीसरः ॥८॥ जनकस्यसरः पुण्यं सुनेत्रायासरस्तथा ॥ वलदेवसरस्तत्र गोपालस्यसरोवरम् ॥९॥ धनुक्षेत्र मितिख्यातं पादप्रक्षालनंसरः ॥ विचित्राधूतपापाच तथाचुञ्चुवतीमता॥१०॥ पयस्वनीकुण्डवती विख्यातातैलदीर्घिका ॥ लक्ष्मणाख्यागुणवती तथा विल्व

सुनेत्रासर और वलदेवसर और गोपाल सरोवरहै ॥९॥ और धनुषक्षेत्र जिस को धनुषसरोवर कहतेहैं और पादप्रक्षालन और विचित्रा और धूतपावन्ती और चुञ्चवति नाम सरोवरहै ॥१०॥ और पयश्विनी और कुडवती और तिलदीर्घिका और लक्ष्मणा और गुनवती और विल्ववती

नाम सरोवरहै ॥११॥ और दीर्घिका महापुण्या और इष्टदा और विघ्नहारिणी और मत्स्योदरी और व्याघ्रहरा और स्थिदा और क्षत्रधारिणी नाम सरोवरहै ॥१२॥ और गोव्रजा और चित्रधारा और पूर्णव्रता और दुर्गम्या और चित्रधात्री और कष्टहरी और सुधासर हैं ॥१३॥

वर्त्तमना ॥११॥ दीर्घिकामहतीपुण्या इष्टदाविघ्नहारिणी ॥ मत्स्योदरीव्याघ्रहरी स्थितिदाक्षत्रधारिणी ॥१२॥ गोव्रजाचित्रधाराख्या ख्यातापूर्णव्रतातथा ॥ दुर्गम्याचित्रधात्रीच तथाकष्टहरीसुधा ॥१३॥ पुण्यापाकवतीख्याता तथा नगरदेविका ॥ सनकादिसरःपुण्यं तारणंमान्मथंसरः ॥ १४ ॥ मन्थानंकौशलंचक्रं

और बड़ापवित्र पाकवती और नगरदेवीका और सनकादिसर और मन्मथसर इत्यादि तारण अर्थात संसारसमुद्र से तारदेने में समर्थहैं ॥१४॥ और मंथानलसर और कौशलसर और चक्रसर और लोमससर और रामसागर और सप्तवेधसर और ध्रुवसर और गरूड़सर हैं ॥१५॥ और

केदारसर गार्भिकुण्ड और मध्यमाकुण्ड जानकीकुण्ड और कुम्भोदक और वरुनसर और सारस्वत-
सर ॥ १६ ॥ और चतुर्दीर्घिका और कष्टहर और धात्री और विषहर और मुरलीसर संपूर्ण

लोमसं रामसागरम् ॥ मत्स्यवेधाभिधंतीर्थं ध्रुवगारूडमेवच ॥ १५ ॥ केदारंवह्नि-
कुण्डञ्च मध्यमंजानकीसरः ॥ कुम्भोदकंवारुण्यञ्च तथा सारस्वतंसरः ॥ १६ ॥
चतुर्दीर्घिकमाख्यातं तथा कष्टहरंसरः ॥ धात्रीसरोविषहरं विख्यातंमुरलीसरः ॥
॥ १७ ॥ गंगासागरमित्युक्तं अङ्गरागाभिधंसरः ॥ गौतमस्यसरःपुण्यं वशिष्ठस्य
सरस्तथा ॥ १८ ॥ इत्युक्तं सरसान्नाम कूपनामानिमेशृणु ॥ पुण्यंसैरध्वजकूपं

विख्यातहैं ।१७। और गंगासागर और अंगरागसर और गौतमसर और वशिष्टसर अतिपवित्रहैं ।१८।
यहतो सरोवरों के नाम कहे अबपरम पुण्य कूपों के नाम कहतेहैं सुनो कि सिरध्व जकूप और
सतानन्द कूप अतिपवित्रहै ॥१९॥ और अक्रूरकूप और सैमन्तकूप और विद्याकूप और ज्ञानकूप

जो तीनोंलोकमें विदितहै ॥२०॥ ये सब जलाशय जिनके नाम मैंने वर्णनकिये इनसब का स्नान और पान बहुत पुण्यदायक हैं ॥२१॥ सज्जन जनका जब वड़ा पुण्य उदय होताहै तब मिथिला पुरीमें जन्म होताहै और मिथिलाके यात्रा काल जो विहितहै उसमें पण्डितलोग ॥२२॥ वड़ी

सतानन्दस्यकूपकम् ॥१९॥ अक्रूरकूपमित्युक्तं कूपंसैमन्तकन्तथा ॥ विद्याकूपं ज्ञानकूपमितिलोकेषु विश्रुतम ॥ २० ॥ जनकस्यमहर्षेस्तु कूपंपरमशोभनम् ॥ तत्र स्नात्वाच पीत्वाच पुनर्जन्मनविद्यते ॥ महाभागवतश्रेष्ठ वर्णितायेजलाशयाः ॥ तेषांस्नानेनपानेन महापुण्यं फलंलभेत् ॥२१॥ पुण्यातिरेकतोल-

भक्ति करके यात्रा करते हैं यह पुराणमें कहाहै कि मिथिलामें जाकर मुण्डन और उपवासकरै यह मिथिलामें प्रसस्त अर्थात् विहितहै ॥ २३ ॥ किसी प्रकारसे जो मिथिलामें यात्राकरै तो सर्व सिद्धिको पावै एकदिन अथवा दो दिन अथवा तीनदिन अथवा महीनेभर अथवा वर्षदिन जो

मिथिलामें वासकरै तो ॥२४॥ जन्मभर वास करनेका फल और पुण्य पाकर संसार बन्धनसे छूट जाय ऐसा पुण्यहोताहै और जिसतीर्थ में जोदेवता हैतिनका उद्देश करके वहां गमन

स्या मिथिलाजायते सताम् ॥ तस्ययात्रा महाभाग तत्तत्कालेषुसूरिभिः ॥२२॥ क्रियतेपरयाभक्त्या पुराणेषु विनिश्चितम् ॥ मुण्डनञ्चोपवासश्च मिथिलायां प्रशस्यते ॥ २३ ॥ येनकेन प्रकारेण गमनंसर्वसिद्धिदम ॥ एकाहं वा द्व्यहंवासो मासिकंवार्षिकन्तथा ॥२४॥ जन्मावधिफलंपुण्यं संसारोच्छित्तिकारकम् ॥ अटनं सर्वतीर्थेषु तत्तदुद्दिश्य दैवतम् ॥ २५ ॥ स्नानं दानं तपोहोम स्तर्पनंश्राद्ध

करै ॥२५॥ और स्नान दान जप होम तर्पण श्राद्धकरै अर्थात् पितरों को पिण्डदान देवे ब्राह्मणभोजन करावे यह सब तिर्थों की सम्पत्ति है अर्थात् जात्रा का फलहै ॥२६॥ इस मिथीलापुरीकी परिक्रमा तीन प्रकारकी है बृहती और मध्यमा और लघु और परिक्रमा करने के

महीने यहहै अगहन फाल्गुन अत वैशाख ॥ २७ ॥ और परिक्रमा करने वाले को चाहिये कि
पहिले कौशिकी नदीमे आरम्भकरै और ब्रह्मचर्य्यव्रतको धारनकरै और हविष्यान्न भोजनकरै अ० ३.
और जितेन्द्री रहै ॥ २८ ॥ और पवित्र होकर दो वस्त्र रक्खै और बहुत भक्तोंके साथ होकररहै
भेरच ॥ विप्राणाम्भोजनञ्चैव तीर्थसम्पत्तिहेतवे ॥ २६ ॥ परिक्रमापि त्रिविधा
हहैर्तामध्यमास्मघु ॥ मार्गशीर्षेथवामाघे फाल्गुने माधवेपिवा ॥२७॥ परिक्रमा
प्रकर्तव्या नदीमारभ्य कौशिकीम् ॥ ब्रह्मचर्य्यविधानेन हविष्याशीजितेन्द्रि-
यः ॥२८॥ शुद्धोद्विवासकोभूत्वा भक्तवृन्दैः समन्वितः ॥ सिंघेश्वरं शिवं नत्वा
प्रथम सिंहेश्वर महादेवको प्रणामकर रामचन्द्रजीको स्मरणकरै ॥ २९ ॥ और प्रथम सङ्कल्प
करके तब परिक्रमा जहांपर कौशिकी संगमहै स्नान करके चलै फिर गंगाजीमें विधिवत् स्नान ३२
करै ॥३०॥ फिर जबतक शालग्रामी मिलै तबतक पश्चिमओर चलै फिर शालग्रामी नाम नदी

मेंस्नान करके हिमगिरीको जाय वहांसे फिर कौशिकीके तटपर पहुंचे ॥ ३१ ॥ तब कामेश्वर नाम महादेव को प्रणामकरै फिर सिद्धेश्वर स्थानको आवे वहांपर अपना नियम समाप्तकरके

ध्यात्वादेवंरघूत्तमम् ॥२९॥ संकल्पमादितः कृत्वा परितःपरिसंक्रमेत् ॥ कौशकी संगमेस्नात्वा संक्रमेजाह्नवीतटं ॥ ३० ॥ शालग्रामीलभेद्यावत्तावद्दैपश्चिमामुखेः ॥ पुनर्हैमवतंप्राप्तं पुनस्तत्कौशिकीतटं ॥ ३१ ॥ नत्वाकामेश्वरंलिंगं पुनः सिधेश्वरं व्रजेत ॥ समाप्यानियमं तत्र पुनर्यायात्स्वमालयम ॥३२॥ मनोवाक्कायजनितं पातकञ्चोपपातकम् ॥ सर्वन्नश्यन्ति यत्नेन सर्वान्कामानवाप्नुयात् ३३

अपने घरको आवे ॥ ३२ ॥ हे मुनि उस मनुष्यको कायिक और वाचिक और मानसिक और उपपातक अर्थात् जो दैविक होजाते हैं यह सम्पूर्ण पाप नाश होजाते हैं और उसकी सब कामना पूरी होजातेहैं ॥३३॥ और उसके ऊपर पितर और देवता और सीता सहित रघुनाथ तृप्त हो

जाते हैं ॥३४॥ यहतो वृहती यात्रा ब्रह्मवादी अर्थात् ब्रह्मके जानने वालोंने कहाहै और जो लोग असमर्थहों वह पुरीमात्रकी परिक्रमा करलें ॥३५॥ कल्याणेश्वर से आरम्भ करके गिरिजा स्थानपर रहै वहांसे चलकर जलेश्वरपर रहै फिर वहांसे चलकर क्षीरेश्वरमें दर्शन करकेरहै ॥३६॥ वहांसे चलकर

प्रीयन्तेपितरस्तस्य प्रीयन्तेसर्वदेवता ॥ प्रीयन्तेराघवोरामः स्वशक्त्यासीतया-मह ॥३४॥ एवंहिवृहतीयात्रा वर्णिताब्रह्मवादिभिः ॥ तत्रासक्तोजनःकश्चित् पुरी-मात्रंपरिभ्रमेत् ॥३५॥ कल्याणेश्वरमारभ्य निवसेद्गिरिजालये॥ पुनर्जलेश्वरं गत्वा पुनःक्षीरेश्वरं व्रजेत् ॥३६॥ विश्रम्यधनुषस्थाने पुनःकल्याणपीठके ॥ एवंपञ्चा

धनुषक्षेत्रपर विश्राम करके फिर कल्याणेश्वर क्षेत्रपर जाय यह पञ्चाह्निक परिक्रमा मैंने वर्णनकियाहै ३७ और प्रलाप अर्थात् बातका बढ़ावा और बिलाप और मिथ्या भाषण और असद्वार्ता अर्थात् निन्दित वार्त्ता छोड़देवे यह उत्तम साधकहै ॥३८॥ और जो बिधि प्रथम कह आये हैं उसको सम्यक

प्रकार करके ब्रह्मचर्यव्रतरक्खै और निष्ठीपन अर्थात् थूक खखार और मलमूत्रादि बायें तरफकरै
॥३९॥ जो कोइ मूर्खतासे आचार छोड़कर अनाचार करताहै उसको पाप होताहै और वह श्री अ० १.
हरिकीप्रोक्ता मिथिलायापरिक्रमा ॥३७॥ प्रलापञ्चविलापञ्च मिथ्याभाषणमेव
च ॥ अश्रद्धार्त्तादिकंसर्वं वर्जयेत्साधकोत्तमः ॥३८॥ पूर्वोक्तविधिनासम्यग्ब्रह्मच-
र्यव्रतेस्थितः ॥ वामेनिष्ठीपनंद्वार मलमूत्राणिचोत्सृजेत् ॥३९॥ अन्यथाचेच्चरे
न्मौर्ख्यान्नरः प्राप्नोतिकिल्विषम् ॥ प्रयातिचाधमाँल्लोकान् रामद्वेषीभवेत्तुसः
॥ ४० ॥ तस्माच्छुद्धतनुःशान्तो भजन्राममनन्यधीः ॥ परिक्रान्तोलभेद्भुक्ति
३४. रामचन्द्रजीसे शत्रुताको पाकर अधम लोक अर्थात् नरकमें जाताहै ॥४०॥ इसवास्ते शुद्ध शरीर
और शान्त और अनन्य अर्थात् सर्वत्र व्यापक बुद्धिकरके श्रीरामचन्द्रजीकी सेवाकर इस प्रकार ३५.
परिक्रमा करनेसे मनुष्य लोकमें नाना प्रकारके सुख और परलोकमें परम मुक्ति पाताहै ॥ ४१ ॥

यह परिक्रमा जो मैंने वर्णन किया सो मध्यमाहै इसको करनेसे सम्पूर्ण पाप नाश होजाते हैं जो मनुष्य इस परिक्रमाके करनेमें भी असमर्थ हो तो अन्तरगृही परिक्रमा करै ॥४२॥ गंगासागर से प्रारम्भकरै स्नान यात्रा नियम करके धनुषक्षेत्रमें स्नानकरै तब पुरन्दरनाम सरोवरको जाय

लोकेमुक्ति तथापरं ॥४१॥ मध्यमा साभवेद्यात्रा सर्वाघौघनिवारिणी ॥ तत्रा
प्यशक्तश्चेत्कश्चित्परिक्रान्तोत्तरं गृहम् ॥४२॥ गङ्गासागरमारभ्य स्नानयात्रा
समारभेत् ॥ धनुःक्षेत्रं पुनःस्नात्वा पुरन्दरसरोव्रजेत् ॥४३॥ कौशलेन्द्रसरो
गत्वा गत्वावै जानकीहृदे ॥ वह्निकुण्डंसमागत्य मध्यमंकुण्डमाव्रजेत् ॥४४॥

॥४३॥ दशरथ सरोवरमें स्नानकरके तब जानकी कुण्ड अग्निकुण्ड मध्यमा कुण्डमें क्रमसे स्नान करै ॥४४॥ और रत्नसागरमें जाकर स्नानकरै तब कौण्डिल्य सरोवरको जाय वहांसे अङ्गराग नाम सरोवरको जाय जो ऐसाकरै वह उत्तम साधकहै ॥४५॥ फिर लक्ष्मणकुण्डमें स्नानकरै तब

गंगासागरमें स्नानकरै इस रीतिसे स्नान करनेसे पापी मनुष्यभी लोकमें पूज्य होजाताहै ॥४६॥ और वह मनुष्य सम्पूर्ण सिद्धियोंको प्राप्त होताहै और उसके और उसका सर्व पाप नाश हो

रत्नसागरमागत्य कौण्डिन्यस्य सरोव्रजेत् ॥ अङ्गरागाभिधन्तीर्थं गत्वावैसाधकोत्तमः ॥४५॥ पुनर्लक्ष्मण कुण्डेतु गत्वागङ्गासरःपुनः स्नानादिकं विधायेत्थं लोकपूज्योभवेन्नरः ॥ ४६ ॥ सर्वासिद्धिमवाप्नोति जनःप्रक्षीणकल्मषः ॥ तत्रस्थानां महाभाग प्रायश्चित्तमिदम्परम् ॥४७॥ तत्राप्यशक्तश्चेत्कश्चि द्विधातुंधर्मसाधनम् ॥ सहायम्वैयथाशक्तिः कूर्य्याद्वामार्गशोधनम् ॥४८॥ परिक्रमावतांपुण्यं

हमहाभाग मिथिलापुरी की जात्रा सम्पूर्णपापोंका परम प्रायाचित्तहै अर्थात् विशेष शोधनैहै ॥४७॥ और जोमनुष्य इसपारिक्रमा को करनेमें भी असमर्थहो वहधर्मसालावनवादेवै और जोयभीनहोसके तो परिक्रमाकरनेवालेको राहखरचदेवै अथवा रास्ता दुरुस्तकरादेवै ॥४८॥

जोमनुष्य ऐसाकरताहै उसकोभी परिक्रमा करनेवाले के समान पुन्यहोताहै इसमें संदे-
हनहींहै ॥४९॥ ❀ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पञ्चदशमोऽध्यायः ॥१५॥३॥ अ० ४.

सोप्यवाप्नोत्यसंशयम् ॥ माहात्म्य श्रवणञ्चैव मुच्यते कोटिकिल्बिषैः ॥४९॥
इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे पराशरमैत्रेय सम्वादे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

पराशरउवाच ॥ कोशलेन्द्रसरःस्नायात् मार्गमासेविशेषतः । मार्गेवैमंडनं
तीर्थपादप्रक्षालनंसरः ॥१॥ रामलक्ष्मणसीतायाः सरांसिफलदानिवै ॥ पौषेऋ-

दो० ॥ मासमासतिथि सरितसर भाष्यो तेहिस्नान ॥ रामायण लहि पुन्यतें चारिम अध्या-
जान ॥४॥ फिर पराशरजी बोले कि हेमुनि ! दसरथसरोवर और मण्डनसरोवर और पगधोवन
सरोवर का स्नान अगहन महीनेमें विशेष फलदायक है ॥ १ ॥ और फल का देनेवाला
राम सरोवर और लक्ष्मण सरोवर और सीतासरोवर काभी स्नान अगहन महीनेमें करना

चाहिये और पूष महीनेमें ऋक्षसरोवर का स्नानकरे और पूषकी पूर्णिमासी को इसका स्नान विशेष फलदहै ॥२॥ और माघ शुक्ल पञ्चमी शोभन नाम योगमें पुरन्दर सरमें स्नानकरै और फालगुनपूर्णिमाको अग्नि कुण्डमे स्नानकरनेसे महाफल होताहै ॥ ३ ॥ और चैत्रशुक्ल नवमीको

क्षसरःस्नायात् पौर्णिमायांविशेषतः ॥२॥ पुरंदरसरोमाघे पञ्चम्यांशोभने शुभे ॥ फाल्गुन्यांपौर्णिमायांच वन्हिकुण्डं महत्फलम् ॥ ३ ॥ चैत्रेशुक्लनवम्यांतु स्नायाद्रैरत्नसागरे ॥ धौतपापातुवैशाखे तृतीयायांमहाफलम् ॥ ४ ॥ जेष्टशुक्ल दशम्यांतु गंगातीर्थेविशिष्यते ॥ आषाढस्यपूर्णिमांतु दीर्घिकायांविशेष-

रत्नसागरमें स्नानकरै और वैशाख शुक्ल तृतीयाको धुतपापामें स्नानकरै तो महाफल प्राप्तहो ४ और जेठशुक्ल दशमीको गंगासागर में स्नानकरै और आषाढ़की पूर्णिमासी को दीर्घिकामें विशेष करके स्नान करनाचाहिये ॥ ५ ॥ और श्रावणकी अमावास्याको बलिराम सरोवरमें और भादो

शुक्ल पञ्चमीको भार्गवसरोवरमें स्नान करने का महाफलहै ॥६॥ आश्विनमासमें अमृतकूण्डमे
और कार्त्तिक मासमें पयस्विनी सरोवरमें स्नान करनेसे सर्वपाप नाश होजाते हैं ॥७॥ इस प्रकार अ० ४.
वर्ष दिनतक पर्व्व २ में जो ऊपर कह आये हैं स्नान करनेसे महा फल होताहै और विशेष करके
तः ॥५॥ श्रावणेदलरामस्य तीर्थपुण्यमथांतिमे भाद्रेमहर्षिपञ्चम्यां स्नातव्यं
भार्गवंसरः ॥ ६ ॥ आश्विनेमृतकुण्डस्य स्नानंसर्वाघनाशनम् कार्त्तिकेतु
चतुर्दस्यां स्नातव्यावैतपास्विनी ॥७॥ एवंसाम्वत्सरीयात्रा कालेकालेमहत्फलम्
विशेषेणमहाभाग नवम्यांरामजन्मनि ॥८॥ जानकीजन्मवारेवा विवाहेपि
तथैवच ॥ सर्व्वेषांस्नानदानादि महापुण्यफलप्रदं ॥ ९ ॥ कौशिकीमाघवेस्नाया
रामनवमीको औरभी अधिक फलहै ॥८॥ और श्रीजानकीजीकेजन्मदिन जो वैशाखशुक्ल नवमी ३९.
को होताहै उसदिन सब सरोवरोंका स्नान और दान महा पुण्य और फल का देनेवालाहै ॥९॥ और

वैशाखमें कौशिकी और माघमें कमला और अगहनमें दुग्धवती और बेलवती और कार्त्तिकमें जमुना स्नान करना चाहिए ॥१०॥ और आश्विनमें भूयसी और गैरिका और भादोमें जलाधिक और जेठमें व्याघ्रवतीमें स्नान करना विशेष फलदायकहै ॥११॥ श्रावणमें विरजा और फाल्गुनमें

न्माघेचैवकमलान्तथा ॥ दुग्धाविल्ववतीमार्गे कार्त्तिके यमुनान्तथा ॥१०॥ भूयसी गैरिकाचैव माश्विनेफलदामता ॥ भाद्रेजलाधिकापुण्या जेष्ठेव्याघ्रमती तथा ॥११॥ विरजाश्रावणेपुण्या मण्डनाफाल्गुनेमता ॥ इक्षुमतीतथापौषे चैत्रे चैलक्ष्मणाशुभा ॥१२॥ वाग्मतीफाल्गुनेशस्ता गण्डकीकार्त्तिकेमता ॥ मलमासे विशेषेण गैरिकाफलदायिनी ॥ १३ ॥ चन्द्रसूर्य्योपरागेषु सर्वानद्यशुभावहाः ॥

मण्डना और पूसमें इक्षावती और चैत्रमें लक्ष्मणामें स्नान करनेमे वड़ा पुण्य होताहै ॥ १२ ॥ फाल्गुनमें वाग्वती का और कार्त्तिकमें गण्डकी का और मलमासमें गैरिका का स्नान विशेष

फल देनेवालाहै ॥ १३ ॥ चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहणमें विशेषकरके इन नदियोंमें स्नान करनेसे पुण्य होताहै चाहे कोइ कामनायुक्त स्नान करै चाहे निष्काम ॥ १४ ॥ सरोवर और पुष्करणी अगहन महीनेमें विशेष पुण्या होकर फलदायकहै इसीप्रकार चैत्रशुक्ल नवमी और वैशाखशुक्ल

निष्कामानांविशेषेण नियमोनात्रविद्यते ॥१४॥ सरांसिपुष्करिण्यश्च मार्गशीर्षे विशेषतः ॥ चैत्रेवास्नानतःपुण्या नवम्यांमाधवेतथा ॥१५॥ विशेषेणमहाभाग स्नातव्यापञ्चपर्वसु ॥ पुण्ययोगेषुसर्वेषु नात्रकार्य्याविचारणा ॥ १६ ॥ नवरात्रे द्वयदेव्यः पूजनीयाःप्रयत्नतः ॥ सर्वैशिवाधिवासाश्च फाल्गुनेशाम्भवेतिथौ १७

नवमीमेंभी स्नान उन नदियोंका फलदायक होताहै ॥१५॥ हे महाभाग ! पांचो पर्व्व अर्थात् पूर्णिमा १ अमावास्या २ षष्ठी ३ अष्टमी ४ चतुर्दशी ५ और सब पुण्य योगमेंभी विना विचार स्नान करना चाहिये ॥ १६॥ और दोनों नवरात्रीमें यत्नपूर्वक देवीजीकी पूजा और फाल्गुन

कृष्न चतुर्दशीमें शिवजीकी पूजा करना चाहिये ॥ १७ ॥ इस प्रकार यह यात्रा मिथिलादेश वासी लोगोंके वास्ते मैंने वर्णन कियाहै और जोलोग दूरदेशमें बसते हैं उनकेवास्ते कालका नियम नहींहै ॥ १८ ॥ मिथिलामें वास करके मनुष्य जीवनमुक्त होजाताहै और शरीर त्याग

एवंयात्राक्रमःप्रोक्तो मिथिलावासिनांमुने ॥ न कालनियमस्तेषां येप्राप्ताद्दूरदेशतः ॥१८॥ मिथिलावाससमासाद्य जीवन्मुक्तोभवेन्नरः ॥ देहान्तेराघवंप्राप्य तद्भक्तैःसहमोदते ॥१९॥ स्नानंदानंतपोहोमो देवतार्चनवन्दनम् ॥ इष्टपूजादिकंसर्वं मिथिलायांमहाफलम् ॥२०॥ विशेषेणप्रतिष्ठायाः फलंवक्तुंनशक्यते ॥ निर्माय

करनेपर श्रीरामचन्द्रजी के पास पहुचकर उनके भक्तोंके साथ आनन्द करताहै ॥१९॥ मिथिलामें स्नान और दान और जप और होम और देवताओंका पूजन और वंदन और इष्टापूर्त्ति अर्थात् मूर्त्ति प्रतिष्ठा और जलाशय करण अर्थात् कूप सरोवर इत्यादि बनवाने का अत्यन्त फल

होताहै ॥२०॥ प्रतिष्ठांका फल मैं विशेष पूर्व्वक नहीं कहसक्ताहूं जो कोइ मिथिलामे मंदिर वनवा
कर उसमें भगवानकी प्रतिमा स्थापन करताहै ॥२१॥ वह सम्पूर्ण सञ्चित पाप अर्थात् कितने
जन्मके इकट्ठाहुआ पाप और प्रारब्ध कृत पापोंसे छूट जीवनमुक्त होकर भगवानमें मिलजाता
सौधशिखरं यत्नेनस्थाप्यतेहरिः ॥ २१ ॥ समुक्तःसञ्चितैःपापैः प्रारब्धैश्च विशे
षतः ॥ जीवन्मुक्तस्मोभूत्वा हरेःसायुज्यमाप्नुयात् ॥२२॥ योयोयांयांतनुंभक्त
स्तत्तदुद्दिश्यदैवतम् ॥ संस्थाप्यप्रतिमांपुण्यां तेषांलोकान्सगच्छति ॥२३॥ सर्व
साधनजातेभ्यःप्रतिष्ठातुमहाफला॥ मिथिलायांविशेषेण धर्मसारमिदंमतम् २४
है ॥ २२ ॥ जो मनुष्य जिस देवताका उपासना रखताहै वह उसी देवताका उद्देश्यकर स्थापना
करनेसे उसी देवलोकमें प्राप्त होताहै ॥२३॥ सम्पूर्ण साधनसे देवमूर्त्तीका स्थापन करना अधिक
फलदायक है और मिथिलामें स्थापना करना विशेष करके धर्म्मोंका सार जानना चाहिये ॥२४॥

इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणेमिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे चतुर्थोऽध्यायः ४

इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे षोडशोऽध्याय ॥ १६ ॥ ४ ॥

मैत्रेयउवाच ॥ यएषमिथिलामध्ये पिनाकःपरिदृश्यते ॥ तस्यागमःप्रभावो वा यद्यज्ज्ञानासिसंशम ॥१॥ श्रीपराशरउवाच ॥ सम्यक्पृष्टंत्वयाब्रह्मन् यदेतच्छाम्भवंधनुः ॥ तस्यप्रभावोधर्मज्ञैर्विज्ञातोब्रह्मलौकिकैः ॥ २ ॥ पुरासुराणांश्रो-

दोहा । रामेश्वरमम धनुषकहि दरशनमे अघ जाइ । रामायण त्रिपुरावधन पांचमअध्यागाइ ॥

फिर मैत्रेयजी ने पूंछा कि हे मुनि ! मिथिलामें जो धनुष देखतेहैं उसका आगमन और प्रभाव जो जो आप जानतेहैं वह मुझसे वर्णन कीजिये ॥१॥ पराशरजी कहते हैं कि हे मुनि ! यह जो श्रीमहादेवजीका धनुष मिथिलापुरीमें है उसका वृत्तान्त जो तुमने पूछा सो प्रश्न ठीक है इस धनुष का प्रभाव धर्म्मातमा लोग और वेदके जाननेवाले सब जानते हैं ॥२॥ पूर्वकालमे

देवताओंका पराजय करनेके वास्ते मय नाम दानवने तीन पुरी निर्माण किया और उस पुरीमें राक्षसोंहीं को वसाया उन सम्पूर्ण राक्षसों से सब देवता लोग जब पराजय होगए ॥ ३ ॥ तब उस त्रिपुर राक्षसों के नास करने के वास्ते ब्रह्माजीकी आज्ञासे विश्वकर्मा ने इस धनुष रत्नको नि-

भार्थं त्रिपुरम्मयनिर्मितम् ॥ यत्रस्थैर्दानवैर्देवा देवलोकपराजिताः ॥३॥ तदा ब्रह्माज्ञयादेवैर्विश्वकर्माप्रचोदितः ॥ सुनिर्मायधनूरत्नं शङ्करायन्यवेदयत् ॥४॥ तेनैवधनुषारुद्रो ददाहत्रिपुरंरुषा ॥ पुनःप्रसन्नोभगवान् देवरातस्यभक्तितः ॥५॥ न्यासभूतमिदन्तत्र स्थापितंहिपरंधनुः ॥ तदाप्रभृतितद्वंश्यैः पूजितम्परमं

र्म्माण करके महादेवजीको दिया ॥ ४ ॥ उसी धनुषसे महादेवजीने उन तीनों पुरको भस्मकिया फिर देवरात अर्थात् जनकजीकी सेवापर प्रसन्न होकर भगवान् महादेवजीने ॥५॥ उस धनुषको अपना दूसरा शरीर जानकर मिथिलापुरीमें स्थापन करदिया उस दिनसे सब जनकवंशी उस

धनुषको महादेवजी का शरीर जानकर पूजा करनेलगे ॥६॥ हे मुनि इस पराक्रम से उस धनुष
को जिसे विश्वकर्माने बनायाथा जनकजीने प्राप्त किया और उसका पूजन करते थे वह धनुष
सर्व पापोंके नाश करनेमें समर्थ हैं ॥७॥ फिर जब महाराज शिरध्वज अर्थात् जनकजीके जग

धनुः ॥६॥ परम्परात्क्रमात्प्राप्तं जनकस्यमहात्मनः ॥ तेनसम्पूजितम्ब्रह्मन्
धनुःसर्वाघनाशनम् ॥७॥ तस्यात्मजासमुत्पन्ना जानकीलोकविश्रुता॥ तस्याः
स्वयम्वरेशुल्कं धनुरंतत्सुनिश्चितम् ॥८॥ कैश्चिन्नचालितन्तच्च स्थानाद्गुरुतरं
धनुः ॥ महादेवप्रभावाच्च स्वशक्त्यागौरवेणच ॥९॥ कौशिकेनसहायातो रामो

विदित श्रीजानकीजी नाम पुत्री उत्पन्न हुई तब उनके स्वयम्वर में जनकजीने यही प्रण किया
कि जोकोइ इस धनुष को तोड़ेगा उसीको मैं यह कन्या दूंगा ॥८॥ परन्तु कोइ इस धनुषको
इस स्थानसे टारभी न सका क्योंकि वह धनुष महादेवजी के प्रभावसे और अपनी शक्ति कर

के अत्यन्त भारी था ॥९॥ तहांपर विश्वामित्रजी के साथ श्रीदशरथजी के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी आए ॥१०॥ और उन्होंने उस महा भयानक धनुषको उठाया और खींचकर बीचसे तोड़डाला जिसका शब्द तीनों लोकमें फैलगया ॥११॥ यह जो महादेवजी का धनुष दधीचिके अस्थिसे

दशरथात्मजः ॥ दिदृच्छयापिनाकस्य यज्ञवाटमुपागमत् ॥१०॥ तेनचोत्थापितं संज्यं विकृष्यगुरुसारवत् ॥ मध्येभग्नंधनुर्भीम मितिलोकेषुविश्रुतम् ॥११॥ तदेतच्छाम्भवंदिव्यं विश्वकर्माविनिर्मितम् ॥ दधिच्यस्थिभवञ्चापं विख्यातं भुवनत्रये ॥१२॥ श्रीरामस्यकरस्पृष्टं धनुःखण्डस्यदर्शनम् ॥ सर्वाघौघहरंपुसां

उत्पन्न तीनों लोकमें विख्यात विश्वकर्मा के हाथका बनायाहुआ अत्यन्त दिव्य और ॥१२॥ श्रीरामचन्द्रजी के हाथका छूआहुआहै इस धनुष खण्डका दरशन सब पापोंके नाश करने में समर्थ हैं ॥१३॥ जिस किसीको महापाप नाश करने की इच्छाहो वह रामेश्वर लिंग का दर्शन

करै नहींतो धनुषखण्ड का दरसन करै ॥१४॥ और हेमहाभाग जो मनुष्य कलियुग में रामे श्वरलिङ्ग और धनुषका दर्शनकरतेहै उनको सवदेवता लोग प्रणाम करतेहै और वह जीवन

सर्वकल्मषमार्जनं ॥ १३ ॥ यथारामेश्वरंलिगं धनुषोदर्शनन्तथा ॥ अतिपातक जातानां शोधनंद्वितयम्मतम् ॥१४॥ कलौयेनमहाभाग कृतायात्रामहामुने ॥ अमरास्तन्नमस्यन्ति जीवन्मुक्तमोहिसः ॥१५॥ परलोकभयाद्भीतास्तन्नमस्य न्ति येनराः ॥ तेपिपापैर्विमुच्यन्ते प्रयान्तिशुभगांगतिम् ॥१६॥ मनुष्यदेहमा- साद्य येनरामेश्वरङ्गताः ॥ तेपापिष्ठतमालोके देवताक्लेशभाजनम् ॥१७॥ आल-

मुक्त होजातेहै ॥१५॥ और जोमनुष्य महा पापोंके कारण परलोक से डरकर इन दोनोको प्रणाम करते है वहभी सव पापोंसे छूटकर शुभगतिको प्राप्तहोतेहै ॥१६॥ जिस किसीने मनुष्य का शरीर पाकर रामेश्वरमहादेव का दर्शन नाकिया वह मनुष्य अत्यन्त पापी है और देवनि-

न्दककी गतिपाताहै १७ हेमुनि जिसकी मोने आलस्य ॥ करके अथवा दूरदेश समझकर सेतुवन्ध रामेश्वर का दरशन नकिया १८ उसके इस महापापका प्रायश्चित्त यह है॥ कि मिथिलामें जाकर धनुष का दर्शन करै इससे उसके सव पाप नास हो जायगे १९ जो कि धनुष के दर्शनमात्रसे संपूर्णपाप नाश

स्यादूरदेशस्था येनयान्तिमहामुने ॥ दृष्टं वैवालुकंलिङ्गं सेतुवन्धासिरःस्थितम् ॥ ॥१८॥ प्रायश्चित्तम्भवेत्तेषां घोरपापविशोधनम् ॥ मिथिलायांसमागम्य यद्दृष्टं शाम्भवन्धनुः ॥ १९ ॥ पापापनोदनन्तेषां जायतेतस्यदर्शनात् ॥ तस्मात्सर्वं प्रयत्नेन धनुर्यात्रांसमारभेत् ॥ २० ॥ येनदृष्टंधनुःखण्डं सर्वपापापनोदनम् ॥ श्रीरामस्यकरस्पृष्टं साक्षात्भुवनपावनम् ॥ २१ ॥ प्रत्यक्षंज्ञापकंश्रेष्ठं धनुर्वीर्य्यं

होजातेहैं इसलिये धनुष यात्रा अवस्य करनाचाहिये॥२०॥जोमनुष धनुषखंड का दर्शनकरते हैं वह तीनो लोक के पवित्र करने में समर्थ है ॥२१॥ प्रत्यक्ष उत्तम उपदेशकारक और संपूर्णऐश्वर्य्य

प्रकाशक यह धनुषहै स्टष्टिपर्य्यंत इस पृथ्वीमण्डल में अचलहोकर रहैगा ॥२२॥ महावैष्णवसं-
स्कार और वड़े वड़े यज्ञादिक वहुतेरे पुण्यकरनेसे इस धनुषका दर्शन मिलताहै ॥२३॥ यह

प्रकाशनम् ॥ असृष्टिनिश्चलंदिव्यं स्थास्यत्यवनिमण्डले ॥२२॥ महावैष्णवसं-
स्कारै र्महा यज्ञव्रतादिभिः॥ महापुण्यातिरेकैश्च धनुषोदर्शनम्भवेत ॥२३॥ एतद्ब्र
ह्मस्यंसर्वस्वं सर्वब्रह्मर्षिसंमतम् ॥ पुराणज्ञैश्च निर्णीतं यद्रामाभिमुखोभवेत् ॥२४॥
इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे पंचमोऽध्यायः५

मैत्रेय उवाच ॥ मिथिला निमिवंश्यानां राजधानीति मे श्रुतं ॥ सा कथं पुण्य-

रहस्य सव ब्रह्मर्षिलोगों की सम्मतिहै और पौराणिकों से निर्णीतहै इसस श्रीरामचन्द्रजी
अवश्य अभिमुख अर्थात् सानुकूलहोतेहैं ॥२४॥ ❀ इति श्री बृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामहात्मये
सप्तदशोध्यायः ॥१७॥५॥

दोहा। निमिराजातपतीर्थअरु जनकवंशकी रीति षटअध्यायनारदमिलन रामायणकहिंप्रीति ।६।
फिर मैत्रेयजीने पूछा कि हे मुनि मिथिलाके निमिवंशियोंकी राजधानी आपने वर्णन कियाहै फिर
इसको पुण्य तीर्थमें भी गिनाहै इसका कारण बतलाइये ॥ १ ॥ पराशरजी बोले हे मुनि जहां २
तीर्थेषु गण्यते तद्वदाधुना ॥१॥ पराशर उवाच ॥ हरेराराधनं लोके यत्रयत्रजनैः
कृतम् ॥ तदेवतीर्थंविज्ञेयं दर्शनात्पुण्यदंनृणाम् ॥२॥ इयन्तुमिथिलापुण्या स्वयं
रामस्वरूपिणी ॥ न सापेक्षान्यसंस्कारैर्न सापेक्षा सुरालयैः ॥ ३ ॥ परन्तुमुनि
भिःपूर्वं कांचनारण्यवासिभिः ॥ हरेराराधनंपुण्यं बहुधातत्रवैकृतम् ॥ ४ ॥ वैष्ण-
भक्तलोगोंने हरि का आराधन कियाहै तहां२ की भूमि मनुष्योंको दर्शनसे पुण्य देतीहै इस वास्ते
उस स्थानको तीर्थ कहाहै ॥ २ ॥ और यह मिथिला तो आपही पुण्या और श्रीराम स्वरूपिणी
हैं इसको किसी दूसरे संस्कार या किसी देवालय की कुछ इच्छा नहीं ॥ ३ ॥ परन्तु पूर्वकालमें

काञ्चन आरण्य के वासी मुनिलोगोंने यहांपर भगवानका आराधन बहुत तरहसे कियाथा ॥४॥
वैवस्वत मनुके वंशमें इक्ष्वाकु नाम राजाके पुत्र निमिने गौतमजीको पुरोहित करके यहां यज्ञ
किया ॥५॥ तब वशिष्ठजीने निमिको और निमिन वशिष्ठजीको शाप दिया जिससे दोनों मृतक

स्वतमनोर्वंश इक्ष्वाकोस्तनयोनृपः॥ गौतमंयाज्ञयवल्क्यंच यज्ञमंत्रैरथाकरोत् ।५।
वशिष्ठेनतुसंशप्तो वशिष्ठञ्चापि सोऽशपत् ॥ विदेहत्वंद्वयोरासीत्पुराणेषु कथा
स्फुटा ॥ ६ ॥ पुनर्निमेश्शरीरस्य मन्थनंमुनिभिःकृतम् ॥ मिथिस्तत्रसमुत्पन्नो-
मिथिलातेनसाऽभवत् ॥७॥ तदाप्रभृतितद्वंश्यैः राजधानीनिरूपिता॥ राजानस्तु

होगये यह कथा पुराणमें कथितहै ॥६॥ फिर मुनियोंने निमि के उस मृतक शरीरको मथनकिया
तो मिथिनाम राजा उत्पन्न हुआ इसीसे इस देशका नाम मिथिला प्रसिद्धहुआ ॥७॥ उस दिनसे
मिथि के वंशमें राजधानी चलीआती है इसमें बड़े२ भाग्यवान् पुण्यात्मा राजालोग हुए और

गृहस्थ कर्ममें लीन होतेभये ॥ ८ ॥ परन्तु सबकोई तपस्या और योगमें मुनियों के समान हुए और संसारी विषयोंसे निर्लेप रहतेथे जैसे कमलपत्र जलमें रहकर उससे निर्लेप रहताहै ॥ ९ ॥ उसी वंशमें ज्ञान विज्ञान का सार जानने वाले और भजनानन्द के लक्षण संयुक्त राजाओंमें रत्न

महाभाग दर्शनगृहमेधिनः ॥ ८ ॥ परन्तुमुनिभिस्तुल्यास्तपोयोगसमाधिभिः ॥ निर्लेपामायिकैर्भावैः पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥९॥ ज्ञानविज्ञानसारज्ञाः भजनानंद लक्षणाः ॥ विशेषतोराजरत्नं जनकोनामनामतः ॥ १० ॥ जानकीयत्रचोत्पन्ना निमिवंशप्रकाशिनी ॥ यस्याभक्तिप्रभावेण रामोदाशरथिःप्रभुः ॥११॥ जामातृ-

राजा शीरध्वज जनकहुए ॥ १० ॥ निमिके वंशको प्रकाश करनेवाली जानकीजी जहां प्रगटहुईं और जिस राजा जनक के भक्तिके प्रभावसे दशरथात्मज श्रीरामचन्द्रजी ॥११॥ लोकोत्तर अर्थात् स्वर्गादि लोकसे ऊपर फलको देनेवाले जामात् अर्थात् दामाद हुए उन्हीं राजा जनक की यह

नगरी अत्यन्त पुण्य है ॥१२॥ और श्रीजानकीजीके यहांपर जन्म होनेसे यह मिथिला पुरी विशेष तीनो लोक में प्रसिद्धहुई ॥१३॥ मैत्रेयजीने फिरपूछा किहे मुनि जनकजीके हलकेशि

त्त्वं समापन्नो लोकोत्तरफलप्रदः ॥ तस्ययंनगरीपुण्या तत्र जातामहाफला ॥ तस्यांनिवासिनांपुण्यं मयावक्तुंनशक्यते ॥१२॥ विख्याताजानकीजन्मा द्विशेषेणाभवन्मुने ॥ मैत्रेय उवाच ॥ कथं सीतासमुत्पन्ना तस्यलाङ्गलपद्धतौ ॥१३॥ कस्यपुण्यातिरेकेण तदीयातनयाभवत् ॥ पराशर उवाच ॥ जनकानांकुलेब्रह्मन् महर्षिसमतेजसां ॥ १४ ॥ मर्यादयासमापन्नं सर्वलोकेषुविश्रुतम् ॥ ज्ञान

र चलाने मे जानकीजी किसप्रकार प्रगटहुई और कौनपुण्य जनकजीमहाराज का ऐसा थाकी जिसकरके जानकीजी उनकी कन्याहुई ॥१४॥ पराशरजी वोले हे ब्रह्मन् इसमिथिला-पुरी में जितने राजा हुये वहसव ऋषियों के समान तेजस्वी और वड़े मर्य्यादावान् तीनों लोक

में विख्यात थे मानो इनका कुल ऐसाही था ॥१५॥ उसीकुल में ज्ञान और विज्ञानसे सम्पन्न और आधि व्याधि से वर्जित और विशेष करके तीनोंलोक में विख्यात प्रतापी राजा ह्रस्व

विज्ञानसंपन्नं आधिव्याधिविवर्जितम् ॥१५॥ ह्रस्वरोमा विशेषेण लोकविख्यात पौरुषम् ॥ तस्यपुत्रद्वयंचासी ज्ज्येष्ठःशीरध्वजोमतः ॥१६॥ तद्गुणैःसमतांजातो द्वितीयस्तुकुशध्वजः ॥ सर्वेतद्वंशजाभूपाः ख्याताजनकनामतः ॥१७॥ तेनासौ सर्वलोकेषु विख्यातोजनकाभिधः ॥ पितर्य्युपरते राज्ये स्थापितोजनकाधिपः ॥१८॥ ज्येष्ठःशीरध्वजोराजा गुणानामाकरोमहान् ॥ धर्मेणपालयद्राज्यम-

लोमा नाम जनक हुए ॥१६॥ उन्हीराजा हरस्वलोमा के दो पुत्रहुए वड़े का नाम शीरध्वज और छोटे का नाम कुशध्वज ॥१७॥ और उसवंश में जो लोग राजा होते थे वह सव जनक कहलाते थे इसलिये जनकही नाम तीनों लोक जानताहै ॥१८॥ अपने पिता के परलोक

होजानेपर वही ज्येष्ठ शीरध्वज राज्यगदी पर वैठ कर और जनक पदवी पाकर संपूर्ण गुणों
के खान हुए ॥१९॥ वह राजा शीरध्वज जनक धर्म्म पूर्व्वक प्रजापालन करके और अधर्म्म
को छोड़ कर विशेष मिथिलापुरी का राज्य करतेभये उनके धर्म्मके प्रभाव से निहतवैरी

धर्मान्परिवर्जयन् ॥ १९ ॥ सशासमिथिलायां वै राज्यंनिहतकण्टकम ॥ स्वयं
प्रादुरभूद्धर्मात्द्रत्न स्वर्णाकरानिगिरैः ॥२०॥ धनधान्यवतीस्फीता भूमिः कामदुघा
वभौ ईजेबहुविधैर्यज्ञै दैवतातुष्टिकारकैः ॥२१॥ ब्राह्मणांस्तोषयामास दानसन्मा
न भक्तिनः ॥ तस्मिन्प्रशासतिधर्मेण राज्यंनिहतकण्टकम् ॥२२॥ अनावृष्टिःसमा

अकण्टक राजरहा ॥२०॥ उनके धर्म्म के प्रभावसे रत्न और सुवर्णकी खान पर्व्वतों में वहुत
उत्पन्नहुई और अतिधनधान्य से पृथ्वी कामधेनु के समान होगई ॥२१॥ और राजा शीरध्वज-
ने देवताओं के सतुष्ट करने केवास्ते यज्ञ और पूजन वहुतकिया और ब्राह्मणों कोभी भक्ति

युक्त दान मानसे संतुष्ट किया ॥२२॥ इसप्रकार निःकण्टक राजकरतेहुए कितनेदिनोंके बाद एकसमय अवर्षण होगया जिसकेकारण प्रजालोग बहुत पीड़ितहुए ॥२३॥ तब राजा शीरध्वज ने ऋषियोंकी आज्ञा पाकर वैशाख सुदिनवमि तिथिको यज्ञकिया और सोनेका हल लेकर

पन्ना तयासंपीडिताःप्रजाः ॥ महर्षिभिःसमादिष्टो मार्गेणमिथिलाधिपः ॥२३॥ माधवेधवलेपक्षे नवम्यांयज्ञमारभत् ॥ स्वर्णलांगलमादाय विचकर्षमहीतलं ॥२४॥ तत्रपुत्रीसमुत्पन्ना तां तदागृहमानयत्। जानकी तेन वैनाम्ना विख्याता भुवनत्रये ॥२५॥ कदाचिन्नारदोयोगी तत्रागत्य महामुने ॥ सीतेतिनाम्नाचा-

जब पृथ्वी को जोतने लगे ॥२४॥ तो उसी स्थानमें उसी सीर वर से एक कन्या उत्पन हुई उसको अपनी कन्या समझ कर अपने घरलेआये जोकि राजा जनक उस कन्या को लेआए म वास्ते वह कन्या जानकी नाम से तीनों लोक मे विख्यातहुई ॥२५॥ फिर कुछ काल

वितनेपर नारद योगी महामुनि वहां आए और श्रीजानकी का सीताजी नाम रखकर फिर राजा जनकजी को एकान्त में लेजाकर आगे की होनेवाली सबबात कहनेलगे ॥२६॥ कि हे महाराज ! तुह्मारे कुल के प्रकाश करनेवाली यह कन्या है । सीता नाम कर के

भाष्य रहस्यतदुपादिशत् ॥ २६ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ इयंपुत्रीमहाभागा कुल· द्योतकरीतव ॥ सीतेतिनाम्नीविख्याता भविष्यतिजगत्त्रये ॥२७॥ अस्याभर्त्ता प्रभुस्साक्षात्परमात्मा भविष्यति ॥ एतदर्थंहिभवता कर्त्तव्यंयत्नमुत्तमम् ॥२८॥ स्वयम्वरप्रकर्त्तव्यं धनुरुत्थापनंपणम् ॥ नान्यतश्चालितञ्चापं परमात्पुरुषा-

यह कन्या तीनो लोक में विख्यात होगी ॥ २७ ॥ और इस कन्याके स्वामी अर्थात् पति साक्षात् परमात्मापुरुष होगें इसवास्ते आपको उससमय उत्तम यत्न करना होगा ॥२८॥ इसके स्वयम्बर में धनुष उठानेका प्रण करना क्योंकि शिवाय परमेश्वर के और कोइ

इसधनुष को टारभी न सकैगा ॥२९॥ हे राजन् ! उनसे सम्बन्ध होनेसे तुह्मारी संपूर्ण कामना पूरी होगी। और यहकन्या तुम्हारी अर्थ धर्म काममोक्ष चारो पदार्थ को देनेवाली है ॥ ३० ॥ जो मनुष्य किसी विपत्तिमें पडकर इनकी शरनमें आताहै उसकी सब विपत्तियें नाश

हृते ॥२९॥ तस्यसम्बन्धतोराजन्सर्वान्कामानवाप्स्यसि ॥ इयंत्वत्तनयाराजन् चतुर्वर्गप्रदायिनी ॥ ३० ॥ आपन्नानांप्रपन्नानां सर्वापद्विनिवारिणी ॥ धन्योसि कृतकृत्योसि लोकवन्द्योसि भूपते ॥३१॥ यत्त्वयातनयालब्धा ह्रीश्रीकीर्त्यादि वन्दिता ॥ पराशर उवाच ॥ इत्युपादिश्यराजेन्द्रं ब्रह्मलोकञ्जगामस ॥ ३२ ॥

करदेती हैं हे राजन् ! तुम धन्यहौ और कृत कृतहौ क्योंकि ॥ ३१ ॥ यह कन्या जिसको आपने पायाहै ह्री लज्जा और श्रीलक्ष्मी और कीर्त्ति इत्यादिकों मे प्रसंमनीयहै इतना कहकर नारदजी ब्रह्मलोक को चलेगये ॥३२॥ पराशरजी कहतेहैं कि यह मिथिला पुरीकी रहस्य अर्थात् गोप्यकथा

आपकी प्रीतिपर मैंने वर्णन किया जोकोई इस कथाको सुनेगा अथवा सुनावेगा अथवा हृदयमें
स्मरण करेगा ॥ ३३ ॥ उसके ऊपर श्री सीताजी साक्षात् रामजीकी परम प्रिया सदा अनुकूल

त्वत्प्रीत्यावर्णितंसर्वं रहस्यंमिथिलोद्भवम् ॥ यएतच्छ्रावयेन्नित्यं श्रुत्वावैहृदि
धारयेत ॥ ३३ ॥ तस्यतुष्टाभवेत्सीता साक्षाद्राघववल्लभा ॥ एतदर्थंहिमिथिला
सर्वकल्याणकारिका ॥३४॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशर
मैत्रेय सव्वांदे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

मैत्रेय उवाच ॥ विचित्रमिदमाख्यानं वर्णितं भवतामुने ॥ वैशाखे जानकी

रहेंगी ॥ ३४ ॥ ❁ इतीश्री वृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥६॥❁

दोहा । जानकी जन्मनक्षत्रातिथि व्रतविधान जेहिरीति । सरणरमायण मानमें माधवनौमीमीति ।
मैत्रेयजीने फिर प्रश्न की हे मुनि आपने यह बहुतही आश्चर्य कथा सुनाई है परन्तु अब यह भी

कहसुनाइये कि वैशाषमें जानकी नवमी व्रत किसतरहसे कियाजाताहै ॥ १ ॥ उसका नियम
और विधान और काल जो मुनीश्वर लोगोंने कहाहै और जिसप्रकार सिद्धान्त ग्रन्थोंमें वर्णित

जाता व्रतन्तत्र कथम्भवेत् ॥१॥ निर्णयस्तस्य कालस्य विधिश्चापि मुनीश्वर ।
यथा निर्णीयतेशास्त्रे सिद्धान्तं तस्य शंसमे ॥ २ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ वैशाख-
स्य सिते पक्षे नवमीमघ संयुता ॥ सैव मध्याह्न योगेन शस्यतेव्रतकर्मणि ॥३॥
विऋक्षापि तिथिर्ग्राह्या नवमीशब्द संग्रहात् ॥ तिथिक्षये तिथिर्वापि वृद्धौशुद्धा
ऽथवामुने ॥ ४ ॥ मध्याह्नव्यापिनीग्राह्या कर्मकालस्तुशस्यते ॥ पौरवशस्य ते

है वहसव मुझसे कहिये ॥२॥ पराशरजी वोले कि वैशाष शुक्ल नवमी तिथी मघानक्षत्र जिस
दिन मध्याह्न कालमेंहो उसी दिन व्रत प्रसस्त अर्थात् उत्तमहै ॥ ३ ॥ यदि मघायुक्त नवमी
नहो सिर्फ नवमीहीहोतो करनाचाहिये तिथिक्षयहो अथवा वृद्धहो अथवा सुद्धनौमी हो अथवा

दूसरी तिथियोंसे संयुक्त नवमीहो ॥ ४ ॥ मध्याह्न व्यापी अर्थात् दोपहरके समय नवमी जिस
दिनहो वह व्रतकाल प्रशस्तहै मध्याह्न व्यापीहोतो परदिन करना चाहिये ॥ ५ ॥ और जो
परदिन अथवा पूर्वदिन मध्याह्न व्यापीनी नहो तौभी परदिन व्रतकरे क्योंकि पारन दशमीमें

प्राज्ञै मध्याह्नेचेद्दिनद्वये ॥ ५ ॥ दिनद्वयेप्य तद्व्याप्तौ तदा संगृह्यतेपरा ॥ द-
शम्यां पारणं शस्तं दशमींनैव लंघयेत् ॥ ६ ॥ उपवासक्रमं राम नवम्यादिवदा
चरेत ॥ पुमान्स्त्रीगृहस्थश्च श्रद्धावांश्चेन्निजालये ॥ ७ ॥ निर्माय प्रतिमां श्रेष्ठां
तत्र पूजनमाचरेत् सौवर्णीराजतीं वापि प्रतिमां कारयेन्नरः ॥८॥ पलैः षोडश-

प्रशस्तहै दशमीमें लंघन न करना चाहिये ॥ ६ ॥ और जिसप्रकार रामनवमी में उपवास हो-
ताहै उसी क्रमसे पुण्यस्त्रीवानलोग उपवासकरै और श्रद्धायुक्त अपनेघरमें ॥ ७ ॥ सुन्दर म-
ण्डप निर्माणकरके और उसमे सोना या चांदीकी नवीन मुर्त्तीबना स्थापितकर पुजनकरै ॥ ८ ॥

और षोडसपल अथवा पञ्चदसपलकी प्रतिमा वनवावै अथवा एककर्षकी अथवा एकमाषकीभी वनवावै पाचगुंजाका एकमाष होताहै और सोलह माषका एककर्ष होताहै और चारकर्षका एक पलहोताहै अर्थात् एकहजार चौविसमासा अथवा नौमे साठमासाकी प्रतिमा अथवा एक

भिः कार्य्या दशपंचभिरेवच ॥ तावद्भिः कर्षकैर्वापि तावन्माषैरथोपि वा ॥९॥
वित्तशाठ्यं न कुर्वीत सर्व धर्म्म क्रियादिषु ॥ ज्ञानमुद्राधरं रामं वीरासनसमा-
स्थितम् ॥१०॥ दिव्यसिंहासनासीनं न्यसेदष्टदलांवुजे ॥ श्रीरामवामभागस्थां
सीतां सर्वांग शोभनां ॥११॥ नीलपद्मधरां देवीं कारयेत्साधकोत्तमः ॥ लक्ष्मणं

कर्षकी अथवा एकमाषकी वनावै ॥९॥ धर्मक्रियादिकोंमें वित्तशाठ्य न करे अर्थात् खर्चका शोच न करे श्रीरामचन्द्रजीकी ज्ञान मुद्रासंयुक्त वीरासनसे ॥१०॥ सुन्दर सिंहासन पर अष्टदल कमलके वीचमे श्रीरामचंद्रजीकी प्रतिमा को स्थापित करै और उनके वामभागमें सर्व्वाङ्गसुन्द

६३.

री श्रीसीताको स्थापित करे ॥ ११ ॥ जो नील कमल लियेहुये हैं और पश्चिमतरफ हाथोंमें छत्र चामर लियेहुए लक्ष्मणजीकी प्रतिमाको रक्खै ॥ १२ ॥ और दोनों पार्श्वमें पंखालीये हुये भरत और शत्रुहनजीकी प्रतिमा और सामने हनूमानजीकी प्रतिमा को स्थापित करे ॥ १३ ॥

पश्चिमेभागे धृतछत्रसुचामरम् ॥१२॥ पार्श्वे भरतशत्रुघ्नौ तालवृन्तकराम्वुजौ ॥ आञ्जनेयं तथैवाग्रे एवं वै प्रतिमाक्रमः ॥१३॥ पूजास्याद्वैष्णवेपीठे वेदिकोपरि संस्थिते ॥ प्राणप्रतिष्ठामन्त्रैश्च न्यसेत्प्राणान्प्रयत्नतः ॥१४॥ संस्कारान्विधिवत्कृत्वा देवमावाह्य पूजयेत् ॥ आसनं स्वागतं पाद्यमर्घमाचमनीयकम् ॥१५॥

वेदीके ऊपर वैष्णवपीठमें पूजा कर प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रसे यत्नपूर्वक प्राणप्रतिष्ठा करे ॥१४॥ संस्कार की विधिसे संस्कार करके देवताका आवाहन करके पूजन करे आसन और स्वागत और पाद्य और अर्घ और आचमन इत्यादि प्रकारसे ॥१५॥ तब गंध और पुष्प स्रग अर्थात्

माला धूप, दीप और नैवेद्य ॥१६॥ और ताम्बूल इत्यादि से श्रीरामचन्द्रजी का पूजन करै इसी
प्रकार जानकीजी कोभी पूजै और यज्ञोपवीत की जगह सीताजीको भूषण देवै ॥ १७ ॥ और

मधुपर्कार्चनं स्नानं वासोयज्ञोपवीतकम् ॥ गन्धं पुष्पं तथा धूपं दीपं नैवेद्यमे-
वच ॥ १६ ॥ ताम्बूलंचेति रामस्य सीतायाश्चापि पूजनम् ॥ यज्ञसूत्रोपचारैस्तु
सीतायै भूषणं न्यसेत् ॥१७॥ स छत्रं चामरं दत्वा लक्ष्मणं पूजयेत्ततः ॥ गन्ध
पुष्पं तथा धूपं दीपं नैवेद्यमेवच ॥१८॥ पञ्चाङ्गमेतत्सर्वेषां पूजायाएष वैक्रमः ॥
पूजापूरुषसूक्तेन राघवस्य प्रशस्यते ॥१९॥ श्रीसूक्तेन च जानक्या पूजाकार्य्या

छत्र चामर से भूषित करके फिर धूप, दीप, गन्ध पुष्प नैवेद्य इत्यादि पञ्चोपचार से लक्ष्मणजीका
पूजन करै ॥१८॥ यह जो गन्ध पुष्प धूप दीप नैवेद्य इत्यादि से लक्ष्मणजी का पूजा कहाहै इसी
क्रमसे सब देवतोंको पूजै और पुरुषसूक्तसे अर्थात् सहस्रशीर्षा इत्यादि मन्त्रसे श्रीरामचन्द्रजी

को पूजे । १९ ॥ श्रीसूक्त अर्थात् श्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्येत्यादि मन्त्रसे सीताजीकी पूजन उत्तम
साधक लोग करै और अपर देवताओंके नामसे चतुर्थ्यन्तकर नमः शब्द संयुक्त पूजन करै ॥२०॥
अथवा ब्रह्मगायत्री से सबकीसी का पूजन करै और इसी प्रकार होम और तर्पण भी करै ॥२१॥
प्रयत्नतः ॥ अन्येषां नाममन्त्रेण चतुर्थ्यां नाम नामतः ॥२०॥ अथवा ब्रह्मगा-
यत्र्या सर्वपूजनमिष्यते ॥ एवं होमोपि कर्त्तव्यस्तर्पणस्यैव वैक्रमः ॥२१॥ पुनः
शंखे जलं गृह्य अर्घ्यं दद्याद्विचक्षणः ॥ रामभद्र महेष्वास रघुवीर नृपोत्तम ॥२२॥
गृहाणार्घ्यं मयादत्तं कृपया रघुनन्दन ॥ उत्पन्नासि महाभागे स्वर्णलांगल प-
फिर शंख में अर्घ के वास्ते जललेकर कहै कि हे रामभद्र हेनृपोत्तम हेमहेष्वासा ॥२२॥ हेरघु-
नाथ ! मेरे दियेहुए इन अर्घ्यको कृपाकरके ग्रहण करो इतना कहकर रामचन्द्रजीको अर्घ्यदेवै
फिर अर्घ लेकर जानकीजी से कहै कि हे महाभागे ! स्वर्णके हलसे तुम्हारी उत्पत्ति है ॥ २३ ॥

हे मिथिलेशजे मेरे दियेहुए इस अर्घ्य को कृपा करके ग्रहण करो इतना कहकर अर्घ्य दे उसी
जगह एक पार्श्व में मिथिलाधीश महाराज जनकजीका भी पूजन करै ॥ २४ ॥ फिर पंचोपचार

द्धतौ ॥ २३ ॥ गृहाणार्घ्यं मयादत्तं कृपया मिथिलेशजे ॥ मिथिलाधीश्वरंपार्श्वे
जनकं तत्र पूजयेत् ॥२४॥ पञ्चांगैः पूजनं कृत्वा अर्घ्यंतस्मै निवेदयेत ॥ विदे-
हाधिपराजेन्द्र मिथिलेशकृपानिधे ॥२५॥ गृहाणार्घ्यं मयादत्तं सर्वसिद्धिं प्रय-
च्छमे ॥ नर्तनं गीतवाद्यादि कृत्वातद्दिवसं नयेत् ॥ २६ ॥ रात्रावपि महापूजां
कृत्वा जागरणंचरेत् ॥ पारणाहे द्विजान्सम्यग्भोजयित्वातु भक्तितः ॥ २७ ॥

पूजन करके इतना कहकर अर्घ्य देवे कि हे विदेहाधिप राजेन्द्र ! हे मिथिलेश ! कृपानिधि ॥२५॥
मेरे दियेहुए इस अर्घ्यको ग्रहन करके सम्पूर्ण सिद्धि मुझको दीजिए तत्पश्चात् नृत्य गीत वाद्या
दि करके दिनको बितावै फिर प्रीति पूर्वक ॥ २६ ॥ रात्रिमें महापूजा करके जागरण करै और

पारण के दिन सम्यक् प्रकारसे ब्राह्मण भोजन करावै ॥२७॥ फिर उस प्रतिमाको जो मनुष्य राम भक्त और पवित्र हो उसको देदेवे अथवा आपही जो श्रद्धायुक्त पूजन करनेको निष्ठा रखताहो धारण करे ॥२८॥ तो अपने घरमें उस प्रतिमाको स्थापना करके पूजन करे और उस आचार्य्य

शुचये देवभक्ताय प्रतिमां तां निवेदयेत् ॥ अथवा यदिचेद्भक्तिः पूजायांनैष्ठि-
का भवेत् ॥ २८ ॥ तदा तां स्वगृहेस्थाप्य पूजयेत्प्रत्यहं सुधीः ॥ आचार्य्याय
प्रदातव्यं दक्षिणा काञ्चनं शुभम् ॥२९॥ गाः सवत्सा नवंवस्त्रं रत्नं धान्यं गृहा-
दिकम् ॥ अथवा शक्तितोदेयं यथा तुष्येद्द्विजोत्तमः ॥३०॥ भूयसीं दक्षिणां द-

ब्राह्मणको जिसने व्रतमें पूजा करायाहै उसको सम्यक् प्रकारसे दक्षिणा देवै सुवर्ण और उत्तम भूमि देवै ॥ २९ ॥ वच्छायुक्त गऊ और वस्त्र, रत्न, धान्य, और नवीन घर इत्यादि सव कुछ अपने विभव के अनुसार देवै कि जिसमें ब्राह्मण सन्तुष्ट होजाय ॥३०॥ तत्पश्चात् भूयसी दक्षिणा

भी स्वस्तिवाचन पूर्व्वक देवै हे मुनि ! इस प्रकारकी भक्ति और आराधनसे श्रीरामचन्द्र और
श्रीजानकीजी ॥३१॥ उस भक्तकी वड़ी२ मनकामना सब पूरी करदेते हैं जो देवताओं कोभी

द्यात्स्वस्तिवाचन पूर्वकम् ॥ एवमाराधितोरामः सीतयासह भक्तितः ॥३१॥ ददा
ति परमान्कामान् सुराणामपि दुर्लभान् ॥ नानेन सदृशंपुण्यं नानेन सदृशम्व्र
तम् ॥३२॥ श्रीरामतोषकोपायं नानेन सदृशं क्वचित् ॥ सुरापी ब्रह्महास्तेयी गुरु
पत्नी प्रधर्षकः ॥३३॥ मातृहा पितृहाचैव कृतघ्नश्चापि पातकी ॥ शुद्धतामाप्नु-
यात्सर्वे प्रयान्ति परमांगतिम् ॥ ३४ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहा-

दुर्लभहै और हे मुनि ! इसके समान पुण्य अथवा व्रत कोइ दूसरा नहीं है ॥३२॥ श्रीरामचन्द्रजी
को तोष करने का उपाय सिवाय इसके दूसरा कोइ नहीं है और जिसने ब्रह्मघात अथवा सुरा
पान अथवा सुवर्णकी चोरी अथवा गुरुकी स्त्रीसे गमन कियाहो ॥ ३३ ॥ मातृहा नाम माताको

मारा अथवा पिताको मारा हो कीरति पापमें हो ऐसे२ मनुष्यभी शुद्ध होकर परम गतिको
त्म्ये पराशर मैत्रेय सम्वादे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मैत्रेय उवाच ॥ मिथिलाधिपतेर्वेश्म दुर्गाणिपरिखास्तथा ॥ अन्तःपुराणि सर्वाणि यथाकाराणि वर्णय ॥ १ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ दुर्गं जनकराजस्य परिखात्रितयान्वितम् ॥ नैकशालंसमुत्सेधं स्वर्णकुट्टिम मण्डितम् ॥ २ ॥ वणिजा-
पाते हैं ॥ ३४ ॥ ❀ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे एकोनविंशाऽध्यायः ॥ १९ ॥ ७ ॥

दो० । अध्याये आठम कह्यो जनककिला परमान, कंचनवन अरु नगरसव रामायणकरु ध्यान ।
मैत्रेयजी फिर वोले कि हे मुनि ! मिथिलापतिक दुर्ग जो है गढ़ खाई और उनके पुरके मकान आदि जिम२ तरहके जो हों उनकीभी वर्णन कीजिए ॥ १ ॥ पराशरजीने बोले कि राजा जनकजीका दुर्ग अर्थात् किला तीन खाई सहितहै और अनेक शालकहै एकमंजिला नहींहै वहु मंजिला

के ऊँचे सोनेके कुट्टिम अर्थात् कितनीएक भूमि मणिजड़ितहैं ॥ २ ॥ और वणिकगण अर्थात्
वजार संयुक्त और वीरलोगोंके रहने के स्थानोंसे अत्यन्त शोभित और निमिवंशी राजालोगों
के उत्तम २ घरोंसे विराजमानहै ॥ ३ ॥ उसके बीचमें राज राजेश्वर महाराज जनकजीका मंदिर

मापणैर्युक्तं वीरावास विराजितम् ॥ निमिवंश प्रसूतानां गृहरत्नैस्तु शोभितम् ॥
॥ ३ ॥ तन्मध्ये राजराजस्यस्फाटिकं मंदिरम्वरम् ॥ वामेकुशध्वजावासं गृहरत्नै
समन्वितम् ॥ ४ ॥ राजराजगृहोपान्ते गजाश्वभवनानि च ॥ गोपुरंप्राग्भवं द्वारं
तदन्तर्वर्तिनी सभा ॥ ५ ॥ ऐशान्यां राजते ब्रह्मन्महारत्नौघ संकुला ॥ वायव्ये

स्फटिकमय है और उसकी बाईं ओर कुशध्वज नाम जनक के भाई का मन्दिर रत्नमयहै ॥ ४ ॥ और
राजराजेश्वर महाराज के मन्दिरके पासही में अश्व और हाथियोंके रहनेके घर वने हैं और पूर्व्व
द्वारपर गोशालाहै उसके बीचमें सभाहै ॥ ५ ॥ और श्रीजानकी जीके मन्दिरमे इशान कोनपर वड़े २

भारी मकान रत्नोंके हैं जिनमें तोसखानेभी बनेहैं और नैऋत्य कोणपर भण्डार खानाहै ॥ ६ ॥ और अग्नि कोणपर पाक गृह और दक्षिण दिसामें देवता के मन्दिरहै और श्रीजानकीजी के छोटे भाइ जिनका नाम लक्ष्मीनिधि करके विख्यातहै ॥७॥ उनका मकान जनकजीके मन्दिरके

तु गृहारामं नैर्ऋत्यां कोषसञ्चयः ॥६॥ महानसं तथाग्नेये दक्षिणे देवतालयम् ॥ लक्ष्मीनिधिरितिख्यातो जानक्यावर जोहियः ॥७॥ तस्यालयेमहाभाग पश्चिमे समुदाहृतम् ॥ कुशकेतु गृहं रम्यमुत्तरेसु विराजितम् ॥८॥ पूर्वे रम्भावनीं विद्यादितिवै मन्दिरक्रमः ॥ मध्येराजालयं श्रेष्ठं तन्मध्ये स्वर्णमण्डपम् ॥९॥

पश्चिम ओरहै और कुशकेतु का मंदिर राजमंदिरके उत्तरओर है ॥८॥ और पूर्व्वओर नृत्यशाला है इसी क्रमसे वहांके सब मन्दिरहै और महाराज का मन्दिर इन सबोंके मध्यमें है और उसके मध्यमें एक मण्डप बहुत उत्तम स्वर्णमयहै ॥९॥ उस मण्डपका दर्शन जो मनुष्य किसीकाल

में करताहै वह सायुज्य फलको प्राप्त होकर श्रीरामचन्द्रजी के समीपमें वास पाताहै ॥१०॥ इस लोकमें जो महापतकी और वड़े वड़े अधम मनुष्य है और पशुपक्षी प्रेत इत्यादि अपर जीव

सुवर्णमण्डपं दृष्ट्वा पूर्वकालेषु मानवाः ॥ सायुज्यफलमाप्नोति रामसान्निध्य मेवच ॥१०॥ महापातकि नोलोके पापिष्ठायेनराधमाः ॥ पशवः पक्षिणः प्रेता येचान्ये पापयोनयः ॥११॥ कथं चित्तत्रचेज्जातास्तेयान्ति परमांगतिम् ॥ किं पुनर्यान्ति ये भक्त्या जानन्तः फलमुत्तमम् ॥ १२ ॥ एवमेव विधानेन राजते राजमन्दिरम् ॥ राजालयवरिष्ठस्य ऐशान्यां कल्पपादपः ॥१३॥ एवमादि प्र-

जो पाप जोनिसे उत्पन्नहै ॥११॥ वे कोसीप्रकार जाकर एक वेरभी जो उसमंडप को देखे तो परमगति को प्राप्तहोतेहैं और जो कोई श्रद्धा से उसका फलजानकर वहांजाताहै उसकाफल कहांतक कहैं ॥१२॥ इसप्रकारसे सोभित जो महाराज का मन्दीर है उसके इसानकोण पर

कल्प बृक्षहै ॥१३॥ इस प्रकार नाना सम्पत्ति से शोभित जनक महाराज का किला शोभायुक्त
अत्यन्त कठिन तीनों लोकमें विख्यातहै ॥ १४ ॥ हे मुनि! पूर्व हरिहरालयसे पश्चिम जलेश्वर ७७
तक ॥१५॥ गिरिजा स्थानसे उत्तर और धनुष क्षेत्रतक यह गढका प्रमाण मैने कहाहै इसके ८०

कारेण दिव्यसम्पत्सुशोभितम् ॥ दुर्गेदुर्गोत्तमं दिव्यं विख्यातं भुवनत्रये ॥१४॥
समारभ्य महाभाग पूर्वं हरिहरालयम् ॥ तथा मैत्रेयनिर्दिष्टं पश्चिमे वा जलेश्व-
रम् ॥ १५ ॥ गिरिजालयमारभ्य यावद्धैधनुषः स्थितिः ॥ इति दुर्गस्य मर्यादा
मिथिलासामहापुरी ॥ १६ ॥ तत्प्रान्तं वाटिकाभिश्च वनारामैश्च शोभितं ॥
७४. आपगाभिस्सरोभिश्च विविधैश्च जलाशयैः ॥१७॥ शोभितातैरमुक्तिश्चधन

भीतर मिथिलापुरी है ॥१६॥ और नगर के समीपमें वाड़ी और फुलवाड़ी और बड़े२ शोभाय ७४.
मान नदियें और नाना प्रकारके जलाशय और सरोवर इत्यादि से शोभित है ॥ १७ ॥ नाना

प्रकारके धन धान्यादिक से संयुक्त परम शोभित जो मिथिलापुरी है तिसको उत्तर दिशामें कां
चन वन महर्षिलोगों से सेवितहै ॥१८॥ बहुत पुष्प और फलोंसे संयुक्त मानों दूसरा नन्दनबन

धान्यसमाकुला । उत्तरे कांचनारण्यं महर्षिगणसेवितम् ॥१८॥ बहुपुष्पफलो
पेतं द्वितीयमिवनन्दनं । सरोजवनमाख्यातं सन्तानवनमेवच ॥ १९ ॥ मन्दार
वनमित्येव सर्वतःपुष्पितद्रुमम् । चंपकारण्यमाख्यातं केलिकौतुककाननम् २०
कुमुदंसुखदंप्रोक्तं वसन्तारण्यमेवच ॥ स्फाटिकप्रतिमंचैव तथानन्दविवर्द्ध
नम् ॥२१॥ शृंगारकाननेचैव उपमानतिरस्कृतम् सुगन्धिरससंपन्नं सुगंधिकु

है उसके भीतर सरोजवन और सन्तानवन ॥१९॥ और मन्दारवन और केलिकौतुकारण्य और
चंपकवन जो सर्वत्र विख्यातहै और उस वनमें सब ऋतुओंके फल और फूल सदा बनेरहते हैं ॥२०॥
और कुमुदवन और वसन्तवन जिसमें वृक्षादिक स्फटिक की प्रतिमा समानहै देखनेसे आनन्द

वढ़ताहै ॥२१॥ शृंगारवन जिसकेसमान दुसरावननहीं हैं वहसुन्दर सुगन्धरस सहित अच्छे फूलों सें युक्तहैं ॥ २२ ॥ और कदम्बकान्तिवन कल्लोलवन लवंगवन केतकीवन इत्यादि ये सववन

सुमाकरं ॥ २२ ॥ कदम्बकान्तिकल्लोलं लवंगवनमेवच केतकीवनमित्येव कांचनारण्यमध्यगम् ॥२३॥ तत्प्रान्तेगिरयःपंच तेषां नामानि मे शृणु ॥ नीलाद्रिः पश्चिमेख्यातः स्वर्णाद्रिश्चोत्तरेमतः ॥ २४ ॥ कौतुकाद्रिस्तथायाम्ये पूर्वभागेमधुश्रवः ॥ संजीवनगिरिर्मध्ये ख्यातोलोकत्रयेमुने ॥२५॥ दुर्गात्पश्चिमतोभागे योजनत्रितयात्परं ॥ यज्ञस्थलं नरेन्द्रस्य यत्रलांगलपद्धतौ ॥२६॥ समुत्पन्नाम

काञ्चनवनके वीचमेंहै ॥ २३ ॥ उसकाञ्चन आरण्यके प्रान्तमें पांचपर्व्वतहै उसके नामसुनिये पश्चिम नीलाद्रि और उत्तम स्वर्णाद्रि ॥ २४ ॥ दक्षिणओर कौतुकाद्रि और पूर्व्व मधुश्रव और विचमें सजीवनगीरी जो त्रिलोकमे विख्यातहै ॥ २५ ॥ जनकमहाराजके किलासे पश्चिमओर

वारहकोशपर यज्ञस्थानहै जहांपर लांगल पद्धति अर्थात् हलकेसीरावरसे ॥ २६ ॥ हे महाभाग
श्रीरामचन्द्रजीकी प्रिया श्री सीताजी प्रगटहुईथीं तीनको जनकजी अपनेगृहलाये सो सीता सा
क्षात मायास्वरूपिणी हैं सो जौनस्थानमें उत्पनभये उस स्थानके दर्शनकरनेका वडाफलहै और

हाभाग। सीताराघववल्लभा ॥ जनकेनगृहेनीता साक्षान्मायास्वरूपिणी ॥ तद्विशे
षफलंलोके सर्वकामप्रदायकम् ॥ २७ ॥ तस्मिन्यज्ञस्थलेचैत्रे माधवेचमुमुक्षु
भिः यात्राकार्याविशेषेण द्वयोर्जन्मदिनंयतः ॥ २८ ॥ पूजनंदर्शनंचैव पुराण
श्रवणादिकम् ॥ येकुर्वन्तिनरास्तत्र पुनर्जन्मनविद्यते ॥२९॥ मिथिलासर्वतः

संपूर्णकामना लोकमें प्राप्तहोती है ॥२७॥ तौन जज्ञस्थलको चैत्र वा माधवनाम वैशाष मुमुच्छु
लोग दोनोजन्मदिन यात्रा विशेषणहै ॥२८॥ पूजनकरै दरसनकरै पुराणभगवत कथा श्रवणकरै
जोमनुष्य एहदोनोंजन्मदिनमें जज्ञस्थल नामसीतामढीमेंजाकरकरै तौ पुनि संसारमें जन्मनहीपा

वे इसमेंसन्देहनहीं है ॥ २९ ॥ मिथिलापुरी सबतरहसे पुण्याहै और सबकारणसे शोभितहै यहां के रहनेवाले लोगोंका पुण्य हमसेवर्णन नहीं होसक्ताहै ॥३०॥ हेमुनि मिथिला इस तीन अक्षरके उच्चारणकरनेसे उसीसमय सम्पूर्णपाप नाश होजाताहै और जोकोइ यत्नपूर्व्वक वहांनिवासक

पुण्या सर्वाकारेणशोभिता ॥ तस्यांनिवासिनांपुण्यं मयावक्तुंनशक्यते ॥ ३० ॥ सद्योविनाशयेत्पापं मिथिलेतिप्रकीर्तनात् ॥ धन्यास्तेयेप्रयत्नेन निवसन्तिमहामुने ॥ ३१ ॥ विचरन्मिथिलामध्ये ग्रामेग्रामेविचक्षणः ॥ सन्यस्तानांविधिरयं वीतरागवतामपि ॥ ३२ ॥ कपिलेश्वरमारभ्य हरिणाक्षींचपावनीं पिप्पलीवन

रताहै वह अतिधन्यहै ॥३१॥ जिनलोगोंने कुलको त्यागकरके मोहको छोरदियाहै उन पण्डितों को चाहिये कि सदामिथिलामें रहकर गाम २ फिराकरैं उसकेलिये यह विधिहै कि ॥३२॥ कपिले श्वर सेचलै हरिणाक्षी तीर्थको जाकर वहां जपातीर्थ होकर पिप्पलीवन होकर फिर पुष्यकरको

यात्रा करै ॥३३॥ वहांसे रूप्यस्थान जाकर फिर स्वर्णस्थानजाय तब विलवती होकर हरिनेत्री
यात्राकर कुपेश्वरको यात्राकरै ॥ ३४ ॥ वहांसे मेथिलेश्वर जाकर वनग्राम फिर द्रुमालय जाय

मागत्य पुनः पुष्पहरंब्रजेत् ॥३३॥ रूपस्थानंपुनर्गत्वा स्वर्णस्थानंततोब्रजेत् ॥
वीणावतींहरीनेत्रीं गच्छेत्कूपेश्वरंपुनः ॥ ३४ ॥ मिथिलेशपुरंगत्वा वनग्रामंद्रु-
मालयं पुनः सिंहेश्वरंगत्वा तरुवल्लीं सपिप्पलीम् ॥ ३५ ॥ सिंघोलिकामथोग
त्वा पुनस्तूत्पनालयं ॥ सिंदूरपुरकंगत्वा ततोराजालयंब्रजेत् ॥३६॥ मृत्खनींस
मुपागम्य गच्छेद्विषहरंपुनः॥ मंगलांमंगलवतीं विरजांपापहारिणीं ॥३७॥ बल

वहांसे सिंहेश्वर फिर तरुवल्ली फिर पिप्पली वनकोजाय ॥३५॥ वहांसे सिंहालिका जाकर फिर
तपनेश्वर होकर सिन्दुरपुर जाकर वहां से राजभवनको यात्राकरै ॥ ३६ ॥ वहांसे मृत्खनी
तवविषहर जाकर तब मंगला और मंगलवती होकर विरजापापहारिणीको यात्राकरै ॥३७॥ फिर

वहांपे वलवर्द्धिनी फिर जामनी होकर जीवनपुत्रिकाकोजाय हेमुनि मिथिलापुरीके समीपचारो
ओर ये सवगांवहे जो हमने वर्णनकिया है ॥३८॥ यह यात्राविधि मिथिलापुरीकी सन्यासियोंके
लिये और जो मोहरहित विषयमे विरक्त मुनिलोगहैं उनकेलिये कहाहै ॥३९॥ इसप्रकार भगवान

वर्द्धकंमावेगांयमुनींजीवपत्रिकां। एवंवैमिथिलोपान्ते वसन्ग्रामेष्वनन्यधीः ३८
नयत्कालं कृपापात्रं विचरेतसाधकोत्तमः सन्यस्तानांविधिरयं मुनीनांवीतरा
गिणां ॥ ३९ ॥ निवसेदुटजकृत्वा वानप्रस्थोथवाक्वचित् ॥ ४० ॥ ❀ इतिश्री
वृहद्विष्णुपुराणे मिथिमाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

के कृपापात्रलोग उत्तम साधक सदा मिथिलापुरीमें विचरतेहुए कालक्षेप करतेहैं अथवा वानप्रस्थ
अथवा कोई कुटीबनाकर वासकरे ॥ ४० ॥ ❀ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामात्म्ये विंशो
ऽध्यायः ॥ २० ॥ ८ ॥ ❀

दोहा। मण्डप प्रतिमा जनकहित विश्वकर्मा निरमाय, रामयण अध्यायनव रामप्रेम दरसाय ॥

श्रीमैत्रेयजी पूछते हैं हे पराशरजी ! आपके मुखसे अद्भुत जो रामकथारूप अमृत रसायन उस को पान करनेसे मेरा मन तृप्त नहीं होताहै ॥ १ ॥ हे महाराज सीता और रामके विवाहके लिए

मैत्रेयउवाच ॥ त्वन्मुखाद्गदितंराम तत्त्वामृतरसायनम् ॥ पिवतश्चमनोमेद्य न तृप्यतिभवापहम् ॥१॥ सीतारामविवाहार्थं मण्डपंदेवनिर्मितम् ॥ कीदृशंमण्डपं तत्र केदेवानिवसन्तिवै ॥२॥ किंपुण्यंदर्शनात्तस्य कलिकालेकथंभवेत् ॥ एतत्त्ते श्रोतुमिच्छामि विस्तराद्वदमेगुरो ॥३॥ श्रीपराशर उवाच ॥ शृणुविप्रप्रवक्ष्यामि

देवताओंने मण्डपको बनायाथा वह मण्डप कैसा था और उसमें कौन२ देव निवास करते हैं ॥२॥ और उसके दरशन का क्या पुण्यहै, किस कालमें दरशनकरें यह आप कृपाकर मुझको समझा इये । ३ ॥ श्रीपराशरजी कहते हैं, हे विप्र मैत्रेय तुम श्रवण करो यदि सुनने की तुम्हारी इच्छा

है माहात्म्य अति गूढ़ है यथार्थ कोइ वर्णन नहीं करसकताहै ॥ ४ ॥ तथापि संक्षेपसे म-
ण्डप का माहात्म्य तुमसे वर्णन करताहूं एकाग्र चित्त होकर सुनो जिस भाँति ब्रह्मा पूर्व में वर्णन

यत्त्वयाश्रोतुमिष्यते॥ माहात्म्यंमण्डपस्यास्य वर्णितुंनहिशक्यते ॥४॥ तथापित
स्यमाहात्म्यं संक्षेपात्कथयामिते॥ शृणुचित्तंसमाधाय यथोक्तंब्रह्मणापुरा ॥५॥
सीतारामविवाहार्थं विश्वकर्माविनिर्ममे ॥ यत्रोत्सवोमहानासीद्विवाहेजानकी
पतेः॥६॥ ब्रह्माद्यादेवताःसर्वे नारदाद्याःसुरर्षयः॥ वशिष्ठाद्यामुनिगणा विश्वामि-
त्रमुखास्तथा ॥७॥ दिक्पालालोकपालाश्च दिव्यगन्धर्वनायकाः॥ विद्याधराश्च

किया है ॥ ५ ॥ सीता और रामके विवाह हेतु विश्वकर्माने मंडप बनायाहै जिस मंडपके ऊपर
जानकी और रामचन्द्र के विवाहमें महान उत्सव हुआथा ॥ ६ ॥ ब्रह्मा आदि देवता और नारद
आदि देवर्षिगण तथा वशिष्ठ आदि मुनिगण तथा विश्वामित्र आदि प्रभृतिगण तथा ॥ ७ ॥

इन्द्र आदि दिक्पाल और गन्धर्व नायक तथा विद्याधर सिद्ध, यक्ष, गुह्यक, अप्सरागण ॥८॥ यह सब राम जानकी के विवाहमें रत्नजड़ित मंडपमें आकर गीत और नृत्य वाद्य कोलाहल

यक्षाश्चगुह्यकाश्चाप्सरोगणाः ॥८॥ तत्रोत्सवेसमागत्य मण्डपेरत्नसंचिते ॥ गीतं नृत्यं च वाद्यं च कचित्कोलाहलोध्वनिः ॥९॥ जयशब्दं नमःशब्दं ब्रह्मघोषंतथैवच ॥ अकुर्वन्नुत्सवेनत्र पुष्पवृष्टिंनिरंतराम् ॥१०॥ मार्गशीर्षेसितपक्षे पञ्चम्यां च शुभेदिने ॥ सीताविवाहितायत्र रामेणपरमात्मना ॥११॥ तस्मान्मण्डपमाहात्म्यं मयावक्तु न शक्यते ॥ पुनस्तत्रैव यद्वृत्तं सीतारामविवाहिता ॥१२॥ जन

शब्द ॥९॥ जय शब्द नमःशब्द तथा ब्रह्मघोष करनेलगे और फूलोंकी वृष्टि होनेलगी ॥१०॥ अग्रहण मासके शुक्लपक्ष पंचमी तिथिमें शुभदिनको जिस मंडपके ऊपर साक्षात् परमात्मा श्री राम जानकीसे विवाह कियाहै ॥११॥ इसलिये हे मैत्रेय ! उस मंडप का माहात्म्य वर्णन करने

की हमारा शक्ति नहीं है. फिर सीता और रामका विवाह होचुकी ॥१२॥ तब जनकजी परम आनन्द होकर एक कन्या लक्ष्मणजीको दूसरी भरतजी को ॥१३॥ तीसरी शत्रुघ्नजी को वेदोक्त विधिके साथ दानकर दिया रामसहित चारो भाइ स्त्रीयुक्त होकर देवतों के समान शोभने

कस्तु तदा काले हर्षेणैवपरिप्लुतः ॥ लक्ष्मणायददौ कन्यां भरताय तथा पराम् ॥१३॥ शत्रुघ्नाय ददौचैकां विधिदृष्टेन कर्मणा ॥ चत्वारोदारसंपन्ना भ्रातरो देवता समाः ॥१४॥ राजा स्वयंददौ ताभ्यां पुत्रीभ्यश्च पृथक्पृथक् ॥ दासीदास गजाश्वादि रत्नवस्त्राणि वै ददौ ॥१५॥ दत्वासर्वासु सपूज्य यात्रांमंगलपूर्विकाम्

लगे ॥१४॥ अनन्तर राजा जनकजी प्रभृति बहुद्रव्य लेकर कोटि क्रमसे सब कन्यायों दिया तथा औरभी जो देने लायल भूषणादि है वहभी विविध भाँति कन्याओंको दिया इसी भाँति अनेकानेकदासी अनेकानेकदास वड़े वड़े मतंगहाथा वड़े २ अनेकानेक घोड़े अनेकानेक रत्नजड़ित

वस्त्र कन्याओंको स्वयं दिया ॥१५॥ सब वस्तुपुत्रियों को देकर पूजाकरके मंगल पूर्वक यात्रा
बहुतदुःखसे राजा करवाया ॥१६॥ अनन्तर रामचन्द्र को प्रणाम और अस्तुति करके सविनय
राजा जनक रामचन्द्र से बोले हे रामचन्द्र आपके चरण कमलके विना तथा जानकी के विना

कारयामास नृपतिर्दुःखेन मनसासह ॥१६॥ नत्वा स्तुत्वा ततोराममुवाचविन-
यान्वितः ॥ सीताविना कथं राम तथा त्वच्चरणांविना ॥१७॥ कथं तिष्ठंतिमेप्राणाः
शरीरेमोहनालये ॥ इत्युक्त्वा मूर्च्छितो भूमौ पतितोनृपसत्तमः ॥१८॥ हाहाकारो
बभूवाथ तस्मिन्काले महोत्सवे ॥ सीतापिजनकं दृष्ट्वा रुरोदातीवदुःखिता ॥१९॥

॥१७॥ मोहके जाल जो शरीरहै उसमें प्राण कैसे रहैगा यह कहकर मूर्छितहो जनकजी भूमी
में गिरपडे ॥ १८ ॥ उनके गीरतेही उस महोत्सवके समयमें बडा भारी हाहाकार शब्द हुआ
सीताजी अपने पिता जनक को भूमि में मूर्छित देखकर अति दुःखित हो रोदन करने लगी

॥ १९ ॥ उसी कालमें श्री रामचन्द्र श्वशुर राजा जनक को दोनों वाहु स उठाकर आने अङ्क मे लगाया ॥ २० ॥ और अपनें हाथोंसे अश्रुपूर्ण नृप नेत्र को पोछने लगे और यह बोले हे

ततो रामः समुत्थाप्य नृपतिं श्वशुरंतदा ॥ समुत्थाप्य च बाहुभ्यां सस्वजे च पुनः पुनः ॥२०॥ नेत्रेसंमृज्यते रामोऽश्रुपूर्णे पाणिनास्वयम् ॥ माशुचस्त्वं महाराज करिष्येहं तवप्रियम् ॥२१॥ स भ्रातृकां ससीतांच स्वमूर्तिंस्थापयाम्यहम् ॥ मण्डपे सर्व शोभाढ्ये ततो यास्येगृहंप्रति ॥२२॥ विश्वकर्मातदागत्य प्रतिमांदेवतान्विताम् ॥ सभ्रातृकां ससीताच सर्वलक्षणलक्षिताम् ॥२३॥ कोटिकन्दर्पसदृशां

महाराज आप शोक न करें जिसमें आप आनन्दरहैं वह आपका प्रिय हम करेंगे ॥२१॥ और सर्वसाभाकी स्थान जो यह मण्डपहै भ्रातृ तथा सीता सहित अपनी प्रतिमा को पहलें स्थापन कर अनन्तर अयोध्याको यात्रा करगें ॥ २२ ॥ उस कालमें विश्वकर्म्मा आकर भ्राता और

सीता सहित रामचन्द्र की प्रतिमा बनाया ॥२३॥ और उस प्रतिमाको वहां स्थापन करके रामचन्द्रकी आज्ञासे फिर स्वर्ग चलेगए ॥२४॥ तब शोकसमुद्रमें मग्न जो जनक उनसे रामचंद्र बोले हे राजन् ! इसप्रतिमा को साक्षात् हमहींको जानिए और जानकी को भी हमसे भिन्न

लसच्चन्द्रनिभाननाम् ॥ निर्मायतत्रसंस्थाप्य गतोरामाज्ञयादिवम् ॥२४॥ ततो रामः स्वयंप्राह जनकं संपरिप्लुतम् मामेव विद्धिप्रतिमां मदभिन्नांचजानकीं ॥२५॥ भ्रातॄन्विद्धिममा भिन्नान् तिष्ठराजन्यथासुखम् एवंसंबोधितोराजा त्यक्त्वाशोकंमुदंययौ ॥२६॥ साष्टांगंप्रणिपत्याह राजापूर्णमनोरथः ॥ कृतार्थोस्मि

मतजानिए ॥२५॥ आर भ्रातृ वर्गको हमसे भिन्न नहीं जानिए हे राजन अब आप आनंदपूर्वक अपनी राजधानी में निवासकरैं इस भांतिसे जब रामचन्द्र जनकजीको प्रसन्न किया तब शोक को छोड़कर राजा परम आनन्दहुए ॥२६॥ और साष्टांग प्रणामकरके राजा जनक बोले हे राम

चन्द्र ! हम कृतार्थहुए इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥२७॥ आज हमारा जन्म सफलहुआ और आजही मेरा तप सफलहुआ आज मेरा ज्ञान सफलहुआ और आजही यशभी सफलहुआ॥२८॥

कृतार्थोस्मि कृतार्थोस्मिनसंशयः ॥ २७॥ अद्यमे सफलंजन्म अद्यमें सफलं तपः अद्यमेसफलंज्ञान अद्यमेसफलंयशः ॥२८॥ अद्यमेसफलाः सर्वास्तपोयज्ञादिकाःक्रियाः॥ तन्मूर्त्तिदर्शनादेव मुक्तमज्ञानजंतमः ॥ २९॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य भगवान्भक्तवत्सलः ॥ उवाचचप्रसन्नात्मा त्रैलोक्यपालकोहरिः ॥३०॥ शृणुराजन्वचोमेद्यमत्प्रपन्नोजनःक्वचित् ॥ नापदं लभतेक्वापि दर्शनान्मुक्ति मा

और हे रामचन्द्र आजही आपकी मूर्त्तिकी दर्शन से सब यज्ञ आदि जितनी क्रियाहैं वह सब सफलहुई और अज्ञान संशय सब नष्टहुआ ॥२९॥ ऐसी बानी जनकजी की सुनकर भक्तवत्सल त्रिलोकीनाथ श्रीरामचन्द्र बोले ॥३०॥ हे राजन् ! आप सुनिए हमारे शरणमें प्राप्त जो जनहैं वे

८८.

किसी जगह आपदको नहीं प्राप्त होते हैं और भक्ति द्वारा हमारा दर्शन पाकर मुक्त होतेहैं ॥३१॥ गंगासागरमें स्नान करके तर्पणादि कृत्य सम्पादन करके स्वर्ण मण्डप का दर्शन तथा स्पर्श करनेसे तथा उत्तमा हमारी मूर्त्तिका दर्शन करनेसे वो स्तुति करनेसे ब्रह्मको प्राप्त होताहै इसमें

प्नुयात् ॥३१॥ गंगासागरकेस्नात्वा कृत्वा च तर्पणादिकम् ॥ सुवर्ण मण्डपंस्पृष्ट्वा दृष्ट्वा मन्मूर्त्तिमुत्तमाम् ॥३२॥ स्तुत्वा नत्वा च योभक्त्या ब्रह्मप्राप्नोत्यसंशयम् कालस्य नियमोनास्ति यत्र तिष्ठाम्यहंसदा ॥३३॥ मज्जन्मनिविशेषेण यात्रा कार्या मुमुक्षुभिः ॥ इत्युक्त्वा रामचन्द्रोपि यतोयोध्यां जनैःसह ॥३४॥ तस्मा

कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ३२ ॥ हे राजन् हम सदा जहाँ निवास करते हैं वहां कालका नियम नहीं है ॥३३॥ विशेषतः मुक्तिकी इच्छावान् जो पुरुषहैं उनको हमारे जन्मका जो दिनहै उसमें यात्रा करें यह कहकर रामचन्द्रभी जनोंके साथ अयोध्याको प्रस्थान किया ॥३४॥ अब पराशर

जी मैत्रेयसे कहते हैं हे विप्र ! जनकके गृहको प्रस्थानकर वहां जाकर मण्डपका दर्शन करनेसे पुनः जन्म नहीं होताहै ॥३५॥ जो मनुष्य अपनी मृत्युको जानकर मण्डपको प्राप्त होताहै उस

तसर्वप्रयत्नेन जनकस्यगृहंप्रति ॥ गत्वा च मण्डपं दृष्ट्वा पुनर्जन्म न विद्यते ३५ मृत्युं ज्ञात्वा स्वयं यस्तु मण्डपंप्रति गच्छति ॥ जन्मान्तरार्जितं पापं दर्शनादेव नश्यति ॥३६॥ दैवयोगात्त्यजेद्यस्तु मण्डपेचेत्कलेवरम् ॥ कोटिपातक युक्तोपि सायुज्यं मुक्तिमाप्नुयात् ॥३७॥ ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रास्तिर्यग्योनिगता अपि ॥ ज्ञा-नाद्वा ज्ञानतो वापि लोभात्कामाच्चमत्सरात् ॥३८॥ कथंचि तत्र संप्राप्य दृष्ट्वा

का पूर्वजन्मार्जित पाप मंडपके दर्शनहीं से नष्ट होताहै ॥३६॥ यदि दैवयोगसे कोइ पुरुष मंडप के ऊपर शरीर त्याग करे तो कोटि पातकयुक्तभी हो तोभी सायुज्य मुक्तिको प्राप्त होताहै ॥३७॥ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र यदि पशु पक्षी के योनिमें प्राप्त होकर ज्ञानसे अथवा अज्ञानसे लोभ

से अथवा मोहसे कामसे अथवा मत्परसे ॥३८॥ किसी भाँतिसे यदि मंडपका दर्शन वा स्पर्श करे तो कोटि जन्मका पाप नाश करके नारायणके पदको प्राप्त होताहै ॥ ३९ ॥ हे मैत्रेय जहां

स्पृष्टाच मण्डपम् ॥ कोटिजन्मकृतं पापं मुक्त्वा यान्तिहरेःपदम् ॥ ३९ ॥ तत्र साक्षात्स्वयं रामो नित्यमेवावसन्प्रभुः ॥ किंमयावर्णितेनापि पारंतस्य न विद्यते ॥४०॥ इतिते कथितं विप्र माहात्म्यं मण्डपस्यचः ॥ पठनाच्छ्रवणाच्चैव मुच्यते सर्वपातकैः ॥ ४१ ॥ यंयं चिन्तयते कामं तंतं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ इह लोके सुखंभुक्त्वा चान्तेसत्यपुरं व्रजेत् ॥४२॥ यइदं श्रावयेद्भक्त्या श्रुत्वावा हृदि

स्वयं रामचन्द्र नित्य निवास करते हैं उस स्थान का वर्णन क्या करैं उसका वर्णन नहीं हो सक्ताहै ॥४०॥ हेविप्र यह मण्डप का माहात्म्य, आपको वर्णन कर सुनाया इसको पढ़नेसे तथा इसके माहात्म्यको सुननेसे सब पापोंसे पुरुष मुक्त होता है ॥४१॥ जिस२ कामको पुरुष इच्छा

करताहै वह सब उसका पूरा होताहै और इस लोकमें परम सुखको भोग करके देहान्त विष्णु पद प्राप्त होताहै ॥४२॥ इसको जो प्राणी श्रवण करावै या करके हृदयमें धारणकरे उसकी भक्ति

धारयेत् ॥ तस्यभक्तिस्थिरारामे जायतेनात्र संशयः ॥ ४३ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णु पुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेय सम्वादे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मैत्रेय उवाच ॥ पुनर्विस्तरतोब्रूहि मिथिलायाः कथाः शुभाः ॥ शृण्वन्तोनैव मे तृप्तिर्जायते न कदाचन ॥ १ ॥ मिथिलेति त्रिवर्णोयं यदर्थमुपवर्णिता ॥ तद्-

रामचन्द्रजी में निःसन्देह स्थिरहोती है ॥ ४३ ॥ ❀ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ ९ ॥ ❀

दोहा मिथिलावर्नक अर्थकहि दसअध्या में जानि रामायण सुरगणसहित अस्तुति करहिवखानि १०

अबपुनः मैत्रेयजी पराशरजी से बोले हे महाराज पुनः उत्तम २ जो मिथिला की कथाहै सो

आप वर्णन कीजिये इसभांति की कथा श्रवण से मुझको कभी तृप्तिनहिंहोतीहै ॥१॥ और
मिथिला यह त्रिवर्णाहै अर्थात तिन अक्षर जिसमे ऐसेहै जिसकी महिमा आपकुछ वर्णन कर
चुकेहै हे दयासिंधु दयासमुद्र यदि मेरेउपर कृपादृष्टिहै तोपुनः कुछ मिथिला का माहात्म्य

**दस्व दयासिंधो यदितेनुग्रहोमयि ॥ २ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ धन्यस्त्वंमिथिला
धन्या धन्याःपितृगणास्तव ॥ मिथिलेतिपदस्यार्थं ज्ञातुमिच्छास्तितेहृदि ॥३॥
तदहं संप्रवक्ष्यामि व्याख्यानार्थं तथा शृणु ॥ यच्छ्रुत्वा तत्क्षणाल्लोके चित्तशु-
द्धिश्च जायते ॥ ४ ॥ (सौवर्णेसुलभेसुरार्चितपदे श्रीरामसानन्ददे ॥ सीताराम**

वर्णन करें ॥२॥ पराशरजी बोले हेमैत्रेय तुमधन्यहै तथा मिथिलाधन्यहै और तुह्मारेपितृगण
सभीधन्यहैं जिसलिये मिथिला इसपदका अर्थ जाननेकी इच्छा तुह्मारे अन्तःकरणमेंहै ॥३॥ अब
तुमश्रवणकरो हम मिथिला का अर्थ वर्णनकरतेहैं जिसके श्रवणसे ततक्षण चित्तकी शुद्धिहो-

९३.

ताहै ॥४॥ कोमल और मधुर यह मिथिला नाम उच्चारण करके मनुष्य जो कुछ सतकर्म
पदांक भूमिविदिते चम्पादिपुष्पैर्युते ॥ १ ॥ क्रीडाकुंज सुरंगरंगरचिते सद्भूषणै
र्भूषिते ॥ त्वद्भक्त्या मिथिलेतिनामनिरता धन्याहि ते मानवा ॥ २ ॥ इत्थंज्ञान
मयं त्रिवर्णसुलभं प्रोच्चार्य्यतेनामकम् ॥ कामक्रोधतरंगभंग जनितैस्तापाग्निभि-
र्मुच्यते ॥ ते वै यान्ति परम्पदंभगवतः कृत्वापि पापानि वै ॥ तस्मात्वं मिथिले
नमामि सततं त्वय्याश्रितं पाहिमाम् ॥ ३ ॥ इति क्षेपक ॥) उच्चार्य्य मिथिला
नाम मधुराक्षर कोमलम् ॥ यद्यत्करोति सत्कर्म तत्तत्कोटिगुणं भवेत् ॥ ५ ॥
रामपादांकितांभूमिं राममन्त्रसमन्वितम् ॥ ये वदन्तिनरा ब्रह्मन् ते धन्याध-
करताहै वहकर्म कोटिगुण फल देनेवाला होताहै ॥५॥ और हेमैत्रेय रामका चरणसे अंकीत

तथा रामयह मंत्र से मंत्रित मिथिला को जो मनुष्य उच्चारण करतेहैं वे धन्यहैं और धन्य
उन पुरुषो का जीवन है ॥ ६ ॥ उन पुरुषोका जन्म सफलहै और उनही लोगोंका तप
सफलहै उनही लोगों का सतकर्म्म तथा तीर्थ दानादि सफल होताहै ॥ ७ ॥ जो मिथिला इस

**न्यजीविनः ॥ ६ ॥ तेषां वै सफलंजन्म तेषां वै सफलं तपः ॥ तेषां यज्ञादिकर्मा-
णि तीर्थदानादिकान्यपि ॥ ७ ॥ सफलानि भवन्तीह मिथिलेति प्रकीर्त्तनात् ॥
सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ८ ॥ धन्यामाता पिताधन्यो ये तत्र
निवसन्तिहि ॥ सप्तपूर्वपरान्वंशानुद्धरेर्युनसंशयः ॥ ९ ॥ तेषांप्रीतियुतादेवा ब्रह्म**

नाम को किर्त्तन करतेहैं और वपुरुष सप्तजन्म का संञ्चित जोपातकहै उससे मुक्तहोतेहैं इस
में कुछसंदेह नहीं ॥८॥ और हैं जोवहां निवासकरतेहैं उनके मातापिता भी धन्यहैं और मि-
थिला निवासि अपनेसे पूर्व सातपुरुष तथा पर सातपुरुषोंका उद्धार करतेहैं ॥९॥ और उन

पुरुषोंको पितृगण सहित ब्रह्मा विष्णु महादेव जनम जनम में सदा कल्यानकरतेहैं ॥१०॥
और उनपुरुषों को ब्रह्महत्या आदि महापातक का भय नहीं रहताहै पुनः मिथिलामें निवा-

विष्णु शिवादयः ॥ ते प्रियास्त्रिषुलोकेषु भवेज्जन्मनिजन्मनि ॥१०॥ भयं न वि-
द्यते तेषां ब्रह्महत्यादि पातकम् ॥ मिथिलावाससमासाद्य जीवन्मुक्ताविकल्मषाः
॥११॥ त्रिवारं मिथिलायां यः परिक्रामतिभक्तितः ॥ जानकीरघुनाथस्य प्रियो
भवति नित्यशः ॥१२॥ मिथिवासिनोजीवाः साक्षाद्रामस्वरूपिणः ॥ तेषांदर्शने
नैव जीवनमुक्त तमोभवेत् ॥ १३ ॥ कोटिजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा

स ही करने से जीवन मुक्त और विकल्मष अर्थात् पापरहित पुरुष होताहै ॥ ११ ॥
और तीनवार जो मिथिला की परीक्रमा करेतो श्रीरामचन्द्र और जानकी कीअत्यन्त ९६
प्रियहोताहै ॥१२॥ हे मैत्रेय अधिक कहातक मिथिला का महात्म्य वर्णनकरें मिथिलानिवासी

जितने हैं वे सब रामस्वरूपीही हैं उनके दर्शनसे पुरुष जीवन्मुक्त होतेहैं ॥१३॥ कोटिजन्मकृत
बहुत पापहो या अल्प हो मिथिलावासी के दर्शनहीं से सब नष्ट होजाते हैं ॥ १४ ॥ हे विप्र ! अ० १०.
मैत्रेय मातृहा हो या पितृहा हो वा गुरुतल्पग हो वह मिथिला निवासीके दर्शनसे सर्व पातक से
वहु ॥ तत्सर्वं विलयं यान्ति मिथिलावासि दर्शनात् ॥१४॥ मातृहा पितृहाचैव
गुरुतल्पगतोजनः ॥ पापाद्विमुच्यतेविप्र मिथिलावासि दर्शनात् ॥१५॥ ब्रह्माद-
यः सुरगणास्तुनन्ति वेदवाक्यतः ॥ नित्यस्थले नित्यलीले नित्यनाम्नि नमो
स्तुते ॥ १६ ॥ धन्ये त्वं मिथिलेदेवि ज्ञानदं मुक्तिदायिनि ॥ रामस्वरूपे वैदेहि
९७. रहित होताहै ॥१५॥ ब्रह्मादिक देवता सर्वदा मिथिलाकी स्तुति करते हैं हे मिथिले तू धन्यहो ॥१६॥
तुम्ही मुक्ति और ज्ञान को देनेवाली हो तुम्ही रामस्वरूपिणी हो और सीताका जन्म देनेवाली हो ९७.
और पापको विनाश करनेवाली हो और संसाररूप बन्धनसे मुक्त करनेवाली हो ॥१७॥ यह

दान तप होम स्वध्याय इन सब कर्मोंका फल देनेवाली हौ ॥ ॥ १८ ॥ कामी जनोंका कामका पूरण करनेवाली हौ हमलोग तुमको सर्वदा प्रणाम करते हैं इस भाँति की स्तुति कर निवास

सीताजन्म प्रदायिनि ॥१७॥ पापविध्वंसकेमातर्भवबन्ध विमोचनि ॥ यज्ञदान तपो ध्यान स्व ध्यायानां फलप्रदे ॥१८॥ कामिनांकामदेतुभ्यं नमस्यामो वयं सदा ॥ इत्यादिस्तुतिभिर्नित्यं स्तुवन्ति निवसन्ति च ॥१९॥ माहात्म्यंमिथिला याश्च मयावक्तुं न शक्यते ॥ मैत्रेय उवाच ॥ मिथिलेति त्रयोदेवास्त्रयोवर्णाः श्रुताः पुरा ॥२०॥ अज्ञानान्नहिजानामि तद्वद स्व दयानिधे ॥ २१ ॥ श्रीपराशर

करते हैं ॥१९॥ हे मैत्रेय एतादृश मिथिलाका माहात्म्य हमलोग वर्णन नहीं करसकते हैं । फिर मैत्रेय पूछा कि यह मिथिला का जो त्रिवर्णा यह नामहै इसमें त्रिदेव अर्थात ब्रह्मा विष्णु महादेव सदा शान्तिहित रहते हैं ॥२०॥ यह बात सुनते आते ह परन्तु इसका तत्व ज्ञात नहीं हुआ इसमें

तत्व क्याह सो आप कृपापूर्वक वर्णन कीजिए मैं अज्ञातहूं ॥ २१ ॥ पराशरजी बोले हे मैत्रेय ! आपने मनुष्योंके हितके लिए उत्तम प्रश्न पूछाहै यह मिथिलाकी कथा सर्व पापको विनाश करने वाली है ॥ २२॥ मिथिला जो यह त्रिवर्णा है यह श्रुतिसेभी श्रेष्ठहै मिथिला शब्दमें मकार

उवाच ॥ साधुपृष्ठं त्वया ब्रह्मन् लोकानांहितकाम्यया ॥ मिथिलायाः कथांविप्र सर्वपापापहारिणीम् ॥२२॥ मिथिलेति त्रिवर्णायं श्रुतितोपिगरीयसी ॥ मकारो विश्वकर्त्ताच थकारःस्थितिपालकः ॥ लकारो लयकर्त्तावै त्रिमात्रा शक्तयो भवन् ॥२३॥ तस्मात् त्रिवर्णकं नाम ब्रह्मविष्णुशिवात्मकम् ॥ प्रणवेनसमंविद्धि

संसारके उत्पन्न करनेवाला, थकार पालन करनेवाला, और लकार लय अर्थात् नाश करनेवालाहै इसलिए ॥२३॥ त्रिवर्णा नामका यह जो मिथिला नामहै यह ब्रह्मा विष्णु शिवात्मक है मिथिला यह नाम प्रणव सहित अर्थात् ओंकार संयुक्त होकर सर्व पापका विनाशक है ॥ २४ ॥ जो

पुरुष मिथिला इस नामको ध्यान करताहै वा जप करताहै और कीर्त्तन करताहै उनको जन्मा
दि जो षड भावहै वह नहीं होताहै। ॥ २५ ॥ इस लिए हे विप्र मैत्रेय ! तीनों लोकमें मिथिला
सर्वाघौघनिवारणम् ॥२४॥ मिथिलानामध्यायन्ति जपन्तिभुवि येजनाः ॥ तेषां
जन्मादिषड्भावा न भवन्ति कदाचन ॥२५॥ तस्मात्त्रयाणांलोकानां मिथिला
दुर्लभापुरी ॥ लावण्यंसर्वलोकेषु सरोनद्यादि शोभितम् ॥२६॥ लतागुल्मद्रुमै-
र्युक्तं मिथिलायास्थलंशुभम् ॥ इदन्नामार्थकं ज्ञात्वा स्मरेद्वैबुद्धिमान्नरः ॥२७॥
तस्येयं मिथिलापुण्या प्रसन्नाच्चभवेत्सदा ॥ २८ ॥ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे
दुर्लभाहै मिथिला सर्व तीर्थ भूमिसे ललितह सर नदी वन आदिसे शुशोभितहै ॥२६॥ और लता
गुल्म उत्तम२ वृक्षादिसे भी शुशोभितहै इसलिये नाम सहस फलको देनेवाली मिथिलाको समझ
करके जो बुद्धिमान मनुष्य मिथिलाको स्मरण करताहै ॥ २७ ॥ उसके ऊपर पुण्या मिथिला

स्वयं प्रसन्न होते हैं ॥२८॥ इतिश्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥१०॥

मिथिलामाहात्म्ये पराशर मैत्रेयसम्वादे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

मैत्रेय उवाच ॥ कस्योद्धारोभवत्पूर्वं मिथिलोच्चारणेनवै ॥ तत्सर्वंवद मे ब्रह्मन् यदिमे प्रीतिरस्तिते ॥ १ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ शृणुष्वैकमनावृत्तं येनब्राह्मण मुक्तिभाक् ॥ गोःशिवस्यापि शापाच्च विमुक्तोभून्नसंशयः ॥२॥ अस्सीतटानिवा

दोहा। विप्र शाप छूट्योजिमी चर्मकारक दरसाय, रामायण क्षत्रीतरन एकादश अध्याय ११

मैत्रेय पराशरजी से पूछतेहैं हेपराशरजी कृपाकरके इस कथाको सविस्तर आप मुझसे वर्णन करिए मिथिला यह नामके उच्चारण करनेसे पहिले कौन मुक्तहुआहै ॥१॥ पराशरजी कहतेहैं हेविप्र मैत्रेय एकमन होकरके कथा श्रवणकरो पूर्वमें कोइ ब्राह्मण पातकी था उसके पातकी होनेके कारण यहहै कि वृषभ तथा विश्वेश्वर दोनों ब्राह्मणको शाप दियाथा ॥२॥ उसका इतिहासको श्रवणकरो

काशी निवासी एक ब्राह्मण अपने धर्म कर्मका करनेवाला अस्सी तटमें सततकाल शिवका पूजन करताथा और नित्य स्नान जप होम स्वाध्याय आदि कर्म करताथा ॥३॥ वह किसीसमय प्रदोष व्रतको करके गंगातट के ऊपर जाकर गन्ध पुष्पादिसे पूजन करके ब्राह्मण जब ध्यानावस्थित

सीच कर्मकृच्छिव पूजकः ॥ नित्यस्नानरतो विप्रो जप होमपरायणः ॥ ३ ॥
काश्यांकश्चिदेक विप्रो वेदविद्धर्म तत्परः ॥ सन्ध्याकालेतु संप्राप्ते संध्यां कर्तुं गतोद्विजः ॥ ४ ॥ पुष्पाक्षतादि सम्पाद्य पूजाध्यानैकतत्परः ॥ तस्मिन्काले समायातो वृषभश्चाति दुःखितः ॥ ५॥ क्षुधयापीडितोबर्दः पुष्पादिबुभुजेतदा ॥

हुए॥४॥ तब एक वृषभ (बैल) वहां पहुँचा वह भूषसे पीडित होकर पुष्प आदि पूजनकी जो सामग्रीथी वह भक्षण करगया ॥ ५ ॥ जब ब्राह्मण मुक्तध्यान हुए तब देखतेहैं कि वृषभ पूजा की सामग्री भक्षण करगया। उस वृषभ को देख क्रुद्धहोकर हाथहीसे मारा ॥ ६ ॥ मारतेही वह

वृषभ मूर्छित होकर पृथ्वीमें गिरा जब मूर्छित होगया तब वह ब्राह्मणसे कहा ॥ ७ ॥ रे दुष्ट रे अति चाण्डाल आज तूं गोवध किया इस कर्मके फलसे तूं कुष्ठी और दरिद्री होगा ॥८॥ और तुम्हारे बुद्धि उन्मत्तहो और दुःखके भागी होजावो यह शाप दे प्राणको छोड़कर कैलाश

सविप्रः क्रोधसंप्राप्तः करेणैवजघानतं ॥ ६ ॥ पतितोवृषभो भूमौ प्राणां स्त्यक्त्वा दिवं गतः ॥ विहायस्थो वलीवर्दः सशापद्द्विजमुत्तमम् ॥७॥ रेरेदुष्टातिचांडाल गोवधाभिरतःसदा ॥ एतत्कर्मविपाकेन कुष्टदारिद्र्यसम्भवः ॥८॥ उन्मत्तभूता तवबुद्धिर्दुःखभागी सदाभव ॥ इत्युक्त्वा वृषभोयातः शिवःक्रोधवशंगतः ॥९॥ वृषभं तं हतं दृष्ट्वा कालरुद्रोभवत्तदा ॥ शंकरं प्रणिप्रत्याह विप्रोवद्धाञ्जलिस्त-

प्राप्तहुआ ॥९॥ इसी अन्तरमें विश्वेश्वरआकर ब्राह्मणका यह निन्दित कर्मको देखकर कालरूद्र स्वरूप होकर दुराचारी जो विप्रहै उससे बोले ॥१०॥ विप्रबोले हे देवदेव महादेव ! आपके

वृषभ का घात करनेसे हम वड़े अपराधके भागी हुए ॥११॥ मैं मूढ़ विषयमें आसक्त आपके म-
हिमा को नहीं जाना आपका आज्ञा यथाउचित हो सो हमको करना होगा ॥ १२ ॥ श्रीशिवजी
दा ॥१०॥ विप्र उवाच ॥ देवदेव महादेव वृषभस्तवघातितः ॥ अहं पाप्यपरा-
धीच चरितं नैववेक्षिते ॥११॥ मूढोहं विषयासक्तो न जाने त्वां ममप्रभो ॥ भवदा
ज्ञां करिष्यामि यदिच्छसि तदुच्यताम् ॥ १२ ॥ श्रीशिवउवाच ॥ त्वत्कृतेनैव
पापेन देहःकुष्ठीभवेत्तव ॥ दारिद्र्यंस्यात्तथांगेषु वृषभस्य विनाशनात् ॥ १३ ॥
ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो वालघ्नोमातृघातकः ॥ एतेषां देहगेहेषु कुष्टिदारिद्रता भवे-
बोले ॥ बुद्धिमान होकर आज तुमने हमारे वैलको मारडालाहै इसलिए तुम्हारे किएहुए
पापाकें वदले तुम्हारा देह कुष्टी होजाए तथा दारिद्र होजा ॥१३॥ काहे कि ब्रह्मघाती जोहै पिता
के वधकरनेवाला गो वधकरनेवाला वाल घाती और माताके वध करनेवाल का देह कुष्टी और

गेह दारिद्रको प्राप्त होताहै ॥ १४ ॥ हे विप्र ! तुम उन्मत्तका कर्म किया इसलिए तुमभी उन्मत्त होकर यथेच्छ विचरो ॥१५॥ श्रीपराशरजी बोले । इस भाँति दोनोंका शाप पाकर ब्राह्मण अपने

त् ॥१४॥ तस्मात्त्वं सकृतेनैव कुष्टदारिद्र्य संयुतः ॥ उन्मत्तबुद्धिमास्थाय गच्छ विप्र यथासुखम् ॥१५॥ श्रीपराशर उवाच ॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य दुःखितः स्व गृहंगतः ॥ धनहीनःक्रियाहीनो भाग्यहीनस्तदाभवत् ॥१६॥ उन्मत्तबुद्धिमा-स्थाय त्यक्त्वावाराणसीं पुरीम् देहेकुष्ठं भवेत्तस्य विकृतांगाननेतथा ॥१७॥ गतो वै तीर्थराजादौ स्नानंकृत्वा विधानतः ॥ कुत्रापिशापशमनं न भूतं द्वारकां

आश्रम को आये आनेके बाद शापके प्रभावसे जितना धनथा सो चोर लेगया निर्धन होगये तथा कृयाहीन भाग्यहीन होकर ॥ १६ ॥ उन्मत्त होनेके कारण काशी छोड़कर इधर उधर घूमने १०५
लगा और कुष्ठी रोगी दरिद्री धन-हीन और बन्धुहीन होकर ॥ १७ ॥ शापसे मुक्त होनेके लिए

तीर्थराज प्रयाग में स्नान कर विधानपूर्वक यात्रा करनेलगा जब शाप शमन नहीं भया तब ब्राह्मण द्वारकाको प्रस्थान किया ॥१८॥ द्वारकासे फिर वृन्दावनको प्रस्थान किया वहांभी जब शापसे मुक्त न हुआ तब शोकसे अति पीड़ित हो वह ब्राह्मण पृथ्वीमें गिरगया ॥ १९ ॥ और

गतः ॥१८॥ पुनर्वृन्दावनंगत्वा तत्रापि नैव सम्मतः ॥ ततोसौन्यपतद्विप्रो दुःख शोकार्तिपीडितः ॥१९॥ करपदविहीनश्च मार्गेतिष्ठत्क्षुधार्दितः ॥ विललापाति दुःखेन हाहानाथ प्रसीदमे ॥२०॥ कदाचिद्दैवयोगेन नारदोदिव्यदर्शनः ॥ आकाशात्ससमुत्तीर्य्य कोभवानीतिचाब्रवीत् ॥२१॥ ब्राह्मण उवाच ॥ वाराणस्यां

अधिक चलने से हाथ और पैरसे असमर्थ होकर रास्ताके ऊपर भूख और प्याससे पीड़ित होकर मरणापन्न होगया और यह पुकारने लगा कि हे नाथ ! प्रसीद २ अर्थात् हे नाथ ! प्रसन्नहो॥२०॥ उसी काल दिव्य दर्शन नारदजी महाराज आकाश मार्गसे वहां आकर ब्राह्मणसे पूछा तुम कौन

है ॥२१॥ इस बातको सुनकर वह ब्राह्मण बोला मैं काशी अस्सी संगमके निवासी देवदत्त नामक ब्राह्मणहूं अपने दुःकर्म्मके प्रभावसे इस दशाको प्राप्तहूं ॥२२॥ हे महाराज! हमारे पूर्वका वृत्ता-

च मे बासो यत्रासीसिंगमो भवेत् ॥ देवदत्तेतिनम्नावै ख्यातःशापेन पीडितः२२ शृणु मे पूर्ववृत्तान्तं येनवं दुःखितोस्म्यहम् ॥ एकदाकर्म्मणाशक्ते मयितत्रागतो वृषः ॥२३॥ वृषभःक्षुधयायुक्तः पुष्पादिभुक्तवान्मम ॥ दृष्ट्वाहंक्रोधताम्राक्षस्तं करेणव्यताडयम् ॥२४॥ मत्ताडनेनवृषभः पपात भुविविह्वलः ततोदेहंपरित्य- ज्यनभोगत्वाब्रवीद्वचः ॥२५॥ गोहत्याकृतपापेन कुष्ठदारिद्र्रतास्तुते ॥२६॥

न्त आप श्रवणकरें जिस करिके हम इस दुःखमें प्राप्तहैं, मैं एककाल पूजनमें आसक्त था ।२३॥ उस कालमें एक भूषा वृषभ वहां आकर पूजनकी सामग्री पुष्पादि जो था खा गया तब मैं क्रोधसे रक्त नेत्र होकर हाथहीसे उस वृषभ को मारा ॥२४॥ तब वह वृषभ मेरे ताड़नसे विह्वल हो भूमिपर

गिरपड़ा गिरनेके बाद शापदिया ॥ २५ ॥ कि रे नीच ब्राह्मण तूं गोवध पाप करनेसे कुष्ठी और दुःखी होगा यह कहकर उसने स्वर्ग पयान किया ॥ २६ ॥ अनन्तर बैलका मरण जान अति क्रोधयुक्त होकर श्रीमहादेवजी भी शापदिया कि अरे मूर्ख तूने उन्मत्तका कर्म कियाहै इसलिए

इत्युक्तेवृषभेनैव शिवोपिशप्तवाँस्तथा ॥२७॥ तेनकर्मविपाकेनदीनांगोदुखितो-भवम् व्रततीर्थाटनंदानंस्नानंकृत्वाप्रयत्नतः ॥२८॥ केनापिनैवमुक्तिर्मे गोः शिवस्यापिवाक्यतः ॥ क्षुत्पिपासादिसंयुक्तं दीनांगंदुःखितंप्रभो ॥ मां समुद्धर हे ब्रह्मन् इत्युक्त्वपतितोभुवि ब्रह्मणस्यवचः श्रुत्वा । नारदोवाक्यमब्रवीत् ॥२९॥

तु उन्मत्त होजा ॥ २७ ॥ हे महाराज इस भाँति वृषभ तथा शिवके शापसे मैं दुखित और उन्मत्त होकर तीर्थाटन अर्थात् तीर्थयात्रा स्नान दान ध्यान जप तप होम आदि अनेक कर्म शापसे छूटने के लिए करताहूं ॥ २८ ॥ परन्तु गौ तथा शिवके शापसे सर्वदा रोगी दुःखी बना

रहताहूं हे ब्राह्मण आप मुझको उद्धारकरो नारदसे यह कहकर वह शापयुक्त जो ब्राह्मण पृथ्वीमें गिरपड़ा पराशरजी मैत्रेयसे कहते हैं उस ब्राह्मण का वचन सुनकर नारदजी बोले ॥ २९ ॥ हे ब्रा॰ ण जिस्से तुम्हारा कल्याण होगा वह कहते हैं सुनो, हिमालयके दक्षिण भागमें मिथिला

नारद उवाच ॥ शृणुविप्रप्रवक्ष्यामियेनश्रेयोभवेत्तव । हिमवद्दक्षिणे भागे मिथि-
ला नाम या पुरी ॥३०॥ लतागुल्मादिवृक्षैश्च सुवर्णखानिभिर्युता ॥ यत्र जातो
महाराजोजनकश्चातिधार्मिकः ॥३१॥ ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्च निवसंति तपंति च ॥
यत्र सप्तर्षिमुनयः स्नानध्यानपरायणाः ॥३२॥ निवसंति प्रयत्नेन मिथिलायां च

नामका एक देशहै ॥३०॥ लता गुल्मादि से सुशोभितहै और उसी देशमें अति धार्मिक जनक नाम राजा हुएहैं ॥ ३१ ॥ और जिसमें ब्रह्मा विष्णु रुद्र निवास करते हैं और तपस्या करते हैं जिसमें मरीचि अंगिरा अत्रि पुलस्त्य आदि सप्तर्षि स्नान ध्यानमें परायण होकर ॥३२॥ यत्न

१०९

पूर्वक तपस्या करते हैं जिस मिथिला का नाम उच्चारण करने से कोटि२ महापातक से मनुष्य छूट जाताहै ॥३३॥ हे ब्राह्मण कल्याणको देनेवाली मिथिला की जो कथाहै उसको चित्तलगाकर सुनो कोइ ब्रह्मपुरी नामकी नगरी है उस नगरी में क्षत्रियकुल उत्पन्न गौरचर्म्म नामका एक राजा

सर्व्वदा ॥ यस्यानामप्रभावेन मुच्यते कोटिकिल्बिषात् ॥३३॥ काचिद्ब्रह्मपुरी नाम्नी नगरी वर्त्तते शुभा । तस्यांक्षत्रकुले जातो गौरचर्मेतिपापकृत ।३४। तेन पापां वलिप्तेन ब्राह्मणीगमनं कृतम् । तेन कर्मविपाकेन कुष्ठी दारिद्रमागतः ।३५। तस्य जामातृकःकश्चिन्मिथिलावर्त्मनागतः । कदाचिद्दैवयोगेन प्राणांतसमयोभवत्

वड़ा पापी उत्पन्न हुआ ॥३४॥ उसने कालवस होकर ब्राह्मणी गमन किया था उस कर्मके प्रभाव से कुष्टी आर दरिद्रताको प्राप्तथा ॥३५॥ उसका माता मिथिलाथी वह सर्व गृह कर्मको भलीभाँति करतीथी कदाचित् कुष्टरोगसे प्राणान्त के समय ॥३६॥ हे ब्राह्मण मिथिलानाम माताको अनेक

वार उच्चारण किया उच्चारण करने के साथ उसका प्राणान्त होगया ॥ ३७ ॥ इसके अनन्तर धर्मराजके आज्ञा से दूत उसको बांधकर लेजाने के लिए उपस्तिहुआ ॥ ३८ ॥ और विष्णुकी

।३६। जामातरंसमाहूय तदाप्राणान्ममोचह। तस्मिन्काले ततोदूतायमराजस्य चागतः।३७।मिथिलोच्चारणेनैव निष्पापं क्षत्रियंतदा ॥ त्यक्तदेहंततोदूता धर्मराजस्यशासनात ॥३८॥ वध्वानेतुंमनश्चक्रुस्तस्मिन्कालेतुविष्णुना प्रेषिता विष्णुरूपास्ते मुंचमुंचतिवादिनः ॥३९॥ गदाभिस्ताडितास्ते वै विद्रुतायमकिंकराः ॥ विमानवरमारुह्य स याता विष्णुमंदिरम् ॥४०॥ मिथिलोच्चारणादेवफलमीदृग्भ-

आज्ञासे उनका पार्षद जय विजय आदि आकर छोड़दो२ यह धर्म्मराजके दूतसे कहा ॥३९॥ और गदा प्रहारसे उसको पराजित किया तब धर्म्मदूत भाग चला फिर विष्णुदूत उस पुरुषको दिव्य विमानपर चढ़ाकर विष्णुलोक लेगए ॥४०॥ वह पुरुष मिथिला इस नामको उच्चारणही करनेसे

भक्तहुआ इसलिए हे ब्राह्मण तुम मिथिलाजानेकी इच्छा करो ॥४१॥ दूसरे किसी स्थानमें कोटि कल्प भ्रमण करने से भी शाप से मुक्तनहीं होगे ॥४२॥ मिथिला इस नामके उच्चारण करनेसे

बेद्विज। मिथिलागमनात्सद्यः पापी निष्कल्मषोभवत् ॥४१॥ तस्मा त्वं कुरु विप्रर्षे मिथिलागमनेमतिम्। अन्यत्र नैव ते मुक्तिः कल्पकोटिशतैरपि ॥४२॥ येनकेन प्रकारेण गच्छभो मिथिलांपुरीं। सर्वरत्नसमायुक्तां जानकीमातृकां पुरीम् ॥४३॥ उपदेशःकृतोविप्रे नारदेनमहात्मन। मिथिलाश्रवणे नैव पूरितांगोवभूव सः॥४४॥

यदि यह फल होताहै तो मिथिला निवास के पुण्यको हम नहीं कह सक्तेहै किसी भांती से मिथिलापुरी का गमनही कल्याण दायकहै सर्व रत्न से शंयुक्त श्री जानकीजी के मातृ पुरीहै ॥४३॥ इस भांति नारदजी जव ब्राह्मण को उपदेश किया तव ब्राह्मण मिथिला गमनमें प्रवृत्त होकर ॥४४॥ धीरेधीरे थोडीदूर जाकर एक मनुष्य को देखकर पूछा ॥ ४५ ॥ आप कौनहैं

आपका निवास कहांहै यह सब आप मुझसे वर्णन करें ब्राह्मणके वचन को सुनकर वह मनुष्य बोला मिथिला निवासी जातिका चर्म्मकार अर्थात् चमारहूं ॥ ४६ ॥ यह उस पुरुष की बात

गतेमुनौ ततोविप्रो मार्गेगच्छंछनैश्शनैः। किंचिद्दूरंततोगत्वा दृष्ट्वाकंचिन्नरंपथि४५
कोभवान्कुत्रतेवासः सर्वंमेकथयप्रिय। सोब्रवीच्चर्मकारोहंवासीच मिथिलापुरे४६
इतिश्रुत्वावचस्तस्य दिव्यरूपोभवत्तदा ॥ धन्योहं मिथिलानाम्नः प्रभावादी
दृशोभवम् ॥४७॥ साष्टांगं प्रणिपत्याह तवास्मि शरणंगतः ॥ त्राहिमां कथया
भ्रमन्पतितं दुःखसागरे ॥४८॥ धन्यस्त्वं रामरूपोसि जीवन्मुक्तोसि सर्वदा ॥

को सुनकर ब्राह्मण दिव्यरूप होकर बोला मिथिला वासी के दर्शन से आज हम धन्य और कृतकृत्य हुए ॥४७॥ साष्टांग दण्डवत कर ऐसा बोला आज संसार रूप बन्धनसे हम मुक्त हुये ॥४८॥ और हे मनुष्य तुम धन्यहो तुम रामस्वरूपहो तुम जीवन मुक्तहो तुम्हारे दर्शन से

पूर्व जन्मके पाप तथा इस जन्मके पापसे हम छुटगए इसमें कोइ संदेह नहींहै ॥ ४९ ॥ यह
कहकर पुण्यदेनेवाली मिथिलाको प्रयाण किया वहां जाकर अमृतके समानहैं जल जिसमें वह

दर्शनात्ते कृतात्पापाद्विमुक्तोहं न संशयः ॥४९॥ इतिस्तुत्वा गतोविप्रो मिथि-
लां पुण्यदां पुरीम् ॥ अङ्गरागाभिधं तीर्थममृतोदक संयुतम् ॥ ५० ॥ तं दृष्ट्वा प्र-
णिपत्याग्रे त्राहित्राहीतिचाब्रवीत् ॥ कर्मणामनसावाचा यत्पापंसमुपार्जितम् ॥
॥५१॥ स्नानमात्रेण तत्सर्वं नश्यतेच न संशयः ॥ स्नानं कृत्वा विधानेन देहं
त्यक्त्वा सकिल्विषम् ॥५२॥ दिव्यंशरीरमासाद्य दिव्यालंकार भूषितः ॥ कोटि
सूर्य्यप्रतीकाशं देवतागण सेवितम् ॥ ५३ ॥ विमानमारुरोहाथ वचनंचेदमब्रवी-

अंगराग नाम तीर्थको देखकर और प्रणामकर बोला कि हमारी रक्षाकरो ॥५०।५१।५२॥ उस अंग
राग तीर्थ में विधिपूर्वक स्नानकर पापयुक्त शरीर छोडकर सुन्दर भूषणसे भूषित कोटि सूर्य्यप्रका

शमय दिव्यशरीर पाकर ॥ ५३ ॥ उत्तम विमानपर चढकर बोला हे सीताराम पदांकिते ॥५४॥ हे मिथिले आपको नमस्कारहै हे रामको आनन्ददेनेवाली है योगको सिद्धिदेनेवाली हे सब इ-

त् ॥ विप्र उवाच ॥ नमस्ते मिथिलेपुण्ये सीतारामपदांकिते ॥५४॥ सुरादिपूजिते नित्ये मिथिलेति नमोस्तुते ॥ रामानन्दकरीतुभ्यं नमस्ते मुक्तिदायिनि ॥५५॥ कीटाः पतंगा मसकाश्चसर्वे जलेचरा भूमिचराश्चसर्वे ॥ गच्छन्ति ते भूमितले निवासात्परम्पदं योगिजनैर्दुरापम् ॥ ५६ ॥ अहं पापातियुक्तोपि त्वया मुक्तो न संशयः ॥ तस्मात्वां मिथिलेनित्यं नमस्यामि कृपांकुरु ॥५७॥ इत्युक्त्वा स गतो

च्छाको दनवाली आपको नमस्कारहै ॥ ५५ ॥ कीट और फतिंगा और मसक वा मीन आदि वृक्ष और भूमिके चलने वाले जो जीवहैं वे आपके भूमितल में चरण को रखने से जो पद जोगी को दुर्लभहै उसको प्राप्तिहोतेहै ॥५६॥ तुझपापीको आपहीने उद्धार किया इसमें कोइ

सन्देह नहींहै इसलिये हे मिथिलेस मैं आपको नमस्कार करताहुं आप मेरे ऊपर कृपाकरो ॥५७॥ यह कहकर ब्राह्मण रघुनाथ पदको प्राप्तहुआ जो मनुष्य इस कथा को पढ़ताहै या श्र-

विप्रो रघुनाथस्यसत्पथं ॥ पठनाच्छ्रवणाद्वापि रघुनाथप्रियो भवेत् ॥५८॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे एकादशोऽध्यायः ११

मैत्रेय उवाच ॥ परिक्रमायाः माहात्म्यं वद ब्रह्मन्दयानिधे ॥ किं पुण्यं किं फलञ्चैव जनानांकर्तृणां तथा ॥१॥ मिथिलानाम माहात्म्यं रूपंचापिवदप्रभो ॥

वण करताहै वह रघुनाथ का परम प्रिय होताहै ॥५८॥ ❀ ॥ इति श्री वृहद्विष्णु पुराणे मिथिलामाहात्म्येत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ ११ ॥

दो० मिथिला परिक्रमा औ वासाकिये फलजोइ, द्वादसअध्यामें सकल रामायण मिलिसोइ ॥१२॥

पुनः मैत्रेय पराशरजीसे पूछतेहैं हे दयानिधि मिथिलाकी परिक्रमा का क्या पुण्यहै और क्या

फलहै यह कृपा करके वर्णन करिये ॥१॥ हे महाराज! मिथिला का माहात्म्य तथा स्वरूप हमारे ऐसे अल्पबुद्धिके ऊपर कृपाकर प्रकाश करिये ॥२॥ यह सुनकर पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय तुमने मनुष्यों के उपकारार्थ अच्छा पूछा जिसको श्रवण करनेसे मनुष्य भुक्ति और मुक्ति दोनों पदार्थ

स्वल्पबुद्धिर्नजानामि तस्मान्मेनुग्रहंकुरु ॥ २ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ साधुपृष्टं त्वयाब्रह्मन् लोकानांहितकाम्यया ॥ यस्य श्रवणमात्रेण भुक्तिर्मुक्तिश्च जायते ॥३॥ मिथिलाभूमिकापुण्या महदद्भुतकोमला ॥ ईप्सिता देवताभिश्च मिथिलाया परिक्रमा ॥ ४ ॥ कुर्य्याद्वाकारयेद्वापि दद्याद्वापथभोजनम् ॥ ज्ञानात्संसर्गतोवापि

को लाभ करताहै ॥ ३ ॥ हे मैत्रेय मिथिलाकी भूमि अतिकोमलहै और पुण्यको देनेवाली है जिस मिथिलाकी परिक्रमा कि इच्छा सदा देवतालोग करते हैं ॥ ४ ॥ जो मनुष्य मिथिलाकी परिक्रमा स्वयं करताहै अथवा औरोंसे कराताहै अथवा परिक्रमा करनेवाले को रास्ते का भोजन

देताहै वह अपने सौ कुलको पवित्र करताहै ॥ ५ ॥ जिस कालमें मनुष्यको मिथिला आनकी इच्छा होती है उस कालमें पितृगण और देवगण परम आनन्दित होते हैं ॥ ६ ॥ फिर मैत्रेयजी

पुनाति स्वकुलंशतम् ॥ ५ ॥ मिथिलागमनार्थाय यदावांछति मानवाः ॥ पितृदेवगणाःसर्वे प्रहृष्टाः सन्ति वै तदा ॥ ६ ॥ मैत्रेय उवाच ॥ दूरस्थो वाऽसमर्थोवा न प्राप्तो मिथिलापुरम् ॥ तस्योद्धारः कथं भूयाद्ब्रह्महत्यादि पातकात् ॥७॥ श्री पराशर उवाच ॥ मिथिला दर्शिता येन यद्वा यो गन्तुमिच्छति ॥ तस्य दर्शन मात्रेण पापीपापात्प्रमुच्यते ॥८॥ कोटिजन्मार्जितं पापं ज्ञानाज्ञानकृतं च यत् ॥

पूछते हैं हे पराशरजी जो मनुष्य दूरस्थहै और जो असमर्थ है तथा जो हाथ पाँवसे रहितहै उसका ब्रह्महत्यादि महा पातक से कैसे उद्धार होसक्ताहै ॥ ७ ॥ पराशरजी बोले हे मैत्रेय जो पुरुष मिथिला का दर्शन के लिए इच्छा करते हैं उनके दर्शन मात्रसे पापी पापसे छूट जाताहै ॥८॥ ज्ञान

११८

कृतहो या अज्ञानकृत कोटि जन्मार्जित जो पापहै वह सब मिथिलावासी के दर्शनसे नाश होजाताहै मदिरा पान करनेवाला या बालक को मारनेवाला हो वा गौको मारनेवाला हो या माता पिताको मारने वालाहो मिथिला यात्रा करनेवाले के दर्शनसे इन सबोंका पातक दूर होताहै ९ वाग्मती आदि नदी और उत्तम२ द्रुम और लता गुल्म सरोवरसे शोभित मिथिला साक्षात् स्वर्गके सदृश

तत्सर्वं विलयंयाति मिथिलागन्तु दर्शनात् ॥ ९ ॥ नदीद्रुमतमालैश्च लतागुल्म सरोवरैः ॥ सुवर्णखनिभिर्युक्ता मिथिलात्रिदिवोपमा ॥१०॥ इन्द्रलोकं नागलोकं वैकुण्ठं भगवद्गतिम् ॥ यद्यदिच्छति तत्सर्वं लभेद्वैमिथिलार्चनात् ॥११॥ मिथिलां विना न तीर्थादि तपोदानादिकान्यपि ॥ कुर्य्याज्जन्म शतैर्वापि न लभेद्धग

आनन्द देनेवाली है ॥१०॥ इन्द्रलोक ब्रह्मलोक गोलोक वैकुण्ठ जिस२ स्थानको पुरुष इच्छा करै वह स्थान केवल मिथिलावाससे लाभ होताहै ॥ ११ ॥ जो मिथिला में निवास नहीं करते

वह तीर्थ व्रत तप दान करके भी सैकड़ो जन्ममें भी सीतारामपदको प्राप्त नहीं होते ॥१२॥ इस
लिये सज्जन पुरुषों को यह उचित है कि सब कामके पहिले मिथिलाकी जात्राकरें या संपूर्ण
तीर्थ यात्राको करके मिथिला निवासकरें यदि कोई मनुष्य स्वप्नमेंभी मिथिला इसनाम को उ-
च्चारण करें ॥ १३ ॥ तो पुनः जन्मान्तर में वह श्रीरामजानकी का प्रिय होताहै ॥१४॥ मन-
वत्पदम् ॥१२॥ तस्माद्वै मिथिला यात्रा कर्त्तव्यासततं जनैः ॥ स्वप्नेपि मिथिला
नाम यदि कश्चित्समुच्चरेत् ॥१३॥ सीताराम प्रियोभूयात्पुनर्जन्मनिजन्मनि ।१४।
अन्यतीर्थे कृतं पापं कर्मणा मनसापि वा ॥ मिथिलागमनेनैव नश्यते च न
सयः ॥१६॥ मिथिलायां कृतं पापं परिक्रमेण नश्यति ॥ पौर्णमासी विनाचन्द्रा
से तनसे वचनसे ज्ञानसे या अज्ञानसे और तीर्थों में जोकुछ पातक मनुष्य से हो वह मिथि- १२०
ला की यात्रा करने से सबनष्ट होजाताहै ॥ १५ ॥ मिथिला में कियाहुआ पापहै वह सब

मिथिला की परिक्रमा करनेसे नष्टहोताहै जैसे पूर्नमासी से दूसरी तिथि में चन्द्रमा पूर्णनहीं होते ॥१६॥ वैसेही मिथिला यात्राके विना जप तप दान यज्ञ आदि पुण्यकर्म्म कोई पूर्ण नहीं होते अपने स्थानको छोड़कर मिथिला में निवास को वरावर दूसराकोई पुण्य नहीं है ॥१७॥

यथा पूर्णो न जायते ॥ १६ ॥ तथा तीर्थादिकं कृत्वा पूर्णता मिथिलां विना ॥ त्यक्तव्यासमताबुद्धिर्रन्यतीर्थं समानहि ॥१७॥ सर्वदेवमयः साक्षात् यस्यांवसति राघवः ॥ मिथिला सर्वतीर्थेषु लोकेषु च गरीयसी ॥ यस्यां श्रीजानकी जाता ख्याता च भुवनत्रये ॥१८॥ प्रयागेनैमिषारण्ये वाराणस्यां च पुष्करे ॥

जिस मिथिलाको सर्व्वदेवमय स्वयं रामचंद्र प्रणाम करतेहैं इसी से मिथिला शर्व तीर्थ सर्व लोक से श्रेष्ठ जिसमें जानकीजी उत्पन्नभई ताते तीनोलोक में विख्यात भया ॥ १८ ॥ प्रयाग नैमिषारण्य पुष्करक्षेत्र नरनारायण काशीजी गंगासागर ॥ १९ ॥ गयाकुरुक्षेत्र द्वारका वृन्दावन

१२१

रामेश्वर जगन्नाथ ॥ २० ॥ वैद्यनाथ हरिद्वार बद्रीनाथ नेपाल गंगातट मथुरा मुक्तिक्षेत्र आदि
और जो पुण्यक्षेत्रहै उनमें ॥ २१ ॥ कितनाहू वर्ष निवासकरै तपस्या करै नियमकरे स्नानकरे

नरनारायणेचैव गंगासागर संगमे ॥१९॥ गयायां द्वारकायाञ्च तथा वृन्दावने पि च ॥ रामेश्वरे जगन्नाथे कुरुक्षेत्रे तथैवच ॥ २० ॥ वैद्यनाथे हरिद्वारे नेपाले जाह्नवीतटे ॥ मथुरायां मुक्तिक्षेत्रे पुण्यक्षेत्रे तथैवच ॥ २१ ॥ वसेद्वावहुवर्षाणि पूजयेद्भक्तिभावतः ॥ स्नात्वा स्तुत्वा च दत्वा च यत्फलंतेषु जायते ॥२२॥ मि-थिलायां परिक्रम्य तत्फलं जायते ध्रुवम् ॥ मिथिलासर्वदा पुण्या देवानामपि दुर्लभा ॥२३॥ रघूनाथतनूःसाक्षाद्यस्यां जाता तु मैथिली ॥ सच्चिदानन्द रूपा

दानकरे इनसे जोफल होताहै ॥ २२ ॥ वह फल केवल मिथिला की परिक्रमा से होताहै मिथि-ला सव काल में पुण्य को देनेवालि है और देवताओं को भी दुर्लभहै ॥२३॥ जिस लिये मिथिला

सत् चित् आनन्द स्वरूप है निरञ्जनहै मायास्वरूप है साक्षात् रामचंद्र का दूसरास्वरूपहीहै ।२४।
जिस मिथिला में साक्षात् जानकी उत्पन्न हुइहै तेहि मिथिला में जो प्राणि गमन करतेहैं तस्य-
लिश्षजो पाप नाम होजाताहै इसमे संशयनहीं ॥ २५ ॥ मिथिला के रास्ता में जाने वाले पुरुष

हि मायातीतानिरञ्जना ॥२४॥ गमने मिथिलायांवै मतिर्यस्य प्रवर्तते ॥ निः
शेषं कलुषं तस्य विलयंयात्य संशयम् ॥२५॥ गच्छन्तं च जनं दृष्ट्वा मिथिलां
पथि यो नरः ॥ कोटिजन्म कृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ २६ ॥
मिथिलांगच्छेत्तुयःकश्चिद्वदेदन्यजनंप्रति ॥ किल्विषात्सोऽपिपूतात्माभवत्येव-

को देखनेसे कोटिजन्मो पार्जित जोपाप है उससे पुरुष छूटजाताहै ॥२६॥ वड़ाभारी पापी भीहो
वह यदि दूसरे पुरुष से वातचीत में मिथिला इस नामको उच्चारण करे तो सव किल्विष से
अर्थात् पाप से छूटजाताहै और श्रिरामद्र काप्रियहोताहै ॥ २७॥ जननि (माता) जन्मभुमि

(जन्मकास्थान) जाह्नवी (गंगा) जानकी, जनार्द्दन (विष्णु) यह पांच जकार संसारमें दुर्लभहै २८
श्री रामचन्द्रकी जन्मभूमि अयोध्या और क्रीड़ाभूमि मिथिलाहै जिसदोनों अस्थानोंको छोड़
न संशयः ॥२७॥ जननीजानकीभूमिर्जाह्नवी च जनार्द्दनः सत्कुलेजन्मसंप्रा-
प्तिर्जकाराः पंचदुर्लभा ॥२८॥ अयोध्याजन्मभूमिश्च मिथिला क्रीडनेमता ॥
रामोपिमिथिलांत्यक्त्वाक्षणार्द्धमपिनावसत ॥ २९ ॥ रामस्यानन्ददानित्या
जानकीमातृभूमिका रघुनाथस्य यामाता पतिलोकेगता तु सा ॥ ३० ॥ जान-
कयाजन्ममाता तु निश्चला ब्रह्मवाक्यतः ॥ बहुभिस्सखिभिः सार्द्धरामकुञ्जेषु-
कर वह अन्यत्र (दूसरीजगह) एक छणभी निवास नहीं करतेहैं ॥२९॥ और अयोध्याकी अपेक्षासे
रामचन्द्र मिथिलामें अधिक निवासकरतेहैं इसमें कारण यहहै रामचन्द्रकी माता कौशल्या पतिके
साथ स्वर्ग निवासकरतेहैं और जानकीकी माता मिथिला सततकाल विद्यमान रहती हैं ॥३०॥ हे

मैत्रेय जिस मिथिलामें श्रीरामचन्द्र सखियोंकेसाथ बहुत आनन्दसे अपने समैको बिताते हैं ॥३१॥
इसलिये वह मिथिलाभूमि रामचन्द्रको अधिक आनन्द देनेवाली है और आनन्द स्वरूपा है इस
भूमिमें यदि मनुष्य एकपल या अधापलभी निवासकरै तो सबपातकसे छूटजाय ॥३२॥ पशुगाय

चारमत ॥ ३१ ॥ आनन्दरूपारामस्य सदाप्रीतिकरीशुभा मिथिलायां नि-
वासेननिमिषार्द्धेनमुच्यते ॥३२॥ पशुपक्षिमृगाद्येषु वृक्षकीटतृणेषुच । यदिस्या
त्सफलंजन्म मिथिलायां भवेत्तदा ॥ ३३ ॥ अश्वमेधसहस्रस्य गोमेधस्यतथै
वच ॥ नरमेधशतेनापि यत्फलं लभतेनरः ॥३४॥ मिथिलां तत्फलं गत्वा परि

भैंस आदि पक्षीकाक कौआ आदि मृग हरिन आदि कीट पिल्लू पतङ्ग फतिङ्गा वृक्ष तृण खर
आदि जितने वस्तुओंका मिथिलामें जन्महै हेमैत्रेय वे धन्यहैं ॥ ३३ ॥ हजारअश्वमेध हजारगो
मेध सौनरमेध यज्ञकरनेसे मनुष्यको जोपुण्यहोताहै ॥ ३४ ॥ सोपुण्य मिथिलाकी परिक्रमाकरने

से होताहै दूसरे किसी तीर्थमें अधिक पुण्यकरे वा थोरा पुण्यकरे ॥३५॥ उस पुण्य के प्रभावसे पुण्यवा
न स्वर्गको प्राप्तहोतेहैं परन्तु पुण्यका भोग क्षयहोजाने के बाद पुनः पुरुषको मर्त्यलोकमें जन्मलेना
पड़ताहैं ॥ ३६ ॥ और मिथिला में थोड़ा पुण्य करे वा बहुत पुण्य करे वह इस लोकमें और

क्रम्यैव लभ्यते अन्यतीर्थे कृतंपुण्यं स्वल्पंवायदिवाबहु ॥३५॥ तेनपुण्येनस्व
र्गं वै लभतेसुकृतीजनः क्षीणेपुण्येपतत्येव पुनर्भूमितलेमुने ॥३६॥ मिथिलायां
कृतं पुण्यमिहलोकेपरत्र च ॥ अक्षयं स्यात्तु तत्सर्वं राम सायुज्यकारकम् ३७
देवादयोऽपि वाँछन्ति कदाभूमितले पुनः ॥ जन्मसंप्राप्यमिथिलां संगच्छामः

परलोक में अक्षय होताहै अर्थात उस पुण्य का कभी नाश नहीं होताहै उसीपुण्यके प्रताप
से अंतसमय रामचन्द्रजी का सायुज्य प्राप्त होताहै ॥३७॥ देवतों को भी इच्छाहोती है पृथ्वी में
जन्म लेके दुर्लभ मिथिला से हमलोगोंको संयोगहोय ॥ ३८ ॥ न दान से न होम करनेसे

और न तिर्थ यात्रा करने से कोटिशतकल्पमें मुक्ति नहीं होती किन्तु मिथिलाकी यात्रा कर
ने से विना परिश्रमही मुक्तिहोती है ॥ ३९ ॥ मिथिला में जाकर स्नान दान आदि कर्म्म जो अ० १२.
सुदुर्लभाम् ॥३८॥ न दानैर्न च होमैश्च न तीर्थगमनादिभिः ॥ मिथिलां विना
न मुक्तिःस्यात् कल्पकोटिशतैरपि ॥ ३९ ॥ स्नानं दानं जपं होमं मिथिलायां
करोति यः ॥ सीतारामप्रियतमः स भूयाज्जन्मजन्मनि ॥४०॥ इति श्रीवृहद्विष्णु
पुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशर मैत्रेय सम्वादे द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

मैत्रेय उवाच ॥ मिथिलायां मृताजीवाः कुत्र गच्छान्ति हे मुने ॥ तत्सर्वंविस्त

पुरुषकरताहै वह जब जब जन्म लेताहै तब २ रामजी का अत्यन्त प्रियहोता है ॥ ४० ॥ इति
श्री वृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये चतुर्विंशोऽध्यायः २४ ॥ १२ ॥ ❀ ॥

दो० । अज्ञकृतअघकोटिनकलुषी मिथिलागतिदातार रामायण दसर्तानिमें ब्रूहिनारदकरतार १३

मैत्रेयजी कहतेहैं हे महाराज मिथिलामें जो जीवमरताहै सो कहां जाता है सो सवविस्तार पूर्वक अनुग्रह करके कहिए ॥ १ ॥ श्रीपराशरजी बोले किसी कालमें विष्णुकी भक्ति मे

राद्ब्रूहि यदि ते मय्यनुग्रहः ॥ १ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ कदाचिदेकदासर्वे मुनयः साधुवादिनः ॥ विष्णुभक्तिरतास्ते वै लोकानां हितकाम्यया ॥ २ ॥ नैमिषारण्ये महातीर्थेगोष्ठीं चक्रुर्मनोरमाम् ॥ द्वादशाक्षरमन्त्रस्य मंत्रस्याष्टाक्षरस्य च ॥ ३ ॥ द्व्येकाक्षरादि मंत्राणां व्याख्यानार्थं स्थितास्तदा ॥ तत्रस्तेषु मुनिन्द्रेषु नारदस्तु तपोधनः ॥ ४ ॥ समागच्छन्महातीर्थे नैमिषाख्ये मुदान्वित ॥

आसक्त समदरशी लोकन हितकामना करिके ॥ २ ॥ सनक सनन्दन आदि ऋषि नैमिषारण्यतीर्थ में आकर बड़ीभारी सभाकी उस सभामें द्वादशाक्षर मन्त्रकी और अष्टाक्षर मन्त्रकी व्याख्या करनेलगे ॥ ३ ॥ उस कालमें वैठेहुए जो मुनीन्द्र लोग थे उन लोगोंके समीप में दिव्य

दरशन नारदजी महाराज आए ॥ ४ ॥ उस नैमिषारण्य महा तीर्थमें जाज्वल्यमान धनकती हुई अग्निके समान तेजहै जिसको ॥ ५ ॥ और नारायण के गुणानुवाद को गायन कररहे हैं और जनार्द्दनको ध्यान कररहे हैं ऐसे नारद मुनिको देखकर सनकादिक मुनियोंने विधिवत् सत्कार

दृष्ट्वा मुनिं समायातं ज्वलदग्नी शिखोपमम् ॥ ५ ॥ गायमानं विष्णुव्रतं ध्याय मानं जनार्द्दनम् ॥ मुनिं सत्कारयामास सत्यव्रतपरायणम् ॥ ६ ॥ वाग्भिः स्तुत्वाऽभिनन्द्याथ हरिभक्तिपरायणम् ॥ लोकानामुपकारार्थं पप्रच्छुरिदमादरात् ॥ ७ ॥ ऋषय उवाच ॥ ब्रह्मन्केन प्रकारेण जन्मजन्मान्तरार्जितः ॥ पापराशिः ॥

किया ॥ ६ ॥ और स्तुतिसे नारदजीको प्रसन्नकर हरि भक्तिकी इच्छा करनेवाले जो सनकादि ऋषि वे आदर पूर्वक लोक के उपकारके लिये नारदजी से यहबात पूछी ॥ ७ ॥ हे ब्रह्मन् हे नारद जन्म जन्मार्जित जो पापका समूह उसका नाश किस भांति होगा यह पाप मुझको निश्च

यकर कहिये ॥८॥ नारदजी बोले हे ऋषि लोग हमने पहिले मोक्ष की इच्छा से इसीबातको
ब्रह्मासे पूछाथा उनने उत्तरदिया वही पापको हरने वाली कथा आपसे कहताहूं ॥९॥ हे सर्वे
शिविनष्टःस्यातन्नोवद सुनिश्चितम् ॥ ८ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ एवमेव मया पूर्वं
ब्रह्मा लोक पितामह ॥ मोक्षेच्छया च संस्पृष्टस्तत्त्वज्ञोमे यथा ब्रवीत् ॥ ९ ॥
शृणुध्वं मुनयः सर्वे सर्वलोकहितेरताः ॥ तथैव कथयिष्यामि कथां पापहरां
पराम् ॥ १० ॥ ब्रह्मन्केन प्रकारेण रामभक्तिविवर्जिताः ॥ अज्ञानिनोपि ये नैव
प्राप्नुयुर्विष्णुमन्दिरम् ॥ ११ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ साधुपृष्टं त्वया पुत्र देवानामपि
मुनियेः सर्वलोक के हितम रत सुनिये हम यह कथा कहतेहैं जिसके सुनने से मनुष्य सब
पातक से छुटताहै ॥ १० ॥ हे पितामह ज्ञान शास्त्रको न जानने वाला और भक्तिरहित जो
मनुष्य है उस की गति किस भांति से होती है ॥११॥ नारद की यह बात सुनकर ब्रह्माजी

नारदजी से बोले हे पुत्र तुमने अच्छा पुछा जो तुमने पूछा वह देवताओं को दुर्लभ है वह बात तुमसे कहते हैं जिसको जानने से पुरुष मुक्त होताहै ॥ १२ ॥ हे नारद जनकके कुलमें

दुर्लभः ॥ अहन्ते कथयिष्यामि येन मुक्तिरवाप्यते ॥१२॥ मिथिलोनामराजाभूत्सत्यव्रत परायणः। विष्णुभक्तिरतोनित्यं सर्वशास्त्रविशारदः १३ जनकस्यापि स पूर्वो ज्ञानेन तु बृहस्पतिः॥ निमिना तेन नगरी राज्ञा तु मिथिलेन वै।१४। तस्मात् सा मिथिला नाम्नी वाराणस्यधिका कृता॥ यत्रजातोमहाराज जनकश्चातिधार्मिकः ॥१५॥ तस्यापत्यं भवेत्सीता लोकेषु शुभदर्शना॥ जगन्माते

ज्ञानमें बृहस्पतिके समान और सम्पूण शास्त्रोंको जाननेवाला विष्णुका भक्त और सत्यव्रतमें परायणमिथि नाम राजा भया ॥१३॥ उस राजाने एक नगर वनवाया इसी लिये मिथिला इस नामसे वह नगर प्रसिद्ध हुआ ॥१४॥ और पुण्य धर्म्मादि कर्म्म में काशीसेभी उत्तमहै जिस

मिथिला में वडाभारी धार्मिकराजा जनक उतपन्न हुएहै ।१६। जिसकी पुत्री संसारभरमें शुभ
दर्शना सीता उतपन्न हुईहै और वह तिनों लोकमें जगन्माता, इस नामसे भीं विख्याता हैं ।
जिसको विवाह सूर्य्यवंसी श्री रामचन्द्रसे भयाहै रामचन्द्र साक्षात् विष्णुस्वरूपहै ॥१७॥ अ-
ति विख्याता त्रिषु लोकेषु विश्रुता ॥१६॥ सूर्यवंशभवेनैव श्रीरामेण विवाहिता ॥
रामोऽपि हि विमुक्तात्मा स्वयं नारायणः परः ॥ १७॥ कौशल्येयो दाशरथिर्भूत्वा
विष्णुरजायत ॥ क्षयाय राक्षसानां च देवानां च जयाय वै ॥१८॥ अवतारः कृत
स्तेन धर्ममार्गस्य रक्षणे ॥ आदिमाया स्वयं सीता रामा रामविधायिनी ॥१९॥
पने इच्छासे कौशल्याके पुत्र और दशरथके नन्दन हुएहैं श्री रामचन्द्रजीका अवतार राक्षसों
को विनास करने के लिये और देवताओं के विजय होनेके लिये ॥१८॥ और धर्म्मके रास्ता
को रक्षा वो प्रकाश करने के लिये हुआहै और सीता महारानी आदि मायाहैं वही श्री रामच-

न्द्रमे विवाहिताहैं रामके अनुविधान याने रामके अनुकूल विधान करनेवाली ॥ १९ ॥ सोइ सीता जनक के घरमें उतपन्न होनेसे जानकी इस नाम से विदित हुइहै उन का विवाहादि कर्म्म वेदोक्त विधिसे मिथिला में भया ॥२०॥ इसलिये मिथिला पुण्यस्थान और भुक्तिमुक्ति को

विदेहस्य गृहेजाता वैदेही तेन कीर्तिता ॥ तस्याः पाणिग्रहः कर्म मिथिलायां-
यथाविधि ॥२०॥ तस्मात्सा मिथिला श्रेष्ठा भुक्तिमुक्ति प्रदायिनि ॥ अधर्माः कर्म
भ्रष्टाश्च मिथिलायां वसंति ये ॥२१॥ द्वेषिज्ञानविशून्याश्च द्रोहिणः परनिंदकाः॥
गोघ्नाःसुरापिनो ये च तथैव ब्रह्मघातकाः ॥२२॥ हरिभक्ति विहीनाश्चमुच्यन्ते

देनेवाली भई अधर्म और कर्म्मरहित जन, मिथिलामें जो निवास करते हैं ॥ २१ ॥ एवं दुसरेसे द्वेष करने वाले तथा 'ज्ञान रहित' वो 'परद्रोही, और दुसरे का निन्दा करनेवाले और मदिरा पान न करनेवाले गोवधी और ब्रह्मघाती जितने मिथिलामे निवास करनेवाले हैं ॥२२॥

१३३

वे मिथिलामें निवासही करनेसे जीवन्मुक्त होतेहैं सौ सूर्यग्रहण काशीमें स्नान करनेसे जो पुण्य होताहै ॥२३॥ वह पुण्य आधापहर मिथिलामें निवास करनेसे होता है इसमें कुछ संदेह नहीं ॥२४॥मकरके सूर्य होनेसे प्रयाग स्नान करनेसे जो पुण्य होताहै उससे करोड गुण अधिक

नात्र संशयः ॥ ये तु वाराणसीस्नानात्सूर्य्यग्रहशतेष्वपि ॥२३॥ प्रहरार्द्धेन तत्पुण्यं मिथिलायां हि जायते ॥ मकरस्थे रवौ माघे प्रयागे स्नानजंफलम् ॥२४॥ तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं निमेषे मिथिलास्थिते ॥ यत्पुण्यं द्वारकां गत्वा श्रीविष्णोर्मुखदर्शनात् ॥२५॥ प्रहरार्द्धेन तत्पूण्यं मिथिलायां च जायते ॥ पुराणा-

पुण्य मिथिलामें एक पल निवासकरनेसे होताहै द्वारकामें जाकर विष्णुका दर्शन करनेसे जो पुण्य होताहै ॥२५॥ वह पुण्य आधापहर मिथिलामें निवास करनेसे होताहै विधिपूर्वक पुराण को पढने और श्रवणकरने से जो पुण्य होताहै वह पुण्य दोपहर मिथिला निवास करनेसे होता

है ॥२६॥ कानको सुख देनेवाला यह वचन सुनकर नारदजी फिर ब्रह्मासे पूछनेलगे ॥२७॥ हे ब्रह्मन् पहिले मिथिलामें निवासमात्रहीसे कौन मुक्त हुआहै और मरनेसे कौन मुक्त हुआहै यह

नां च पठनाच्छ्रवणाद्वा यथा विधि ॥२६॥ दिनार्द्धेन च तत्पुण्य मिथिलायां च जायते। इति श्रुत्वा गिरं तस्य विधेः श्रोत्रसुखावहम् । नारदो हृष्टवदनः पुनस्तंप्र युवाचह ॥२७॥ नारदउवाच ॥ मिथिलावासमात्रेण कोमुक्तिं प्राप्तवान्पुरा ॥ मरणेनापि कोमुक्तिं सर्वज्ञोसि वद प्रभो ॥ २८ ॥ येन विज्ञानमात्रेण जायते निश्चला मतिः ॥२९॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ साधुपृष्टं त्वया वत्स सर्वलोकहिते रतः । गतश्चविष्णुलोकं वै मिथिलामरणाद्विजः ॥ ३० ॥ पुरा माहिष्मती

वात मुझसे आपकहें सर्वज्ञ है ॥२८॥ ब्रह्माजी कहने लगे कि हे पुत्र तुमने अच्छा पूछा सर्वलोकके हितकारार्थ म रतहौ मिथिलामें मरनेसें एकब्राह्मण ब्रह्मलोकमें गया था ॥२९॥३०॥ पूर्वस

मयमें महिष्मती नाम एकनगरी थी उस सुन्दरनगरीमें सुकर्मा नामक ब्राह्मण ख्यात था ॥३१॥
॥ वह परस्त्रीमें अत्यन्तआसक्त था दूसरेकी निन्दामें निपुणथा मद्य तथा अन्य विषयमें भी

नाम्नी नगरी चातिशोभना॥ तस्यां च वसतेः विप्रः सुकर्मा नाम विश्रुतः ॥३१॥
परस्त्री निरतःसोपि परनिन्दा परायणाः ॥ मद्यपोविषयासक्तः परद्रव्यापहारकः
॥३२॥ धनान्याहरते नित्यं सुतस्त्रीजीववंचकः ॥ विष्णुभक्तिविहीनश्च सर्वपाप
रतस्तदा ॥३३॥ देशाद्देशांतरं जातः क्रयविक्रयकारणात् ॥ कदाचिद्दैवयोगेन
मिथिलायामुपागतः ॥ ३४ ॥ नानाधनैः समाकीर्णं विक्रयार्थं च घोटकान् ॥

आसक्त था लोभवसहोकर दूसरेके धन चोरानेमें भी निपुण था ॥३२॥ और धन धान्य न रह
ने से पुत्र और स्त्रीको वञ्चक था विष्णुकी भक्तिसे रहितथा सब पापकरनेवाला था ॥३३॥ वह
कदाचित् दैवयोगसे वेचनेके लिये और खरीदनेके लिये देशदेशान्तरसे घूमते फिरते मिथिला

१३६

में पहुँचा ॥३४॥ और नाना प्रकारके धनसे युक्त घोडा आदिको बेचते हुये बहुतरोज मिथिला
में रह गया ॥३५॥ किसि समयमें कर्म्मवश से उस को सांपने काटलिया अनन्तर वह मरगया
तब बडे२ कठोररूपवाले यमदूतोंने ॥३६॥ हाथमें पास लेकर उस पापीको बांधकर शीघ्र यम

क्रयविक्रयकृत्तत्र अवसद्बहुवासरान् ॥३५॥ कदाचिद्दैवयोगेन द्विजिह्वेन स दं-
शितः ॥ मृतस्तं पाशहस्तास्ते यमदूताःसुदारुणाः ॥३६॥ तं बध्वा पापिनं शीघ्रं
नीतं यमपुरे तदा ॥ धर्मराजस्तु तं दृष्ट्वा चित्रगुप्तमपृच्छत ॥ ३७ ॥ किमस्या-
स्ति कर्मफलं तत्स्थानं दीयतामिति ॥ चित्रगुप्त उवाच ॥ आजन्ममरणान्ते वै

लोकमें लेगए वहाँ ब्राह्मणके निन्दितकर्म्मको देखकर धर्म्मराजको निवेदनकिया ॥३७॥ धर्म्मरा
ज उसको देखकर चित्रगुप्तसे बोले हेमहाराज जैसा इसने कर्मकियाहै वैसा इनको स्थान दीजि
य ॥ चित्रगुप्तजी कहतेहैं कि जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त इसका कोई कर्म्म उत्तम नही हैं ॥

मत्कर्म नैव विद्यते ॥३८॥ पच्यतां नरके घोरे खादिरांगारपूरिते ॥ इति श्रुत्वा
वचस्तस्य यमोगम्भीरया गिरा ॥३९॥ दूतानाज्ञापयामास नरकेऽमुनयन्त्विति ॥
दूतास्तद्वचनं श्रुत्वा खादिरांगारपूरिते ॥४०॥ नरकेप्रापयामासुर्ब्राह्मणं दुष्टचेष्टि-
तम् ॥ तं दृष्ट्वा खादिरांगारः शीतस्पर्शोऽप्यजायत ॥४१॥ दूतास्ते विस्मितायाता-
तास्तं दृष्ट्वा महदद्भुतम् ॥ यमं निवेदयामासुस्तत्कथां विस्तरेण वै ॥४२॥ एत-

३८॥ इस लिये घोरजो खदिरांगार पूरित, नामकाकुन्ड उसमें यह पचाकरे इस भांति चित्रगुप्त
के वचन को सुनकर यमराज गम्भीरवाणीसे ॥३९॥ दूतोंको आज्ञा दिया कि तुम लोग इसको
नरकमें लेजाव दूतलोग यमराजका वचन सुनकर खैरके अङ्गारका जो नरकहै ॥४०॥ उसमे
दुष्टचेष्टितब्राह्मणको डालदिया उस पातकी ब्राह्मणको देखकर खदिरांगार नरक जो अत्यन्तगर्म
था वह सीतल होगया ॥४१॥ इस अद्भुतकर्म को देखकर दूतलोग विस्मित होगए और जमरा

जको निवेदन किया ॥४२॥ इसी अनन्तर विष्णुदूतभी दीव्यरूपको धारणकियहुये विमानपर
चढ़कर जहां वह ब्राह्मणथा वहां पहुचे ॥४३॥ उन लोगोंसे यमराज आदरपूर्वक इस वचनको

स्मिन्नन्तरे तत्र विष्णुदूताः समागताः ॥ विमानमधिरूढास्ते दिव्यरूपधराव-
राः ॥४३॥ यमोपि विष्णुदूतांस्तान्परिपप्रच्छ सादरात् ॥ यम उवाच ॥ आज-
न्ममरणान्ते च दुष्कर्मनिरतःसदा ॥४४॥ कुकर्मपरिहारेण किमनेनकृतंशुभ-
म् ॥ केन पुण्यप्रभावेन नीयते विष्णुमन्दिरम् ॥ ४५ ॥ श्रीविष्णुदूत उवाच ॥
यद्यप्ययं पापराशिः क्रूरकर्मा विमूढधीः ॥ मिथिलामरणंनैव सर्वं दुष्कर्मनाशि

कहा हे विष्णुदूत जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त इस ब्राह्मणने पापही कियाहै ॥४५॥ कुरकर्मको
छोडकर इसने पुण्य कभी नही किया क्या पुण्यकिया है जो विष्णुके मन्दिरमें जानेवाला हुआ
॥४६॥ विष्णुदूत कहने लगे यद्यपि यह ब्राह्मण पापराशिहै और कुरकर्मका करनेवालाहै और

मूर्ख है तथापि यह मिथिलामें निवासकियाहै जिससे इसका सबपाप नाशहोगयाहै ॥४६॥ इसी हेतु से यह ब्राह्मण पापरहित है ॥ जानकीकी जन्मभूमि में जिस मनुष्यकी मृत्यु होतीहै वह पापात्माभी होतो मिथिलामें मरनेसे मुक्त होताहै ॥४७॥ श्रीब्रह्माजी नारदजी से कहतेहैं इसी तरह ॥४८॥ जानकीजन्मभूमिं यः प्राणत्यागं करोति वै ॥ स याति विष्णुपदवीं पापराशिसमोपि हि ॥४७॥ एवं यमं प्रबोध्यैव दूतास्ते ब्राह्मणंद्रुतम् ॥ रथं च तं समारोप्य विष्णुलोकं गतास्तदा ॥४८॥ तेनेयं मिथिलापुण्या सर्वपापविनाशिनी ॥ ये त्यजंति शरीराणि तस्यांते मुक्तिभागिनः ॥४९॥ ते धन्याः कृतकृत्या भांति से विष्णुदूत यमको प्रसन्न करके ब्राह्मणको रथके उपर चढाकर छणभरमें विष्णुलोकको चले गए ॥४८॥ इसी हेतु से मिथिलापुरी पुण्य और सबपापको विनाश करनेवाली हुई और जो पुरुष मिथिलमें शरीरको त्याग करताहै वह अन्तमें मुक्तिका भागी होता है ॥४९॥ कलि

युगमें वही धन्यहै और वही पुण्यवान् है और वही कृतकृत्यहै जो मिथिलामें सततकाल निवा
स करताहैं ॥५०॥ पर जितने देवगणहैं और वह गन्धर्वगण और इन्द्र विष्णु शिव आदि जितने
श्च पुण्यवन्तश्च ते सदा ॥ ये वसंति सदा तत्र मिथिलायां कलौ युगे ॥५०॥ सर्वे
देवाःसगन्धर्वाः ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ वसंति मिथिलायां च नानारूपधराः
शुभाः ॥५१॥ मिथिलायां गता ये च क्षणार्द्धं न वसन्ति ये ॥ तेषां जन्म वृथा
भूमौ जीवनं निष्फलं भवेत ॥५२॥ श्रीपराशर उवाच ॥ एवं ब्रह्मा स्वयं साक्षा-
त्पुलकाङ्कितमानसः ॥ माहात्म्यंकथयामास तव स्नेहान्मयाऽधुना ॥५३॥ ब्रह्म
देवताहैं वे सब अपने२ रूपको धारन करके सर्वकाल में मिथिलामें निवास करते हैं ॥५१॥ मि
थिलाभुमिमें जो मनुष्य जिसने आधाक्षणभी निवास नहीं किया उसका जन्म और जीवन वृ
थाहै ।५२॥ पराशरजी मैत्रयजी से कहतेहैं हे मैत्रय इसी भांति ब्रह्माजी अपनेही मुखसे मिथ

१४१

लोका माहात्म्य श्रीनारदजी महाराजको कहा है ।।५३।। जिसके श्रवण करनेसे सबपापनाश होताहै ब्रह्मा और नारदके सम्वादको जो श्रवण करताहै या श्रवण करवाताहै उस पुरुषका ब्रह्म

नारदसंवादं शृण्वंति श्रावयंति ये ॥ तेषामागमनं नास्ति ब्रह्मलोकात्कदाचन । ॥५४॥ पुनरन्यत्प्रवक्ष्यामि माहात्म्यं पापनाशनम् ॥ यस्य श्रवणमात्रेण ब्रह्म हत्यापि नश्यति ॥ ५५ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशर मैत्रेय सम्वादे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

श्रीपराशर उवाच ॥ यमुनादुग्धवतीमध्ये पलार्द्धमपि यो वसेत ॥ विधूय सर्वं

लोकसे फिर संसारमें जन्म नही होता है ।५४।। ❀ इतिश्री बृहद् विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥१३॥ ❀ ॥

दोहा दुग्धवती यमुना अभ्यन्तर ब्राह्मणसुत गतिपाइ सप्तदुगुनअध्यायमें रामायणअघजाइ १४

१४२

श्री पराशरजी मैत्रेयजी से कहतेहैं हे मैत्रय फिर दुसरा भी मिथिला का माहात्म्य तुमको कहतेहैं जिसको श्रवण करने से ब्रह्महत्यादि पापसे पुरुष छूट जाताहै यमुना और दुग्धवती तीर्थ के अभ्यन्तर में जो मनुष्य आधा पलभी निवास करताहै वह सर्व पाप को भस्म करके परम

पापानि प्रयांति परमं पदम् ॥१॥ यत्र प्रयांति रसिकाः रामार्पितधियोऽनिशम् ॥ ब्रह्मणोपि भवस्यापि योगिनामपि दुर्लभम् ॥२॥ यद्धामरघुनाथस्य मायातीतं नीरंजनम् । पलार्द्धवासिनस्तत्र गच्छंत्येव न संशयः ॥३॥ यमुनादुग्धवतीमध्ये वासेन लभते फलम् तयोरन्तर्गतोयस्तु ब्रह्महापितृहाऽपि वा ॥४॥ दिव्यरूपम-

पदको प्राप्तहोताहै ॥१॥ मिथिलामें पलार्द्ध जो निवास करताहै वह मायातीत अर्थात् माया से रहित व निरुज अर्थात् दुःखादि रहित जो रघुनाथ का धामहै उसमें निवास करताहै इसमें संशय नहीं हैं ॥२॥ यमुना व दुग्धवती तीर्थ के अभ्यन्तर मेंजो मनुष्य वास करताहै वह ब्रह्महा

वा पितृहा होय तौ भी ब्रह्महा इत्यादि पापसे छूट जाता है ॥४॥ और दिव्य रूपको धारन करके निरामय अर्थात् जन्मबुढापा मरणआदि दुषसे रहित जो पदहै वहां प्राप्त होता है ॥५॥ और मिथिलामें जन्म लेकर मरनेकी इछा देवतालोगभी सबकालमें करते है और रोग पिडित जो मनु-

वाप्यैव गच्छेद्धामनिरामयम् ॥ कोटिजन्मार्जितैः पुण्यैर्बहुयज्ञैः स दक्षिणैः ॥५॥ विबुधाश्चापि मरणं तत्र वांछंति भक्तितः ॥ किमुतान्ये दुराधर्षाः कालादिग्रासिता नराः ॥६॥ अत्र ते कथयिष्यामि कथां पौराणिकीं शुभाम् ॥ यां श्रुत्वा प्राणिनः सर्वे मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषात् ॥७॥ तव प्रीत्या द्विजश्रेष्ठ लोकानां हितका

ष्य मर्त्यलोकमे है ॥६॥ उन को क्या कथाहै इस विषये में पौराणको कथा तुमको वर्णन करते है हे मैत्रय जिसके श्रवण करने से उत्तम दुस्तर संसारसमुद्रमे मनुष्य पार होताहै ॥७॥ मैत्रय तुम्हारी प्रीतिके अधीन होकर लोकके हितके लिये वर्णन करतेहै सावधानहोकर मन को एकाग्र

करके श्रवण करो ॥८॥ माहिष्मती नाम कोई नगरी थी उसमे तेजस्वी विष्णुके समान ॥ ९ ॥
ब्राह्मण कर्म में आसक्त दुसरेके मंगलको करने वाला विष्णुभक्ति से युक्त प्रतापमें सूर्य्यके समान

मयया ॥ सावधानेन मनसा शृणु विप्र कथामिमाम् ॥ ८ ॥ माहिष्मतीपुरे कश्चि
द्ब्राह्मणोवेदपारगः ॥ सुमित्र इति विख्यातस्तेजसा पावकोऽपरः ॥ ९ ॥ ब्रह्मकर्म
समायुक्तः परंश्रेयस्करःसदा ॥ विष्णुभक्तिपरःसाक्षात्प्रभयेव दिवाकरः ॥ १० ॥
आसीत्कृतयुगे तस्य प्रमदा च हरिप्रिया ॥ सुमित्रोपि स्त्रिया युक्तः सदार्चनरतो
हरेः ॥११॥ प्रत्यहं विष्णुचरितं सुमित्रोगाति तत्परः ॥ पुत्रास्तस्याभवन्विप्र च
त्वारः परमाद्भुताः ॥१२॥ सुशीलः सुमतिश्चैव धर्मपालोदुराशयः ॥ त्रयःपुत्राः

॥१०॥ और रात दिन अपनी स्त्री के साथ नारायणका नाम ॥११॥ वो गान करने वाला सुमित्र
नाम एक ब्राह्मण रहता था उसको विलक्षण विलक्षण चार पुत्र हुये ॥ १२ ॥ सुशील १ सुमति २

धर्मपाल ३ दुराशय ४ परन्तु इन चारों में सुसील आदि तीन पुत्र तो पिताके समान भया और
चौथा दुराशय ॥१३॥ वह दुराचार अर्थात् वेदोक्त आचार से रहित दुष्ट बात बोलने वाला नीच
नीच दान को लेने वाला पापको सर्वदा करने वाला मदिरापान करने वाला ॥ १४ ॥ नारायण

पितुस्तुल्याः कनिष्ठोयोदुराशयः ॥ १३ ॥ दुराचारी दुरालापी दुष्प्रतिग्रहभाक्
सदा ॥ दुष्कर्मनिरतःपापी जीवघाती सुरारतः ॥ १४ ॥ हरिनिंदापरा वेदनिंदको
द्विजहिंसकः ॥ वेश्यामांसरतोदुष्ट संगप्रियतमः सदा ॥१५॥ यावन्ति सन्ति पा-
पानि महदल्पानि यानि च ॥ दुराशयेन सर्वाणि दुरितानि कृतान्यलम् ॥१६॥
पित्रा जुगुप्सितं दृष्ट्वा गृहान्निःसारितः सुतः ॥ पुण्ये कुलेकलङ्कश्च महतापापिना

वो वेद पुराण शास्त्रको निन्दा करने वाला वेश्या स्त्री में आशक्त और विप्रबध करने वाला भया
॥१५। सबप्रकारके छोटे तथा बडे पाप उस पापीने किया ॥१६॥ तब पिता सुमित्रजी महाराजने

उस पुत्र को निन्दित देखकर अपने घरसे निकाल दिया क्योंकि वडाभागी पुण्यवान के कुलमें
यह पापी वडा कलंकी पैदाभया इस से सम्पूर्णकुल कलंकित हो जायगा ॥१७। एकही चन्दन का १४.
वृक्ष जिस वनमें रहताहै वह सम्पूर्ण वनको सुगंधित करताहै इसी भांति एक सपूत पुत्र जब कुल

कृतः ॥१७॥ एकोयदि सुवृक्षः स्याच्चन्दनस्य वने स्फुरन् ॥ गन्धयेत्सर्वविपिनं
सुपुत्रः स्वकुलं तथा ॥१८॥ एकोपि कोटरस्थाग्निर्भस्मसात्कुरुते वनम् ॥ यथा
तथा कुलं पुण्यं दुष्पुत्रोनाशयेत्क्षणात् ॥१९॥ इति संचिंत्यमनसा सुमित्रस्त्यक्त
 वान्सुतम् ॥ दुराशयोपि दुष्टात्मा जगाम गहनं वनम् ॥२०॥ वनाद्ग्रामं समा-

में जन्म लेताहै ता संपूर्ण कुलको उज्वल करताहै ॥१८॥ और जिस भांति सूखाभया वृक्ष अपने
खोढरके अग्नि से सपूर्ण वनको जरा कर खाक करदेताहै उसी भांति कुपुत्र जिस कुलमें उत्पन्न
होताहै उस कुल को कलंक स दूषित कर देताहै ॥१९॥ इस वात को विचार कर सुमित्र ब्राह्मण

ने अपने पुत्रको निकालदिया और दुष्टात्मा दुराशय ने भी अपने को घर से निकलाहुआ समझ
कर कठोरवन को प्रस्थान किया ॥२०॥ और वह दुष्टात्मा वन मे गांवमें आ२कर मनुष्यों के
धन को छीन २ कर लेजाताथा उसी धन के द्वारा गांवसे मदिरा खरीदकर और वनमें पशु

गम्यमुमोष प्रत्यहं धनम् ॥ तेनैव मदिरासक्तोमृगहिंसा परायणः ॥ २१ ॥ एवं
प्रकुर्वतस्तस्य बहुःकालोगतोद्विजः ॥ एकदा दुष्टहृदयो हिंसा कर्तुं वने गतः॥२२॥
तत्रैकोवपुषा श्रेष्ठोव्याघ्रोऽपि दैवप्रेरितः आगत्य तं दुरात्मानं गृहीत्वाऽभक्षय-

पंक्षियों को मार कर मास खाया करे इसी भांति अपने शरीर को पालन करताथा ॥२१॥
इसी भांति जब बहुत दिन बीतगया तब एक समय वह दुष्टाशय दुराशय नामक जो ब्राह्मण
था वह जीवोंको मारने के लिये वनमेंगया ॥२२॥ वहां कालवश से बड़ाभारी एक बाघ पहु-
चा और वह आकर दुराशयनामक जो ब्राह्मण था उसको खागया ॥२३॥ उसके भक्षन करने के

समय में एक मांस का टुकड़ा खर में लग गया था उसको कौओं ने खाने के लिये आरंभ किया ॥२४॥ उसी समय में दूसरा भी कोइ कौआ वहां आया और खाने के लिये उन कौंवोसे मांस का टुकड़ा मांगा इसी अनन्तर में वे कौव मासके टुकड़ लेकर वनके तरफ भागचले ॥२५॥ फिर वह

च्छनैः ॥२३॥ भक्षणे मांसखण्डानां तृणष्वेकं पपातच ॥ पश्चात्काकोपितत्खण्डं गृहीत्वा भोक्तुमारभत् ॥२४॥ तत्रान्यकाकस्तं दृष्ट्वा देहि देहि तमब्रवीत ॥ सोपि मांसं समादाय धावन्वेगाद्वनं प्रति ॥ २५॥ धावन्तमनुधावंस्तं प्रयातोमांसलंपटः ॥ वनाद्वनांतरं गच्छन्देशाद्देशान्तरं गतः ॥२६॥ संप्राप्तोमिथिलामध्ये काको

भी मांसका लालची कौवा उन कौवों को मांस छीनने के लिये खदा वह भी मांसके टुकड़े को लेकर दूर उत्तरदिशा में भाग आया ॥२६॥ भाग कर मिथिलादेस में पहुंचा और उन कौवों को मांस का खण्ड नहीं दिया फिर वह भी काक मांसके लालच बश हाकर पुण्य भूमि

मिथिला में पहुंचा ॥ २७ ॥ फिर जहां दुग्धवती तीर्थ और जमुनातीर्थ हैं वहां आकर दोनों काक आपस में युद्ध करने लगे ॥२८॥ जब दोनो काग युद्ध में अत्यन्त आसक्त हो गये तब

मांसं न दत्तवान् ॥ सोप्यन्वगच्छन्मांसार्थी मिथिलां पुण्यभूमिकाम् ॥ २७ ॥
यत्र दुग्धवती पुण्या यमुना च शरिद्वरा ॥ आजग्मतुस्तयोर्मध्ये काकौ युद्धं प्र-
चक्रतुः ॥२८॥ युद्धासक्तमुखान्मांसं पपात धरणीतले ॥ यमुनादुग्धवती मध्ये
पूर्वपुण्य प्रभावतः ॥२९॥ तेनपुण्यप्रभावेन सर्वकल्मषमंदिरः । पापिष्टोपि क्षणा-
द्व विमुक्तः सर्वपातकैः ॥३० कोटिकंदर्पसदृशः सर्वाभरणभूषितः दुराशयो-

काक के मुख मे मांस का टुकडा जमीन में गिरगया यमुना और दुग्धवती पुण्यतीर्थ के वीच में ॥२९॥ उस मांस के टुकडे को गिरने से दोनो तीर्थ के पुण्यप्रभाव से पापका घरजो दुराशय नामक ब्राह्मण था। वह छनहीं भर में सब पाप से मुक्त हो कर ॥ ३० ॥ कोटि काम के समान

१५०

सुन्दर और सब भूषणों से भूषित सुन्दर अङ्ग प्रत्यङ्ग होकर ॥३१॥ उत्तम विमान उपर चढगया
और गन्धर्वादि स्तुति करने लगे और अप्सरा लोग उस के सामने नृत्य करने लगी ॥३२॥

भवच्छीघ्रं दिव्यकायोऽतिसुन्दरः ॥३१॥ विमानवरमारुह्य स्तूयमाऽमरैर्मुहुः
उपगीयमानोगंधर्वैरप्सराभिः समं ततः ॥३२॥ हर्षितोपि गतोधाम पुनरावृत्ति
वर्जितम् ॥ इति ते कथिता विप्र कथा सार्वाघनाशिनी ॥३३॥ इति श्रीवृहद्वि-
ष्णुपुराणे मिथिलामहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

मैत्रेय उवाच ॥ मिथिलायां त्वयोक्तानि नदीकूपसरांसि च । जलाशयानि

इसी भाँति नाना प्रकार के आनन्द को करते हुये जिस स्थानमें प्राप्तहोने से फिर जन्म नहीं
होता उस स्थान को प्राप्त हुआ हे ब्राह्मण मैत्रेय संपूर्ण अघको नाशकरनेवाली यह कथा हमने
तुम से वर्णन किया ॥३३॥ इतिश्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्येषड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥१४॥

दोहा नीमिवशिष्ठशापितपुनि मंथनमिथि अवतार, पंचदशः अध्यायमें रामायणसुखसार ॥१५॥

फिर मैत्रेयजी पराशरजीसे पूछते हैं हे महाराज मिथिलामें जितनीं नदियां है और जितने कूप हैं और जितने तालाव हैं और भी जितने जलाशय हैं इन सबों को आप वर्णन किया परन्तु

यान्येव तेषां स्नानेन किं फलम् ॥१॥ विशेषेण मम ब्रूहि यदि ते मय्यनुग्रहः । कथामृतरसास्वादे तृष्णा मेतीव वर्द्धते ॥ २ ॥ गङ्गासागरमाहात्म्यं निमेर्देहस्य मंथनम् ॥ चरित्रमद्भुतं पुंसां लोकानां विस्मयप्रदम् ॥३॥ शापितस्य शरीरस्य

इन सबों में स्नान करने से क्या फल होताहैं ॥१॥ यह आप वर्णन करिये हे महाराज इस में जो कुछ विशेष है वह भी मेरे ऊपर कृपा कर के कहिये आपके मुख से निकला हुआ जो कथा रूपी अमृत उस को पान करनेसें तृप्ति नहीं होती किन्तु तृष्णा अधिक वढती जाती हैं ॥२॥ लोकमें आनन्द को देने वाले गंगासागरका माहात्म्य और पुरुषों का विस्मयका देनेवाला शाप से

युक्त जो राजा निमि का शरीर है उसके मंथनका जो चरित्र है वह मुझ से वर्णन करें ॥ ३ ॥ अ० १५
किस भांति सें उन के शरीर को मुनिलोग मन्थन किया और वशिष्ठ के शाप से किस भांति
विदेहता को प्राप्त हुये ॥४॥ और किस भांति से निमि के शरीर को मन्थन करने से अतिधार्मि

मुनिभिर्मंथनं कृतम् । वशिष्ठेन कृतः शापस्तद्देहोदुर्गतिं गतः ॥४॥ कथं तद्देह-
मथनान्मिथिर्जातोऽतिधार्मिकः । तत्कुले कथमुत्पन्ना सीता सर्वेश्वरेश्वरी ॥५॥
चाण्डालाद्दुष्कृतात्सर्पात् ब्राह्मणाद्वैद्युतादपि । दंष्ट्रिभ्यश्च पशुभ्यश्च वृक्षादिपत-
नान्मृताः ॥६॥ यांति तेनरके घोरे ये च म्लेक्षादिभिर्हताः । न तेषां कारयेद्दाहं

क मिथिराजा उत्पन्न हुये और उन के वंसमें किस भांति सब जनों की ईश्वरी सीता महारानी
उत्पन्न हुई ॥५॥ यह सब कथा आप यथावत् मुझ से वर्णन करे और चाण्डाल के मारने से जल
में डूबने से सर्पके काटने से ब्राह्मणके शाप से ॥ बिजुली से मरने से पशु से वृक्षपतन से जिन

की मृत्यु होती है ॥६॥ वे घोर नरकमें प्राप्त होते हैं और म्लेक्ष (जवन आदि) मे जिनकी मृत्यु होती है वे भी घोर नरकमे निवास करतेहैं उन लोगोंका स्पर्श और सूतक उदकक्रिया न करे ॥७॥ ये बातें धर्मशास्त्रमें कहीहुई है और हमलोग सुनते भी हैं तब हे महाराज पराशरजी कैसे मुनि

सूतकं नोदकक्रियाम् ॥७॥ इत्यादि शास्त्रकथितं बहुधा श्रूयते मया । तत्कथं तच्छरीरस्य मथनं मुनिभिः कृतम् ॥८॥ एतन्मे संशयं ब्रह्मन्विस्तरात्ब्रूहि मे गुरो एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य ततोवक्तुं प्रचक्रमे ॥ ९ ॥ श्री पराशर उवाच ॥ साधुपृष्ठं त्वया वत्स सर्वलोकहिताय च । कथयिष्याम्यहं सर्वं संक्षेपाच्छृणु तत्वतः ॥१०॥

लोग राजा निमिके शरीरका मन्थन किया ॥ ८ ॥ यह मेरे को संशय उत्पन्न होता है ब्राह्मण पराशर इस कथा को आप विस्तार पूर्वक वर्णन करें मैत्रेय के इस वचन को सुन कर श्रीपराशर जी बोले ॥९॥ हे मैत्रेय तुमने अच्छा पूछा जिससे सबलोगों का उपकार हो हम भी तुमको

यथार्थवात संक्षेप करके कहते हैं तुम श्रवण करो ॥१०॥ एक समय वशिष्ठ मुनिने राजा निमि को शापदिया तव राजा निमिने भी वशिष्ठको शाप दिया इस भांति परस्पर शापसे विदेहभावको प्राप्त होकर वायु को भोजन करते हुये आकाश में रहने लगे ॥११॥ दोनोंका आकाश में भ्रम

वसिष्ठेन यदा शप्तो राजर्षिरपि सप्तवान् ॥ विदेहत्वं द्वयोरासीद्वायुभूतौ नभःस्थले ॥११॥ भ्रमंतौ वीक्ष्यसहसा देवा विस्मयमाययुः ॥ तदा देवाज्ञया राजा प्राणिनां निमिषे स्थितः ॥१२॥ वसिष्ठोपि तथा सद्यः कलशाभ्यांतरं गतः ॥ ब्रह्मपुत्रोह्यभूत्तस्माद्ब्रह्मर्षित्वमुपागमत् ॥१३॥ ततोमुनिगणाः सर्वे तपोवनस-

ण करते हुये देखकर देवतालोग बहुत आश्चर्य्यित हुये तव देवताओं की आज्ञा पाकर राजा निमि ने प्राणियों के पलक में प्राप्त हुये ॥१२॥ वशिष्ठजी भी देवतावों की आज्ञा पाकर कलश के मध्य में निवास किया इस लिये ब्रह्माका पुत्र ब्रह्मर्षि हुये ॥१३॥ वाद इसके सव मुनिलोग

तपोवनमें एकट्ठा होकर विचार करने लगे राजाके नही रहने से तपस्या यज्ञ आदि कर्म्म किस भांति सम्पन्न होगें ॥१४॥ इस वात को विचार कर सवमुनिलोग यथा गौतम जाज्ञवल्क्य विश्वा

दास्थिताः ॥ अराजके कथं कुर्म्मस्तपोयज्ञादिकाः क्रियाः॥१४॥ इति संचिंतय न्तस्ते साधवः समदर्शिनः ॥ गौतमोयाग्यवल्क्यश्च विश्वामित्रोभृगुस्तथा ॥१५॥ भारद्वाजोथवाल्मीकिर्ये ते तत्र समास्थिताः शरीरमथनार्थाय सर्वे तत्र समागता ॥१६॥ वामदेवोशितः कण्वश्चागस्त्योभार्गवस्तथा दृष्ट्वा देहं सकलुषं ब्रह्मशापेन संयुतम् ॥१७॥ अस्पृश्यत्वं च विप्राणां ध्यात्वा श्रुत्वा हरिंप्रभुम्

मित्र भृगु ॥१५॥ भरद्वाज वाल्मीकि आदि जो तपोवनके रहने वाल मुनिलोग जोर राजा निमि के शरीर मंथन करने के लिये आये थे ॥ १६ ॥ वामदेव असित कण्व अगस्त्य भृगु इत्यादि सव वे ब्राह्मण के शापसे युक्त शरीर के देख कर ॥१७॥ ब्राह्मणों के स्पर्शके योग्य नहीं समझ कर ना

रायणको ध्यान और स्तुति करने लगे तब भक्तवत्सल नारायण प्रसन्न हो कर सनकादि ऋषि तथा लक्ष्मीके साथ गरुड के ऊपर सवार होकर जहां मुनिसब थे वहां आये ॥१८॥ श्रीनाराय ण बोले हे मुनिलोग हम आपलोगोंकी स्तुति से प्रसन्न हुये ॥१९॥ आप लोगों की जो कुछ

तत्र प्रसन्नो भगवान् गरुडोपरि संस्थितः ॥१८॥ श्रिया सह समायुक्तः सनकादिभिरन्वितः ॥ तत्रागत्याब्रवीद्विष्णुस्तान्मुनीन्भक्तवत्सलान् ॥ १९ ॥ भवतां स्तुतिवाक्येन तुष्टोहं मुनिपुंगवाः ॥ यद्वांछितं भवाद्भिश्चसुदुर्लभमपिक्षणात् २० साधयिष्ये न संदेहो ब्राह्मणा मम बांधवाः ॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य हरेरद्भुतकर्मणः

इछा है उसको आपलोग प्रकाश करें वह यदि दुर्लभ भी हो तो भी उसको हम पूर्ण करेंगे ॥ २०॥ क्यों कि इसमें कोई सन्देह नहीं हैं क्योंकि ब्राम्हणलोग हमारे बान्धव हैं आश्चर्यकर्म्म को करनेवाले नारायण की यह वाणी सुनकर ॥२१॥ ऋषिलोगों ने उठकर नारायणको साष्टांग

१५७

दण्डवत् किया तब अपने शिरको झुकाकर हाथको बांधकर मुनिलोग बोले ॥२२॥ कि हे महाराज
आप के चरणकमलों के दर्शन से हमलोग आज कृतार्थ हुये तथापि थोड़ा काम हमलोगों का

॥२१॥ प्रणेमुस्ते समुत्थाय साष्टांगं चरणाम्बुजे ॥ ततः प्राञ्जलयः सर्वे प्रोचुस्ते
नतकन्धराः॥२२॥ कृतार्थाःस्मो वयं सर्वे त्वत्पदाम्बुजदर्शनात् ॥ तथापि किञ्चि-
दस्माकं कार्य्यमस्ति पुरातन ॥२३॥ निमेः शरीरमथनं कर्त्तुमिच्छास्ति साम्प्र-
तम् ॥ अस्पृश्यश्चाशुचिर्देहो कथं शुध्यति हे प्रभो ॥२४॥ कृपां विना ते विश्वा-
त्मन्नैव दुःखं विद्यते ॥ एतद्वाक्यं समाकर्ण्य भगवान्सरितां पतिम् ॥२५॥ अ-

रह गया है ॥२३॥ इसलिये इस समय में राजा निमि के शरीर को मथन करने की इच्छा है
परन्तु राजा निमि का शरीर स्पर्श (छूनेके) योग्य नहीं है और अशुचि है अर्थात् अपवित्र है
हे नारायण किसभांति हमलोगों की शुद्धि होगी ॥२४॥ मुनिलोगों की यह बात सुनकर नारा-

यण ने समुद्र को स्मरण किया ॥ २५ ॥ तव सुन्दर शरीर धारणकर समुद्र आये जिसके वायें तरफ गंगाहैं और दहिनेतरफ जमुना हैं ॥२६॥ और पीठ के तरफ पुण्यको देनेवाली जितनी

स्मारयत्तदा तत्र स्वागतोदिव्यरूपधृक् ॥ वामपार्श्वे स्थिता गंगा दक्षिणे यमुना तथा ॥२६॥ पृष्ठे च सरितःसर्वाः दिव्यरूपाः समागता ॥ कोटिब्रह्माण्ड मध्येतु यानि तीर्थानि संति वै ॥२७॥ तत्रागत्य च सर्वाणि सरितः सागरास्तथा ॥ अग्रे स्थितानि तीर्थानि विष्णोः प्रीतिकराणि हि ॥२८॥ ततोमुमुदिरे सर्वे मुनयः साधुवादिनः ॥ जयशब्दोनमःशब्दस्तुमुलोभून्महध्वनिः ॥२९॥ तदा

नदियां हैं वे सभी आई हैं और भी ब्रह्माण्डमें जितने तीर्थ हैं वे सबभी वहां प्राप्त हुय ॥२७॥ परन्तु हे नारायण आपकी कृपाविना ये सब इस दुःखसे उद्धार नहींकरसकते अनन्तर विष्णुभगवान के प्रसन्नकरने के लिये जितने तीर्थ आये थ ॥ २८ ॥ उनको देखकर सत्यवादी मुनिलोग

परम हर्षको प्राप्तहुये और जयशब्द और नमःशब्दको उच्चारण करनेलगे यह सब शब्द मिलकर बडाभारी शब्दहुआ ॥२९॥ इस समयमें विष्णुको अन्न पाकर मुनिलोग समुद्र गंगा आदि तीर्थों के पवित्र जल से ॥३०॥ राजा निमि के शरीर को धालवाकर मथन करनेलगे मथन के बाद

ज्ञया भगवतोमुनयःसंशितव्रताः ॥ गंगाब्धिसलिलैः पुण्यैस्तथा तीर्थोदकैः पुनः ॥ ३० ॥ निमेर्देहं स्नापयित्वा ममन्थुर्देववाक्यतः ॥ मन्थनात्तस्य देहस्य मिथिनाम नृपोऽभवत् ॥३१॥ पुष्पवृष्टिःपपातोच्चैर्ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ देवदुंदुभयोनेदुस्तुष्टुवुः सिद्धचारणः ॥३२॥ तत्रोत्सवे महातीर्थे गंगासागरकप्रभुः ॥

१६० उस शरीर से मिथि नामक राजा उत्पन हुआ ॥ ३१ ॥ तव आकाशमे पुष्पकी वृष्टि होनेलगी अप्सरालोग नाच करनेलगी और देवतालोग नगाड़ा वजानेलगे सिद्धिचारणलोग स्तुति करने लगे ॥३२॥ उस समयमें महापुण्यस्थान जो गङ्गासागरहै वहां समुद्र और गंगाआदि नदी और

तालाब आदि जितने तीर्थ हैं ॥३३॥ उन सभों में नारायण स्तुति को पाकर श्रीविष्णुभगवान
अन्तर्ध्यान हुये और समुद्र गंगा आदि नदी श्रीविष्णुभगवान की स्तुति और प्रणामकरके ३४

सागरञ्च नदीं गंगां सरितश्चसरांसि च ॥३३॥ तीर्थानि चाप्यनुज्ञाप्य स्वयमन्तर्दधे हरिः ॥ स्तुत्वा नत्वा हरिंसर्वे सागराद्या जलाशयाः ॥३४॥ स्वं स्वं जलं च संस्थाप्य तत्रैवान्तर्ययुस्ततः ॥ ब्रह्माद्या देवताश्चैव स्नात्वा स्तुत्वा गता दिवम् ॥३५॥ ततोमुनिगणास्तत्र गंगासागरकजले स्नात्वा स्तुत्वागताः स्थानं स्वं स्वं तेपि मुनीश्वराः ॥ ३६ ॥ तस्मात्सर्वाणि तीर्थानि सरितश्चसरांसिच ॥

अपने२ जल को वहां स्थापन करके अन्तर्ध्यान होगये और ब्रह्मा आदि देवताओंने भी वहाँ स्नान और स्तुतिको करके स्वर्ग चलगये ॥३५॥ अनन्तर गौतम आदि मुनियों ने भी गंगासागर के जल में स्नान और स्तुति को करके अपने२ स्थानको प्रस्थान किया ॥३६॥ जिस गंगा

सागर के संगम में गंगाजी के जल से जितने पातक हैं वह नष्ट होते हैं और जितने तीर्थ हैं उन सबमें गंगासागर तीर्थ उत्तमहै पवित्रहै और सबपापको विनाश करनेवाली हैं ॥३७॥ जिस गंगासागरके जलको स्पर्शकरने (छूने) से ब्रह्महत्यादि जितने पातक हैं वह सब छुटजाते

तिष्ठंति सर्वदा तत्र गंगासागरके जले ॥३७॥ तज्जलस्पर्शनात्सद्यो ब्रह्महत्यादि पातकात् मुच्यते नात्र संदेहोविष्णुलोकं सगच्छति ॥३८॥ गांगेयं सलिलं यत्र सर्वाघौघनिवारणम् ॥ सर्वतीर्थमयं तीर्थं पवित्रं भुवि दुर्लभम् ॥३९॥ सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वक्षेत्रेषु यत्फलम् ॥ तत्फलं समवाप्नोति गंगासागरदर्शनात् ॥४०॥

हैं और मनुष्यदेह को त्याग करने के बाद विष्णुलोक में जाताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ३८॥ सम्पूर्णतीर्थ मे भ्रमण करने से और स्नान करनेमे जो पुण्य होता है और क्षत्रों में स्नान करने म भ्रमण करने से जो पुण्य होताहै वह पुण्य गंगासागर के दर्शनही से होता है ॥ ४० ॥

बहुत जन्मका कियहुआ जो पापहै वह गंगासागर के दर्शन स्पर्श और स्नान से छूट जाताहै
इसमें कुछभी सन्देह नही है ॥४१॥ जेष्ठशुक्ल दशमी में देवतागण और मुनिगण तथा नारदादि

कोटिजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥ दर्शनात्स्पर्शनात्स्नानान्मुच्यते
नात्र संशयः ४१ ज्येष्ठशुक्लदशम्यां तु ब्रह्माद्या देवतागणाः। स्नानार्थं तत्र गच्छंति
मुनयो नारदादयः॥४२॥ यस्मान्महोत्सवस्तत्र तस्मिन्नेव दिने भवेत्। तस्मात्सर्व
जनैः कार्य्याः स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥४३॥ किं जपैः किं तपोभिश्च किं व्रतैः
साधनैरपि। तीर्थाटनैश्च दानैश्च किं शरीरादिशोषणैः॥४४॥ सर्वेषां फलमाप्नोति

स्नानके लिये गंगसागरको जाते हैं॥४२॥ जिस लिये ज्येष्ठशुक्लदशमी को सम्पूर्ण तीर्थ और सम्पूर्ण
ऋषि मुनिगण तथा ब्रह्मादि देवगण उसी तिथिमे इकट्ठे होते हैं इसलिये सब जनोंको उचित है
कि स्नान ध्यानादि कर्म्म उस मास और उस तीथिमें करें ॥४३॥ जप करनेसे और तप करने से

तथा विविधसाधन करने से और तीर्थाटन दान योग करने से जो फल होताहै ॥४४॥ वह गंगा सागरके दर्शन से होता है श्रीविष्णुभगवान कहते है कि गंगासागर में स्नान दान तप आदि का फल हम नहीं कह सकते ॥४५॥ एक वार स्नान करने से भी पुरुष मुक्त होता है इस में

गंगासागरदर्शनात् । किमन्यद्बहुनोक्तेन जल्पितेन पुनः पुनः ।४५। स्नानदानजपादीनां फलं वक्तुं न शक्यते । सकृत्स्नानेन मुक्तिःस्यान्नात्र कार्य्या विचारणा ॥४६॥ गंगाब्धिसलिले स्नात्वा दृष्ट्वा विष्णोः पदांबुजम् ॥ ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥४७॥ गंगासागरकीर्त्तनात्स्मरणतः स्नानं च पानं तथा ।

कुछ सन्देह नहीं करना ॥४६॥ गंगासागरके जल में स्नान करके श्रीविष्णुभगवान के चरणकमलका दरशन करने से ब्रह्महत्या आदि पापों से मनुष्य छुट जाता है ॥४७॥ श्रीगंगासागरका कीर्तन मनन स्नान यात्रा ध्यान नेत्र से जलका दर्शन स्पर्शन प्रणाम करने से ॥४८॥ अनेक

जन्मके किये हुए पातक से छुटकर इस लोक में उत्तम सुखको भोग कर देवता राक्षस गन्धर्व आदिको दुर्लभ जो विष्णुभगवान की पुरी है वहां वह पापी जाकर के आनन्द करता है ॥४९॥

ध्यानात्तज्जलदर्शनाच्च नयनैः संस्पर्शनाद्वन्दनात् ॥४८॥ मुक्तापापमनेक जन्म सुकृतं भुक्त्वाचभोगादिकान् । गत्वा विष्णु पुरीं सुरासुरनुतां पापीजनोराजते ४९ एतत्तेकथितं विप्र गंगासागरवर्णनं । यःपठेच्छृणुयाद्वापि मुच्यते कोटिकिल्बिषात ॥ ५० ॥ ❀ ॥ इति श्री वृहद्विष्णुपुराण मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेय सम्वादे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

हे मैत्रेय यह गंगासागर का माहात्म हमने तुमसे वरणनकिया पराशरजी कहते है इसको जो पढता है तथा श्रवण करताहै वह कोटि२पातकसे छूटजाताहै ॥५०॥❀॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥१५॥ ॥ ❀ ॥

दोहा । जनक सरोवर महत्त कहिय: षोडसअध्याय, धर्मदत्तकृत वरण्यो रामायण विलगाय १६
अब फिर मैत्रेयजी पराशरजी से पूछते हैं कि हे महाराज जनक का भी शरोवर है उसका माहात्म्य वर्णन करिये उसमे स्नान करनेसे क्या पुण्य तथा क्या फल होताहै ॥ १ ॥ पाराशरजी

मैत्रेय उवाच ॥ जनकस्यसरोप्यास्ति माहात्म्यं वद मे गुरो । तस्मिं स्नानेन किं पुण्यं किं फलं प्राप्नुतेजनः ॥ १ ॥ श्री पराशर उवाच ॥ जनकस्य सरो दृष्ट्वा यत्फलं लभतेनरः ॥ तदहं संप्रवक्ष्यामि श्रुत्वापापात्प्रमुच्यते ॥ २ ॥ ब्रह्महा पितृहाचैव गोत्रहागुरुतल्पगः । मुच्यते किल्विषैः सर्वैः दृष्ट्वा जनकसाग-

कहे । हे हे मैत्रेय जनकके शरोवर का दर्शन करनेसे जोफल मनुष्यलाभ करताहै वह हम तुम से कहते हैं जिसके श्रवण करने से मनुष्य पवित्र होताहै ॥२॥ ब्रह्माहाहो पितृहाहो वा गुरुतल्पगहो वहभि यदि जनकके शरोवरकी दर्शनकरे तो सबपातक से मुक्तहोजाय ॥३॥ हे मैत्रे

य इस विषय में पुराणकी कथा हम तुमको सुनाते है जिसके सुनने से पुरुष मुक्तिको लाभ करता है ॥४॥ पहिले सतयुगमें कपिलनाम नगरमें धर्म्मदत्त नामक एक वडा धर्म्मातमा राजाहुआ॥५॥

रम् ॥३॥ तत्रैवोदाहरिष्यामिचेतिहासं पुरातन । यच्छ्रुत्वासर्वपापेभ्यो मुक्तो भव-
तिमानवः ॥४॥ पुराकृतयुगे कश्चित्कांपिल्ये नगरे शुभे ॥ धर्मदत्तइति ख्यातो
राजापरमधार्मिकः ॥५॥ नीतिमान्गुणसंपन्नः शास्त्रतत्वार्थकोविदः । प्रजानांपा-
लनेशक्तो गोब्राह्मण हितेरतः ॥६॥ तस्यायुत सहस्राणि स्त्रियः परमशोभनाः ।
रूप शीलगुणैर्धन संपन्ना यौवनेस्थिताः ॥ ७ ॥ यासां रूपेण शीलेन लज्जिता

वह नीतिको जानने वाला सब गुणोंसे सम्पन्न सब शास्त्रके अर्थको जानने वाला प्रजाकी रक्षामें तत्पर गो ब्राह्मणकी रक्षा करनेवाला था ॥६॥ उसको दशहजार स्त्रियां थीं वे परम सुन्दरी और सब रूप शील गुणसे युक्त तथा युवा अवस्था को प्राप्तथीं ।७। जिनकी सुन्दरता और शीलसे कोटि२

काम लज्जित हो उन सब स्त्रियोंके बीचमें रन्ति देवी नामसे प्रसिद्ध जोथी ॥८॥ वह सब स्त्रियोंमें अतीव सुन्दरी और पतिव्रता थी जिसमें राजा धर्म्मदत्त अतीव आसक्त था ॥९॥ वह राजा काम

रतिकोटयः ॥ ता सां मध्ये रंतिदेवी नाम्नी च भुविसुन्दरी ॥८॥ अतीव रूप संपन्ना पातिवृत परायणा ॥ तस्यामतीवसंसक्तो कामीराजा दिवानिशम् ॥९॥ उदयास्तं न जानाति सूर्य्यस्यरतिमोहितः ॥ राज्यादिकं परित्यज्य रंतिदेव्या सहास्थितः ॥१०॥ क्रीडासक्तो वशीभूतो न किंचिदपि वेत्ति सः ॥ राज्ञोवृत्तं श्रुतं सर्वं शत्रुभिश्चापिचारकैः ॥११॥ एकमन्त्रमुपागम्य राज्ञो राज्य हृतं नृपैः ॥ शत्रु

मोहित होकर कब संध्या होताहै और कब प्रात होताहै यह नहीं जानता था अपने राजकाज छोड कर सतत रंतीदेवीके पास बैठा रहता था १० क्रीड़ामें अत्यन्त आसक्त होनेसे और रंतीदेवीके वश में होजानेसे कर्त्तव्य अकर्त्तव्य कुछनहीं विचारता था यह बात जब दूतोंसे और राजाओंको मालूम

हुई ॥११॥ तब उनने आपसमें सलाह करके धर्म्मदत्त का राज्य छीन लिया। और उसको राज्य से निकाल दिया ॥ १२ ॥ वह राजा बड़ेभारी भयसे युक्त होकर अपने राज्यको छोड़कर स्त्री

भिः पुरराष्ट्राणि हृतानि निखिलानि वै ॥ १२ ॥ महाभयसमायुक्तो राज्यं त्यक्त्वा पुरं स्वकं ॥ रन्ति देव्या स्त्रियाःसार्द्धं वने राजा पलायितः ॥१३॥ क्षुधा पिपासयायुक्तो नाग्रे गन्तुं स शक्तिमान् ॥ तस्मिन्नेव वनेघोरे दुष्ट शत्रु निवर्हणे ॥१४॥ क्षुधयापीडितो राजा व्याकुलात्मा सुशोचह ॥ कमुपायमहं कुर्य्यां येन क्षुच्छान्ति माप्नुयाम् ॥ १५ ॥ चिन्तयन्वहुशो राजा निश्चयं नाध्यगच्छ

रन्तीदेवी के साथ वनमें भागचला ॥१३॥ इसी भांति चलतेहुए अति भूष और प्याससे पीड़ित होकर जब नहीं चलसका तब उस घोर वनमें क्षुधासे पीड़ित होकर शोचने लगा ॥ १४ ॥ मैं कौन उपायकरूं जिससे मेरी क्षुधा और तृषा शान्तहोय ॥१५॥ इसी भांति राजा वहुत सोचता

हुआ जब कोई निश्चय नहीं ठहराया तब फिर अपने मनमें विचार करनेलगा कि मैं अपनी इसी प्रिया को मारकर ॥१६॥ इसके मांससे अपने क्षुधाको समनकरू लज्जासे रंतिदेवी से कहता नहीं था और वारं वार रंतिदेवी को देखता था। १७॥ रंतिदेवी राजा धर्म्मदत्तके मनकी बात

त ॥ मनसा चिन्तयन् भूयो हिंसितुं स्वां स्त्रियं प्रियां ॥ १६ ॥ हत्वे मां मांसमस्याहि खादित्वा तृप्तिमाप्नुयाम् ॥ लज्जया नैव तां ब्रूते पुनः पुनः समीक्षते ॥ १७ ॥ बुबोध नृपतेर्वृत्तं रन्तिदेवी जहर्षसा ॥ अहोभाग्यमहोभाग्यं स्वामिनोर्थे तनूरियं ॥ १८ ॥ व्ययमाप्नोति का धन्या योषिदन्या भवेद्भुवि ॥

को जानकर वहुत खुसहुई और अपने भाग्यको सराहने लगी कि धन्य हमारा भाग्यहै कि जो इस शरीरसे हमारे स्वामीका मनोरथ सिद्धहोगा ॥१८॥ और यदि स्वामीके लिये यह हमारा शरीर नष्टहोय तो हमसे कौन दूसरी स्त्री पुण्यवाली होगी इसको विचारकर खुसीके सहित पति

१७०

व्रता रन्तिदेवी अपने स्वामीसे बोली ॥ १९ ॥ कि हे नाथ कृपासिन्धो आपने जो अपने मनमे विचाराहै सो आप मेरे ऊपर बहुत कृपाकी है ॥ २० ॥ क्योंकि इस हमारे देहको कुत्ते खाजायगे

प्राप्तान्स्वामिनं दृष्ट्वा रन्तिदेवी पतिव्रता ॥ १९ ॥ रन्तिदेव्युवाच ॥ भो भो नाथ कृपासिन्धो चिंतितं हृदये त्वया ॥ ममोपरि कृपा स्वामिन्महतीचास्ति तत्र वै ॥ २० ॥ देहो मे कुक्कुरैर्वापि शृगालैरग्निनापि वा ॥ भक्षितव्योऽत्र किं स्वार्थं भविष्यति पते मम ॥ २१ ॥ भवदर्थे यदि प्रभो शरीरं व्ययमेष्यति ॥ नास्ति धन्य तमा लोके मत्तो नान्ति शुभापरा ॥ २२ ॥ शीघ्रं गृहाण त्वं खड्गं हिंसि मां माचिरं

या सियार खायजायगे या अग्निमे भस्मकरदेंगे इससे अच्छाहै कि आपही के काममे हमारा शरीर कामआवे ॥ २१ ॥ और हे स्वामिन् यदि आपके अर्थ में यह हमारा शरीर नष्टहोजाय तो इससे बढ़के भाग्यवती संसारमें दूसरीभी कोई नहीं है ॥ २२ ॥ हे महाराज आप जल्द तरवार

को लीजिये और हमको मारडालिये आपके तृप्तिहोनेसे अवश्य हमको स्वर्गहोगा ॥ २३ ॥ अव
पराशरजी मैत्रेयसे कहेकि हे मैत्रेय रन्तिदेवी के वचनको सुनकर पापी धर्म्मदत्तने तरवार लेकर

कुरु ॥ त्वत्तृप्त्यैव मम स्वामिन् स्वर्गोभवति निश्चितम् ॥२३॥ श्रीपराशर उवाच ॥ रतिदेव्या वचः श्रुत्वा खड्गमादाय सत्वरम् ॥ जघान पापनिलयः शुभां नारीं पतिव्रताम् ॥ २४ ॥ मांसं निर्माय नृपतिर्यदास्वादितुमारभत ॥ व्याघ्रा व्यात्तानना घोरा गर्जन्तोह्यागमन्द्रुतम् ॥ २५ ॥ मांसं त्यक्त्वा भयात्तेषां विद्रुतो नृपतिर्लघु ॥ दूरं गत्वा पतद्भूमौ चिरं संज्ञामवापसः ॥२६॥ एतस्मिन्नन्तरे विप्र

पतिव्रता रन्तिदेवी को मारडाला ॥२४॥ उसके मांसको वनाकर राजा जव खानेको आरंभ
किया उसी कालमें वडा व्याघ्र मुंहको वा वा कर गरजता हुआ वहां पहुँचा ॥२५॥ तव राजा
डरसे भागचला और कुछदूर जाकर व्याकुल होकर गीरपड़ा और मूर्छित होगया ॥२६॥ इसी

अनन्तर में राजा धर्मदत्त जब स्वचेतहुआ तब वेद वेदान्त जाननेवाला और मृगचर्म को धारण करनेवाला तथा अग्नी के समान प्रकाश वाला ॥ २७ ॥ और भस्म सर्वांगमें लपटे हुआ अ० १६

वेदवेदांग पारगान् ॥ मृगचर्म परिच्छिन्न देहान्पावक सन्निभान् ॥२७॥ भस्मो-
द्धूलित सर्वांगान् तेजसा दग्ध किल्बिषान् ॥ मौञ्जी यज्ञोपवीताढ्य न् आग-
च्छतो ददर्शसः ॥२८॥ धर्मदत्तोति दुष्टात्मा पूर्वकर्मप्रभावतः ॥ विचिंत्यसहसा
तत्र गतोनृपति रंतिके ॥२९॥ धर्म्मदत्त उवाच ॥ यूयमुचन्तु मे शीघ्रं युष्माकं
धनमस्तिचेत् ॥ अन्नं वा देहि मे सद्यो नोचेद्वैघातयामि वः ॥३०॥ ततस्तु ब्राह्मणा

तथा तपस्या से भस्महुआ है सब पाप जिसका और मूजकी मखलाको पहिरे हुय एक पुरुषको देखकर ॥ २८ ॥ धर्म्मदत्त उसके समीप में गया ॥ २९ ॥ धर्म्मदत्त बोला तुमलोग जलदी कहो तुमलोगके पास धन या अन्नहै यदि मुझको नहीं होग तो मैं तुमलोगों को तुरन्त मारडालूंगा ॥

३० ॥ बाद इसके तपस्या औ व्रतमें अत्यन्त आसक्त ब्राह्मण लोग धर्म्मदत्त से बोले हे राजन्
हमलोग तीर्थाटन करने लिये महिमें विचरते हैं ॥ ३१ ॥ हमलोगों के पास अंग में लगाने का
भस्म है और हमलोग कन्दमूल को भोजन करने वालेहैं और कुछ हमलोगों के पास नहीं है

प्रोचुस्तपोव्रतपरायणाः ॥ विप्र उवाचः ॥ तीर्थाटन प्रकुर्वंतोविचरामोमहीमिमां ॥३१॥ भस्मादि वसनाराजन्फलमूलोपहारकाः । किं ददामो वयं राजन् यथेच्छसि तथा कुरु।३२। तच्छ्रुत्वा क्रोधताम्राक्षः क्षुत्तिपपासादि पीडितः। नृपतिर्विह्वलो भूत्वा पतितः पुनरुत्थितः ॥३३॥ तदा नेनैव खड्गेन नृपेण हिंसिता द्विजाः।

तुम जो चाहो सो करो ॥३२॥ इन बातोंको सुनकर राजा क्रोधसे लाल लाल नेत्रको करके भूख
और प्यास से बहुत दुःखित होकर ॥ ३३ ॥ तरवार लेकर ब्राह्मणों के तरफ दौडा कितना मरतबे
जमीन में गिरा और फिर उठा इसभांति जहां ब्राह्मण लोग थे वहां पहुंचा और तरवार से उन

१७४

लोगोंके सिरको काटलिया ब्राह्मणों को मारनेके बाद जब राजाने कुछ धन नहींपाया तब बहुत प्रकार की चिन्ता से व्याकुल होकर क्षीण होगया ॥ ३४ ॥ इसी समय में पूर्व जन्मके पुण्यके

धनं न लब्धवान्किंचित् राजा चिंतापरायणः ॥३४॥ पूर्वपुण्यप्रभावेन नृपतेर्ज्ञान मुत्तमं । बभूव सहसा तत्र किं कृतं मे दुरात्मना ।३५। पतिव्रतानां पुज्यापि वनिता हिंसिता मया ब्राह्मणाब्रह्मकर्माणो हता विष्णुपरायणाः ॥३६॥ धिग्मांधिग्मांधि गिनिमां विवेक परिवर्जितम् । यमलोकंगमिष्यामि कदा मे निष्कृतिर्भवेत ॥३७॥ इत्यादि बहुशोराजा सुशोचशोक मानसः यत्र तत्र च धावन्वै नालभच्छर्मकिंच-

प्रभावसे राजाको ज्ञानहुआ तब राजा शोचने लगा हा मुझको धिक्कार है ॥ ३५ ॥ मैंने अपनी पतिव्रता स्त्रीको मारडाला और विष्णुभक्त तथा वेद वेदान्त को जानने वाले ब्राह्मणों को मार-डाला ॥ ३६ ॥ मुझको धिक्कार है धिक्कार है अवश्य मैं यमलोक में निवास करूंगा तब मेरा उद्धार

होगा ॥ ३७॥ इसभांति से बहुत सोच करताहुआ राजा बहुत जगह दौड़ा फिरा परन्तु उसका शोक शान्त न हुआ ॥ ३८॥ तो फिर घूमते घूमते दूसरे वनमें पहुंचा वहां उनको एक कुटी को देखा फिर जाकर शुभकर्मा नामक जो मुनी है उस मुनीको देखा ॥ ३९॥ मुनीनेभी

न ।३८। वनाद्वनान्तरंगच्छन्नपश्यदुटजं शुभं । तत्र गत्वा मुनिं दृष्ट्वा शुभशर्मेति नामकम् ३९ स्त्री विप्रघातकं दृष्ट्वा मुनिश्च विमुखोभवत् । राजा तत्संमुखो गच्छं पृष्टभागे कृतस्तदा ॥४०॥ मुनिनानेन संत्यक्तः पुनः सम्मुखमाययौ ॥ पुनः पृष्ठे कृतो राजा मुनरेवं पुनःपुनः ॥४१॥ पुनः सन्मुखतो राजा मुनेरेव पुनः पुनः । एवं

राजाको स्त्री और ब्राह्मण वध करनेवाला समझकर राजासे विमुख हुये तब फिर राजा मुनीके सामने आपहुंचा तब फिर मुनीने उसके मुखके तरफ पीठ करलिया ॥ ४० ॥ इस प्रकार मुनीने जब पापी राजाको तिरस्कार किया तबफिर राजा मुनीके सन्मुख हुआ फिर पूर्ववत् राजा उस

के तरफ पीठ करलिया कई एकवार राजा मुनीके तरफ अपना मुख लेगया परन्तु मुनीने राजा के मुखको नहीं देखा ॥ ४१ ॥ तब राजा मुनीके पृष्टभागको देखकर हाहा कार करके भुमिपर गिरपड़ा और मुर्छित होगया ॥ ४२ ॥ तब मुनिने राजाको पापी और ब्रह्मघाती समझकर कहा।

क्रमेण राजा तु परिक्रम्यमुनिंतदा।४२। मुखस्यदर्शनं नास्ति पृष्टभागंविलोकयन्। पपात मूर्छितो राजा हा हतोस्मिब्रुवंस्तदा।४३। ततो मुनिस्समालोक्य पापिनं ब्रह्मघातिनं। उवाच निष्ठुरंवाक्यं गच्छगच्छ वनंप्रति ॥४४॥ अत्रैववासस्थानं ते घातकस्य न विद्यते। इतितस्यमुनेर्वाक्यं श्रुत्वा राजातिपीडितः ॥४५॥ त्राहि

इवात घोस्ठ वह सुनकर अति पीडित हो राजा बोला मैं आपके शरणमें आयाहूं आप रक्षा करो आप रक्षा करो ॥४३॥ वाद इसके मुनिने दाया वस होकर राजा को दुःखित समझ कर राजासे वाले जावो जावो वनमे ॥ ४४ ॥ तू कौन है और किसहेतु से तू इसदशाको प्राप्तहै सो

अ० १६.

१७७

कह तब राजा ने पहिला जो वृत्तान्त है वह मुनी को कह सुनाया ॥४५॥ त्राहि त्राहि त्राहि मैं
शरणमें दुःखितहौं राजाको दुखित देखकर मुनिका दया प्रगट किया ॥४६॥ मुनि कहते हैं हे

त्राहीतित्राहीति त्राहिमांशरणागतं दुःखितंनृपतिं दृष्ट्वा करुणा पीडितोमुनिः ४६
प्रोवाच कस्त्वं केने मां दशांप्राप्तोसिप्रब्रूहिमां । पूर्ववृत्तं निजंराज्ञा कथितंमुनये
तदा ॥४७॥ नृपतेर्वचनंश्रुत्वा शुभशर्म्माब्रवीद्वचः । ध्यात्वासर्वं तु सर्वज्ञो करुणा
पूर्णमानसः ॥४८॥ मुनिरुवाच ॥ शृणुराजन्प्रवक्ष्यामि तव पापस्यशांतये । संतितीर्थान्यनेकानि मिथिलायां क्षितीश्वरः ॥४९॥ माहात्म्यंनैवशक्नोमि वक्तुंवर्षशत

राजन् इस दशाको तुम कैसे प्राप्त भया सो वर्णन करो तब राजा पूर्व वृत्तान्त मुनिसे कहते
भये ॥४७॥ राजाके वचनको सुनकर सब बातको ध्यान करके दयावान् शुभकर्म्मा नामक ॥४८॥
ब्राह्मण बोले हे राजन् आपके पापकी शान्तिके लिए जो कहताहूं सो सुनो मिथिला नामके

सब तीर्थके ईश्वर ॥४९॥ हे राजन् मिथिलामें नानाविध तीर्थ हैं उनका माहात्म्य सुनो यद्यपि मिथिला का माहात्म्य हजार वर्षमें भी कोइ नहीं कहसक्ताहै तथापि संक्षेपमें सुनो मिथिलामें बहुत पुण्य देनेवाला एक जनक सागरहै ॥५०॥ उसको देखने से तथा स्पर्श करनेसे कोटि२

तैरपि तत्रास्त्येकं शुभं राजन्तीर्थं जनकसागरम् ॥५०॥ दृष्ट्वा स्पृष्ट्वा नरः कोटि ब्रह्महत्यातिगो भवेत् ॥ गच्छ राजन्द्रुतं तत्र स्नानात्पापक्षया भवेत् ॥५१॥ मुनेश्च वचनं श्रुत्वा प्रोवाच विनयान्वितः ॥ धर्मदत्त उवाच ॥ विश्वासो नैव मे ब्रह्मन्

ब्रह्महत्यादि पातकसे मनुष्य छूट जाताहै हे राजन् आप वहां जाइये आपकी ब्रह्महत्यादि विविध जो पापहैं वे सब नाश होजायगें ॥ ५१ ॥ मुनिके इस वचनको सुनकर विनयके सहित राजा धर्मदत्त बोला हे मुनीश्वर मुझको विश्वास नहीं होताहै क्योंकि मैं बड़ाभागी पापीहूं किस भांति मेरा पाप नष्ट होगा ॥५२॥ पाप नष्टहोनका कोई चिन्ह बताइये जिसमें हम समझेंगे कि

मेरा पाप नष्टहुआ राजाकी यह बात सुनकर मुनि ने राजाके विश्वासके लिये एक काला कपड़ा
राजाको देकर यह बोले कि हे राजन् आप अपनी विश्वासके लिए यह मेरा बात सुनिए ॥५३॥
पाप बाहुल्यमस्तिमे ५२ कथं मत्पातकं नष्टं जानेहं द्विजसत्तम ॥ तच्छ्रुत्वा नृपते
र्वाक्यं दत्वा नीलपटं मुनिः॥५३॥ उवाच नृपतिं तत्र विश्वासार्थं तदावचः॥ शुभ
शर्म्मोवाच ॥ श्रूयतां नृपशार्दूल तव विश्वासकारकं ॥ ५४ ॥ जनकस्य सरो
दृष्ट्वा यदा नीलःसितो भवेत् ॥ तदेव त्वं विजानीहि पापं मे संक्षय गतम् ॥५५॥
इत्युक्त्वा विररामाथ वस्त्रं गृह्य गतो नृपः ॥ हृष्टः शरीर संधाय मिथिलांप्रति स-
 शुभशर्म्मा बोले हे राजन् तुम्हारे विश्वासके लिए सुनो ॥५४॥ श्रीजनकजीके सरोवर को देखने
से जब यह काला वस्त्र सफेद होजाय तब समझना कि हमारा सब पाप नष्ट होगया ॥५५॥ मुनी
इस बातको कहकर चुप होगये और राजानेभी काले वस्त्रको लेकर तुरत मिथिलापुरीको चले ५६

श्रीजनकजी के सरोवर को देखकर जव कालावश श्वेत होगया तव राजावहुत प्रसन्न हुआ और
साष्टाङ्गप्रणाम करनेलगा और पापरहित अपने शरीरको देखकर अत्यन्त हर्षको प्राप्त हुआ ।५७ अ० १६।
त्वरम् ।५६। जनकस्य सरो दृष्ट्वा नीलवस्त्रं सितं यदा ॥ वभूव नृपतिर्हृष्टः सर्व
पापाति गो भवत् ॥५७॥ तत्र स्नानं कृतं राज्ञा सागरे जनकस्य हि ॥ तच्छरीरं
परित्यज्य दिव्य देह धरो भवत् ॥ ५८ ॥ कोटिसूर्य्यप्रतीकाशं विमान वरमा
रुहत् ॥ कोटि कन्दर्प्प शदृशो नानाभरणभूषितः ॥ ५९ ॥ अप्सरोगण संकी
र्णो वै दूर्य्यादिविभूषितः ॥ दिव्यांवरधरः स्रग्वी दिव्य गंधानुलेपनः ॥ ६० ॥
अनन्तर जव राजाने जनकके सागर में स्नानकिया और कल्पतरु को अर्थात् कल्पवृछ को
दर्शन किया तव उस देहको छोड़कर सुन्दर देहको धारन करके ॥५८॥ हजारों सूर्यके समान
तेजहै जिसका सो विमान के उपर चढकर कोटि २ कामके समान शोभा और दिव्य दिव्य

वस्त्रोंको और उत्तम २ मालावों को धारण करके ॥५९॥६०॥ विष्णु पुरको अर्थात् वैकुंठको प्रस्थान किया ॥ ६१ ॥ इसीभांति जो मनुष्य जनकके सरोवरमे स्नान करताहै और कल्पतरु

दिव्यलोकं गतो राजा पुनरावृत्ति वर्जितं ॥ गन्धर्वैरप्सरोभिश्च वीज्यमानः सुसत्कृतः ॥ ६१ ॥ श्रीपराशर उवाच ॥ इति ते कथितं विप्र माहात्म्यं सागरस्य हि ॥ यःशृणोति नरोभक्त्या स तु गर्भं न पश्यति ॥६२॥ जनकस्य सरो दृष्ट्वा दृष्ट्वा कल्पद्रुमं पुनः ॥ स्नात्वा पीत्वा नरोयाति पदं शाश्वतमव्ययम् ॥६३॥ धन्यं यशस्यमारोग्य मायुष्यंस्वर्गदं तथा ॥ ॥ ६४ ॥

को दर्शन करताहै सो सब भांतिके मनोरथको प्राप्त करताहै ॥ ६२ ॥ जनक सरोवरको जो दरशन करैंगे और कल्पवृक्ष का दरशनकरने स्नानकरने से जलपीनेसे स्वाशत पद अविनाशी पद को प्राप्तहोयगे ॥ ६३ ॥ इस कथाको श्रवण करने से धनको वृद्धि और यशका लाभ और शरीर

में आरोग्यता प्राप्तहोती हैं ॥ ६४ ॥ इतिश्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये अष्टवि
शोऽध्याय ॥ २८ ॥ १६ ॥

इतिश्रीवृहद्विष्णुपुराणेमिथिलामाहात्म्येपराशरमैत्रेयसम्वादेषोडशोऽध्यायः१६
मैत्रेयउवाच राज्ञो दशरथस्यास्ति मिथिलायां सरः शुभम् ॥ यत्र स्नात्वा वि
मुक्तो भूद्ब्रह्मणो हत्यया शिवः ॥१॥ श्रूयते कथ मे तद्धि ब्रूहि विस्तरतो मुने॥
सर्वज्ञो सिवदान्योसि श्रद्दधानाय मे प्रभो ॥२॥ श्रीपराशरउवाच ॥ शृणुविप्र क-

दो० सप्तादश अध्यायमें ब्रह्महत्या शिवपाय, रामायण छुट्योतवे दशरथ शर दरशाय ॥ १७ ॥

पुनः मैत्रेयजी पराशरजी से पूछतेहैं हे माहाराज मिथिलापुरी में एकशरोवर श्रीदशरथजी का
भी है जिसमें स्नान करने से श्रीमहादेवजी की ब्रह्महत्या छूटगईथी ॥१॥ इसकथाको मैं संक्षेप से
श्रवण करचुकाहूं अब यथार्थ विस्तार पूर्वक श्रवण करनेकी इच्छाहोती है यदि मेरे ऊपर अनुग्र

ह है तो वर्णन करिये ॥ २ ॥ श्रीपराशर जी बोले हे मैत्रेय यह कथा सर्व पापोंको विनाश करनेवाली है मैं तुह्मारे ऊपर कृपाकरके इस कथाको कहताहूं एकाग्रचित्त होकर सुनो ॥३॥ पहिले के समय में सरस्वती जीके अतिमनोहर स्वरूपको देखकर ब्रह्माजी कामासक्त होगए उनसे मन

थामेतां सद्यःपाप विनाशिनीं ॥ कथयामितवाग्रेहं समाहितमनाभवः ॥३॥ पुरा सरस्वतीं दृष्ट्वा लोकोत्तर स्वरूपिणीं ॥ कामासक्तो भवद्ब्रह्मा मनरोद्धुं न शक्तिमान् ॥४॥ ग्रहितुं धावमानं तं कामान्धं पितरं गुरूं ॥ दृष्ट्वा तं विस्मिता वाणीधिक्चक्रे धर्म सेतुभित् ॥ ५ ॥ जगतामीश्वरोसि त्वं गर्हितुं कुरुषे कथं ॥ श्रुति

नहीं रोकागया ॥ ४ ॥ तब सरस्वती जीके साथ संभोग करनेके लिये दौडे जब लोकके माता पिता ब्रह्माजी कामसे विह्वल तथा कामान्ध होगए तब सरस्वती महारानी पिता ब्रह्माजीको इस भांति देखकर भागचलीं ॥५॥ और लौकिक वाक्यके अनुसारसे निवारण करने लगीं हे पितः

आप धर्म्मको जानतेहैं वेदके सेतुउल्लंघन करतेहैं क्या पशुवत् बुद्धिभया ॥६॥ वहुत आरत होकर वाणी अर्थात् सरस्वती वोलीं तद्यपि ब्रह्मा नही माना तब वाणी त्राहि त्राहि वोलनेलगीं ॥७॥ और आप सब प्राणियोंको पालेहै इसकालमें आप कामके वस होकर नरक जानेकी इच्छा कर

सेतुं समुल्लंघ्यवर्तसेपशुवुद्धिवत् ॥६॥ वहुशोभ्यर्तितोवाण्या न निवृत्तस्तदाविधिः
दुद्रावैण वपुदधृत्वा त्राहित्राहीति वादिनीम् ॥७॥ सोप्यन्वधावद्दक्षस्य वपुषा-
रन्तुमंगजां ॥ रे धमाधम दुष्टात्मन्श्रुति सेतुं न नाशयेः ॥ ८ ॥ निवर्तस्व नि-
वर्तस्व पस्यैतां तनुजां हि माम् ॥ ईश्वरस्ये दृशं कर्म भवितुं कथमर्हति ॥९॥

त हैं ॥८॥ हे ब्रह्माजी आप मुझ को अपनी पुत्री समझिये मैं आपहीसे उत्पन्नहूं आप लोक निन्दितकर्म करनेकी इच्छा क्यों करते हैं ॥९॥ इस प्रकार सरस्वती ब्रह्माजीको वहुत समझाई पर जब ब्रह्माजीने नहीं माना तब देवतालोग हाहाकार करनेलगे और बोले रे नीचोंमें नीच तूं वेदके

रास्तेको विनाश करताहै तूंजगत्का ईश्वरहै धर्मको चलानेवालाहै तेरे लिये यह निन्दित कर्म्म करना उचित नहीं है ॥१०॥ अनन्तर श्रीमहादेवजी भी इस वृत्तान्तको जान गए कि ब्रह्माने

बहुसोऽपि वदंतित्थं धावमानैव भारती ॥ नन्यवर्त्तत कामाग्नि दग्धप्रज्ञः प्रजापतिः ॥ १० ॥ निः संज्ञा पतिता भूमौ त्रातारंनाधि गच्छति ॥ रन्तुं प्रवृत्तं ब्रह्माणं तनुजां वीक्ष्य शंकरः ॥ ११ ॥ धर्मपालन संसक्तः मानसो गिरजापतिः ॥ येन त्यक्ता सतीं साध्वीं श्रुति सेतु र्दृढीकृतः ॥ १२ ॥ वेदमुल्लंघ्य गंतॄणां घोर दण्ड प्रदः प्रभुः ॥ वेदमुल्लंघ्य गंतारं स्व पुत्र मपिनेक्षते ॥ १३ ॥ महाक्रोध

अपनी पुत्रीके साथ निन्दित कर्म किया है ॥११॥ धर्म पालन संसक्तः मानसमे गिरिजापति जो महादेवहैं जो सती ऐसी इस्त्रीको त्यागकर वेदके मार्ग दृढकिया ॥ १२ ॥ श्री महादेवजी अपने मनमे विचारतेहैं की वेदमार्ग उल्लंघन करनेवाला (गंतृना) गमन करनेवालेका घोर दंड

होना चाहिये हे प्रभु जदी स्वपुत्र होय तोभी दंड योगहै ॥१३॥ तब महादेव जीने अपने त्रिशूलसे ब्रह्माके शिरको काट डाला ॥१४॥ उस ब्रह्म हत्याके प्रभाव से उसी कालमें वह सिर महादेवजी के हाथमें लगगया इसको देखकर सब देवतालोग विस्मित होगये फिर महादेवजीभी इस चरित्र

समापन्नः प्रागृहीच्छूल मुत्तमम् ॥ गत्वाद्रुतं त्रिशूलेन शिरः कायात्तदा हर
त ॥१४॥ तच्छिरस्तत्करेसक्तं हत्ययाघोरयाविधेः ॥ मोच्यमानमपीशेन न-
मुंचति शिरःकरम् ॥१५॥ कृततीर्थादि सकलं न कराच्चलितं शिरः ॥ ईश्वरस्याऽ
पि मैत्रेय पश्यरीतीं सनातनीं ॥१६॥ मुक्त्वापि क्लेशं धर्मस्यमार्गं रक्षति सर्वदा ॥

को देखकर आश्चर्ययित हुए और बोले हे शिर हमारे हाथको छोड़दो २ और जिस उपायसे हाथ से शिर छूटजाय वह उपाय भी किया परन्तु हाथसे शिर नहीं छूटा ॥१५॥ तब ब्रह्महत्यासे तप्त होकर महादेव जी बहुत व्याकुल हुये और बहुत तीर्थादिको भी भ्रमण किया परन्तु हाथसे शिर

नहीं छूटा ॥१६॥ तब महादेवजी धर्मका रक्षा करने के लिये नाना प्रकारके दुःखको सहनेलगे क्योंकि धर्मके प्रतिष्ठित रहनेहीसे मनुष्यको उत्तम गति प्राप्त होती है ॥ १७ ॥ धर्म्महीसे पुरुष सबभांतिके सुखको भोग करताहै धर्म्मकी आश्चर्य्य गति है यदि देवता होवें और वे धर्म्म से भ्रष्ट

धर्मेप्रतिष्ठः पुरुषः सद्गतिं लभते शुभां ॥१७॥ धर्मात्सर्वसुखप्राप्तिर्द्धर्मस्यगति-
रद्भुता ॥ श्वा शूकरइवज्ञेयो धर्माद्भ्रष्टो नरोपिहि ॥१८॥ तस्माद्धर्मं सदारक्षेदा-
त्मनः शुभमिच्छता ॥ धर्माद्धीनाः सुतास्त्याज्या पितामाता सुहृत्प्रियः ॥१९॥
धर्म एव धनं नित्यं धर्म एव सुखप्रदम्॥ धर्महीनस्य धिग्जन्म धिक्शतं धिक्

होवें तो उनको कुत्ता और शूकर जानना चाहिये॥१८॥ इस लिये जो पुरुष अपना कल्याण चाहे तो सर्वदा धर्म्मकी रक्षाकरे क्योंकि धर्म्महीके आधीन पुत्र राजा पिता माता और मित्र होतेहैं ॥१९॥ धर्म्महीं संपूर्ण धन और धर्म्महीं सुखको देनेवालाहै स्वर्ग तथा मोक्ष इन दोनोंको देनेवाला धर्म्म

ही है और धर्म्महीसे सबकी वृद्धि होती है धर्म्महीन जो पुरुषहै उसके जन्म और जीवनको धि-
कार है ॥२०॥ क्योंकि वेदके अनुकूल जो है वही धर्म्म है और वेद प्रतिकूल जो है वही अधर्म्म
है और जो विष्णुको प्रसन्न करनेवाला है वही धर्म्म है ॥२१॥ धर्म्म से दूसरा इस लोकमें कोइ

पुनःपुनः ॥२०॥ ईशानकूलोधर्मोऽस्ति प्रतिकूलस्त्वधर्मकृत ॥ प्रभोः प्रीतिकरो-
यस्तु धर्मःस्फुटतरस्तु सः ॥२१॥ इति धर्मगतिं सम्यग्विचार्य भगवाञ्छिवः ॥
ब्रह्महत्योद्भवं दुःखं धर्मसोढ्वामपालयत् ॥२२॥ ब्रह्महत्या समाक्रान्तं पतिं दृष्ट्वा
तु पार्वती ॥ जगाम निलयं विष्णोस्तस्मै सर्वं न्यवेदयत् ॥२३॥ श्रुत्वा विष्णुः

हितकारी नही है इसभांति धर्मका मार्ग विचारकर श्रीभगवान महादेवजीने ब्रह्महत्या जनित
दुःखको सहकर धर्म्मकी रक्षाकी ॥२२॥ ब्रह्महत्यासे युक्त पतिको देखकर पार्वतीजी तुरत अपने
स्थानको गई और वहां ब्रह्महत्याको निवेदन किया ॥२३॥ और पार्वतीजी ब्रह्महत्याके विनाशके

लिए अपने स्थान वासियों के साथ उपायको शोचने लगी ॥२४॥ उसी समयमें दिव्यदर्शन
नारदजी ॥२५। वीणाको बजातेहुये वैकुण्ठमें पहुँचे आएहुए नारदजीको देखकर मधुसूदन अ० १७.

समाश्वास्य पार्वतीं शुभलक्षणाम् ॥ सुनन्दनन्द प्रमुखान् पार्षदांश्च समाह्वयत ॥२४॥ शिव हत्या त्यये विप्र सभा च महतीकृता ॥ तदानीमेव भगवान्नारदो दिव्यदर्शनः ॥ २५ ॥ वैकुण्ठप्रगमच्छीघ्रं वीणावादन तत्परः ॥ आगतं नारदं दृष्ट्वा प्रणम्य मधुसूदनः ॥२६॥ समभ्यर्च्यसु सत्कृत्य प्रोवाच भगवान्मुनिम् ॥ अहोभाग्यमहोभाग्यं दर्शनात्तव सुव्रतम् ॥२७॥ ब्रूहि नारद सर्वत्र गतिस्ते हि

भगवान प्रणाम करके ॥ २६ ॥ और पूजन करके कृत कृत्य होकर श्रीभगवान बोले हे नारद आपके दर्शनसे हम कृतार्थ हुए और हमारा अहोभाग्य है ॥२७॥ हे नारद आप सर्वत्र घूमते फिरते हैं बतलाइए कौन ऐसा तीर्थ है जिसमें प्राप्त होनेसे ब्रह्महत्या छूट जाती है और कोइ

ब्रह्महत्याके विनाशके लिये जो कुछ उपायहै सोभी सनातन बतलाइये ॥२८॥ भगवानकी इस बातको सुनकर नारदजी एकक्षण ध्यानावस्थित होकर महा पापोंके हरनेवाले तीर्थको विचार

तकारक ॥ ब्रह्महत्या हरं तीर्थं व्रतं वा न्यच्च साधनम् ॥ २८ ॥ निशम्य नारदो योगी मुहूर्तं ध्यानमास्थितः ॥ सुविचार्य्य महापापहरं तीर्थं सनातनं ॥ २९ ॥ उवाच विष्णुं हर्षेण नारदो मुनिसत्तमः ॥ श्रूयतां श्रीपते तीर्थं ब्रह्महत्यादि नाशनम् ॥३०॥ त्रिषु लोकेषु विख्यातं सद्यः श्रेयस्करं नृणां ॥ मिथिला नगरे शुभ्रे सच्चिदानन्द रूपिणि ॥३१॥ राज्ञो दशरथस्यास्ति तडागस्तत्र पापहृत् ॥ यत्र

कर ॥ २९ ॥ अति हर्षसे श्रीभगवान से नारदजी बोले हे भगवान ब्रह्महत्यादि अनेक विध पापोंको हरनेवाला जो तीर्थ है उसको आप सुनिए ॥३०॥ यह तीनों लोकमें विख्यातहै और मनुष्यों को तुरंत कल्याण करनेवाला है वह तीर्थ सच्चिदानन्द स्वरूप मिथिला नगरमें ॥३१॥

१०१

राजा दशरथका तड़ाग अर्थात् पोखर है जिस तड़ागका जल आधिदैविक आधिभौतिक आध्यात्मिक इन तीनों तापोंको दूर करताहै और पितर लोगोंको तृप्ति करताहै ॥३२॥ ब्रह्माण्ड में जितनें तीर्थ है उन में स्नान करनेसे जो फल होताहै उन तीर्थोंसे कोटिगुण अधिक महाराज

तोयं त्रितापघ्नं पितॄणां मुक्तिहेतवः ॥३२॥ ब्रह्माण्डगतःतीर्थानि स्नात्वा यत्फलमश्नुते ॥ महाराज सरो दृष्ट्वा तत्कोटि गुणिताधिकम् ॥ ३३ ॥ यत्र स्नात्वा जामदग्न्यो विमुक्तो मातृहत्यया ॥ यत्रोत्सवो महानासीद्विवाहे जानकीपतेः ॥ ॥ ३४ ॥ भवानपि च जानाति किमुवाच्यं मया बहु ॥ माहात्म्यं तस्य सरसो

दशरथजीके तड़ागके दर्शन करनेसे पुण्य होताहै ॥ ३३ ॥ जिस तडागमें स्नान करनेसे जामदग्न अर्थात् परशुरामजी मातृ हत्यासे मुक्त हुयेहैं जिस तडागमें रामचन्द्रके विवाहके काल में बडा उत्सव हुआथा ॥ ३४ ॥ हे महाराज क्या आप नहीं जानतेहैं आपसे में क्या वर्णनकरु

उस सरका माहात्म्य हजार मुखवाले (शेश) भी नही वर्णनकरसकतेहैं ॥ ३५ ॥ उस तीर्थके समान तीनों लोकमें कोइ तीर्थ नहीहै उसमें स्नान करने से और वहां दान देने से उसको

वक्तुं शेषो न शक्तिमान् ॥३५॥ सच्चिदानन्द रूपाश्च यत्र मत्स्या अनेकशः ॥ नास्ति तत्सदृशं तीर्थं त्रिषुलोकेषु कुत्रचित ॥३६॥ नारदस्य वचःश्रुत्वा तन्मुने र्विष्णुरागतः ब्रह्महत्यान्वितो यत्र भगवानम्बिकापतिः ॥३७॥ आगत्य विष्णुः प्रोवाच रुद्रं रुद्रप्रियः प्रभुः ॥ विष्णुरुवाच ॥ याहि याहि महारुद्र मिथिलां निमिपालिताम् ॥३८॥ महाराज सरोनित्यं तत्रास्ते लोकविश्रुतं ॥ दृष्ट्वा स्पृष्ट्वा च

दर्शन करनेसे मनुष्य मुक्त होजाताहै ॥ ३६ ॥ नारायण भगवान् नारदजी की यह बात सुनकर अपने पार्षदों वो मुनियोंके साथ हिमालयको चले आये ॥ ३७ ॥ यहां विष्णुभगवान् महादेव जी को ब्रह्महत्या से व्याकुल देखकर बोले हे महारुद्र निमिराज से पालित जो मिथिला है ॥

३८ ॥ वहां आप जाईये वहां तीनोलोक में ख्यात दशरथ का शरोवर है उसमें स्नान करनेसे और दान करनेसे मनुष्य मुक्त होताहै और उसके दर्शन से ब्रह्महत्या आदि अनेक पाप नष्ट होताहै इसमे कुछ संदेह नहीहै ॥ ३९ ॥ श्री विष्णुभगवान् की यह वात सुनकर महादेवजी

सुस्नात्वा ब्रह्महत्याति गोभव ॥ ३९ ॥ विष्णोर्वचनमाकर्ण्य जगाम मिथिलां शिवः ॥ महाराज सरो दृष्ट्वा क्षिप्रं पूतोऽजहत्यया ॥४०॥ दृष्ट्वैवपतितं हस्तात्कं शिवो हर्षमाप्तवान् ॥ धन्योहं कृतकृत्योहं महिम्ना सरसः स्फुटम् ॥४१॥ स्तुतिं च वहुशः कुर्वन्वर्णयन्बहुशो यशः ॥ हृष्टोजगामानिलयं नीलकण्ठो महाप्रभुः

दशरथके सरोवरको गये सरोवरको दर्शन करनेसे और स्तुति करनेसे महादेवजी के हाथ से वह सिर गिरपरा ॥४०॥ तव महादेवजी वहुत हर्षित होकर दिगम्बर अर्थात् नग्न होकर नाचने लगे और कहनेलगे कि हम धन्य हैं और कृतकृत्य हैं पातकके घरसे आज हम छूटगये ॥४१॥

इन वार्तोंको कहकर महादेवजीने उस सरोवरकी बहुत स्तुति की और उसके यशको वर्णन कर
ने लगे फिर इसके अनन्तर सर को दर्शन करके कैलाश चलेगए ॥४२॥ इस सरोवरका दर्शन
करनेसे और स्पर्श करनेसे आर इसके जलके पान करने से मनुष्य पापसे छूट जाताहै इसी

॥४२॥ इति ते वर्णिता विप्र महाराज सरः कथा ॥ पठनाच्छ्रवणाद्वापि सर्व पा-
पाति गोभवेत् ॥ ४३ ॥ इति श्रीबृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेय
सम्वादे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

प्रकार और भी कूंआ तालाव और कुंड मिथिलामें है जो बहुत तुरत स्वर्ग और मोक्षको देता
है पुण्यकी जो जो जगह है तिसमें चन्द्र और सूर्य्य ग्रहणमें उन तीर्थोंमें स्नान दर्शन और
जलके पान करनेमे वहुत पुण्य होताहै । और कैसहू पातकी हो वह पापसे छूट जाताहै अथवा
इस माहात्म्यको पढनेसे तथा श्रवण करनेसे भी पातकसे मुक्त होताहै ॥४३॥ इति श्रीवृहद्विष्णु

पुराणे मिथिलामाहात्म्ये उनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ १७ ॥

दोहा । दुग्धवतीके जन्म पुनि महिमा अरु परताप, अष्टादश अध्यायमें रामायणहरु ताप ॥१८॥

श्रीमैत्रेयजी श्रीपराशरजीसे पूछते हैं हे महाराज दुग्धवती नामसे मिथिलामें प्राप्त जो नदी है

मैत्रेयउवाच ॥ भगवन् कथमुत्पन्ना नाम्ना दुग्धवती नदी ॥ कस्मात्सा पुण्यदा नित्यं कस्मिन्काले समुद्भवा ॥ १ ॥ किमर्थमिह संजाता जनकस्य गृहे स्थिता ॥ तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि विस्तारात्कथयस्व मे ॥ २ ॥ श्रीपरासर उवाच ॥ शृणु विप्र पुराप्रोक्ता वशिष्टाय स्वयं भुवा ॥ तदहं कथयिष्यामि

सो कैसे उत्पन्नहुई किस कारण पुण्यको देनेवाली हुई और वह किस कालमें उत्पन्नभई ॥ १ ॥ और किस कारण वह नदी स्वरूप होकर जनकजी के घरमें विद्यमानहुई यह सब कथा सुनना चाहताहूं विस्तार पूर्वक मुझसे कहिए ॥२॥ श्रीपराशरजी मैत्रेयजीसे कहते हैं कि हे मैत्रेय तुम

श्रवण करो जो कथा पहिले ब्रह्माजीने वशिष्ठसे कहा है सब पापको हरनेवाली वही कथा हम
आपसे कहते हैं ॥३॥ वैशाखके महीना शुक्लपक्ष नवमी तिथि मघा नक्षत्रमें जब जानकीजी

कथा पापहरां पराम् ॥ ३ ॥ वैशाखस्य सिते पक्षे नवमीमघसंयुता ॥ तस्या
मध्याह्न योगेन सीतोत्पन्ना यदाभवत् ॥ ४ ॥ तदा देवगणाः सर्वे स्वर्गलो-
कान्महीं गताः ॥ इन्द्रलोकाद्ब्रह्मलोकाच्छिवलोकात्तथैवच ॥ ५ ॥ गोलोकान्
नागलोकाच्च सर्वलोकात्सहस्रसः ॥ आगता लोकपालाश्च नानोपाय न पा-
णयः ॥ ६ ॥ तत्र दृष्ट्वा द्रुतां बालां त्रैलोक्य सुन्दरीक्षुभाम् ॥ जगद्धात्रीं म-

उत्पन्न हुई ॥ ४ ॥ तब देवतालोग स्वर्गसे पृथ्वीमें आये और इन्द्र लोक तथा शिवलोकसे भी
आये ॥ ५ ॥ और गोलोकसे तथा नाग लोकसे भी सब आए सबोंके हाथमें नाना भाँति के
भेटकी चीज सब विराजमान है ॥ ६ ॥ मिथिलामें आकर तीनों लोकमें सुन्दरी और संसारको

धारण करनेवाली महामाया ब्रह्मस्वरूपा सब कालमें एकरस रहनेवाली जनकजी के ॥ ७ ॥ हल के खींचनेसे कलससे जन्मको धारण करनेवाली ऐसी अद्भुत कुमारी को देखकर जितने देव

हामायां ब्रह्मरूपां सनातनीम् ॥ ७॥ वैदेहलांगलाद्धग्र कलशाभ्यन्तरोद्भवाम् ॥ दृष्ट्वा प्रमुदिताः सर्वे देवताप्सरकिन्नराः ॥ ८ ॥ मुनयः सिद्धगन्धर्वायक्ष विद्याधरादयः ॥ तुष्टुवुर्मुनयः सिद्धा ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ९ ॥ जगुर्गन्धर्वपतयः पुष्पवृष्टिः पपातह ॥ देवदुन्दुभयोनेदुर्जय शब्दोमहान भूत् ॥ १० ॥ केचिद्धारं ददौतस्यै केचित्कर्णादि भूषणम् ॥ केचिच्चूडामणिं तस्यै केचिच्छिरसि

गण किन्नरगण अप्सरागण हैं वे सब परम आनन्दको प्राप्तहुये ॥८॥ मुनिलोग सिद्ध गन्धर्व यक्ष विद्याधरादिक तुष्टु नाम संतुष्टहुये सिद्धहुए अप्सरागण नृत्य करनेलगे ॥९॥ गन्धर्वलोग आकाश से फूलोंका वर्षा करनेलगे देवतालोग नगाड़ वजानेलगे और जैशब्द करनेलगे ॥१०॥ किसीने

सीताजीको मोतीकी मालादी किसीने कानका कुंडल दिया किसीने चूडामणि दिया किसीने शिरका भूषण दिया ॥११॥ किसीने कंठ का भूषण किसीने हाथका भूषण वाला आदिक दिया किसीने कटिसूत्र अर्थात् ढांडा किसीने रत्नजटित अंगुठी दिया ॥१२॥ किसीने सोनेका बना

अ० १८.

भूषणम् ॥ ११ ॥ केचित्कण्ठ विभूषांच केचित्कर विभूषणे ॥ कटिसूत्रं ददौ केचिन्मुद्रिकांरत्नभूषिताम् ॥ १२ ॥ नूपुरौद्वौ ददौ तस्यै दिव्योकनकनिर्मितौ नूतनानि च वस्त्राणि पुष्पमाल्यादिकान्यपि ॥ १३ ॥ कामधेनुर्विलोक्याथ विचार्य्यच पुनः पुनः ॥ स्तनं स्वयं ददौतस्यै जगन्मात्रेस्वमातृवत ॥१४॥ सा

हुआ सुन्दर बिछिया दियाथा किसीने नवीन २ वस्त्र और फूलोंकी माला दी ॥१३॥ कामधेनु आकर अपना स्तन जानकीजी को दूध पीनेको दिया जैसे माता पुत्रीको दूध पान करनेके लिए देती है ॥१४॥ श्रीजानकी माता आनन्द स्वरूप कामधेनुका स्तन पान करनेलगीं उसी कामधेनु

१९९

के स्तन मे दुग्धवती नदी उत्पन्न हुई ॥ १५ ॥ श्रीजानकीजी के सुखके लिए जनकजी के घर स्थित हुई वह जानकीजीकी उपमाता है कोटि पापको नाश करनेवाली हैं ॥१६॥ उसमें स्नान

बालापातुमारेभे स्तनं तस्यामुदान्विता ॥ तस्मात्स्तनात्समुद्भूता नदी दुग्धवती मता ॥ १५ ॥ जानकी प्रिय कामार्थं जनकस्य गृहेस्थिता ॥ जानकी धातृ- भूतासा कोटिकल्मष नाशिनी ॥ १६ ॥ तस्या स्नानेन पानेन पुनर्जन्मन वि- द्यते ॥ कामधेन्वासमुद्भूता पुत्रीरूपासरिद्वरा ॥ १७ ॥ कामधेनु र्यथाकामान्य क्षते देवताकृतिः ॥ तथा दुग्धवतीचेयं सर्वकामार्थवर्षिणी ॥१८॥ यंयं चिंतयते

करनेसे संसारमें मनुष्यका जन्म नहीं होताहै कामधेनुसे पुत्री रूप होकर दुग्धवती नदी उत्पन्नहुई ॥१७॥ जिस भाँति कामधेनु देवता के स्वरूपको धारणकर मनोरथको पूर्ण करती है उसीभाँति दुग्धवती नदी जलरूप होकर सब मनोरथको पूर्ण करती है ॥१८॥ जिसर कामको मनुष्य इच्छा

करताहै वह निःसन्देह पूर्ण होताहै वुद्धिमान मनुष्य दुग्धवती के जलको कभी न त्यागकरें ॥१९
करोड़ जन्मका पाप वहुत हो अथवा थोड़ाहो दुग्धवती के एक बूंद जलको पान करनेसे सव छूट

कामं तंतं प्राप्नोतिनिश्चितं ॥ दुग्धवत्यास्तटं प्राप्य न त्यजेद्वुद्धिमान्नरः ॥१९॥
कोटिजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा वहु ॥ दुग्धवत्या जलं पीत्वा विंदु
मात्रेण मुच्यते ॥२०॥ यत्पुण्यं वहुदानेन सर्वतीर्थैनयत्फलं ॥ तस्मात्कोटिगुणं
पुण्यं दुग्धवत्यास्तु सेवनात् ॥ २१ ॥ याया दुग्धवती तीरे तपोयज्ञादिकाः
क्रियाः ॥ कुरुतेमानवो यस्तु तत्तत्कोटिगुणंभवेत् ॥ २२ ॥ सर्वतिर्थादि संत्य

जाताहै ॥ २० ॥ वहूत दान करनेसे जो पुण्य होताहै तथा सम्पूर्ण तीर्थ भ्रमण करने से जो फल
होताहै उससे एक करोड़ अधिक दुग्धवती की सेवन करनेसे होताहै ॥२१॥ दुग्धवती के तीरके
ऊपर जौन२ तप दान यज्ञ मनुष्य करताहै वह सव पुण्य कोटिगुण होजाताहै ॥२२॥ सर्व तीर्थों

को तथा सर्व क्षेत्रोंको छोड़कर और सब दान तथा और और साधन को छोड़कर ॥२३॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य दुग्धवती तीर के ऊपर एकक्षण भी वासकरें तो उनका जन्म मात्रका कियाहुआ पाप

ज्य सर्वक्षेत्रादिकान्यपि ॥ सर्वव्रतादि दानानिसाधनान्यखिलान्यपि ॥ २३ ॥ वासोदुग्धवती तीरे कुर्य्यात्क्षणमपि द्विज ॥ जन्मजन्मान्तरात्पापाद्दास मात्रेण मुच्यते ॥ २४ ॥ यदिस्याद्दैवयोगेन मृत्युर्दुग्धवती तटे ॥ महापातक युक्तोपि याति विष्णोः परंपदं ॥ २५ ॥ वहून्यत्र किमुक्तेन जल्पितेन पुनः पुनः ॥ तस्या स्नानेन पानेन स्मरणेन गतिर्भवेत् ॥ २६ ॥ यइदं श्रावयेद्भक्त्या श्रुत्वा वा

तुरत नष्ट होताहै ॥२४॥ यदि दैवयोगसे दुग्धवती के तीर के ऊपर मनुष्यको मृत्यु होय ओ वह महापातकी भी होय तो विष्णुके परमपदको प्राप्त होताहै ॥२५॥ पराशरजी मैत्रेयजीसे कहते हैं हे मैत्रेय वहुत दुग्धवती की महिमा कहांतक कहें उसमें स्नान करनेसे उसके जलको पान करनेसे

तथा उसको स्मरण करनेसे पुरुषको उत्तम गतिहोती है ॥२६॥ जो पुरुष इस कथाको भक्तिपूर्वक श्रवण करतेहै तथा सुनके जो हृदय में याद रखतेहैं उनके ऊपर जानकी देवी प्रसन्न होती हैं इसमें सन्देहनहींहै ॥२७॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्येत्रिंशोऽध्यायः ॥३०॥१८॥

हृदिधारयेत् ॥ तस्य सा जानकीदेवी प्रसन्नाभुविसर्वदा ॥ २७ ॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशर मैत्रेय सम्वादे दुग्धवती माहात्म्य वर्णनोनाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

मैत्रेय उवाच ॥ भगवान् सर्वधर्म्मज्ञ सर्व शास्त्रार्थ पारग ॥ मिथिलायां समा

दोहा· मिथिलामें नदियांसबै त्रियुगकौशिकी जोय, रामायण उनइस लहरी गायोमुनियनसोय १९

श्री मैत्रेयजी श्रीपराशर जीसे पूछतेहैं हे महाराज आप सब धर्म्म को जाननेवालेहै और सब शास्त्र के अर्थ को पारंगतहैं मिथिला में हिमालय से निकलीहुई जो नदियां विख्यातहैं ॥१॥

वे सब सीताजीको प्रसन करनेवालीहैं और स्वर्ग तथा मुक्तिको देनेवालीहैं परन्तु उन नदियों के बीचमें नव जो नदीहै वह बहुतउत्तमहै और जानकीजीकी अति प्रियहै ॥ २ ॥ सखी होकर सीताजीके साथ जो क्रीडा करतीहै उन नदियोंका नाम कहतेहैं कौशिकी त्रियुगा कमला ॥३॥

याता नद्यो हैमवतोद्भवाः ॥ १ ॥ सीताप्रीतिकराः सर्वाः स्वर्गदा मुक्तिदास्तथा ॥ तासां मध्ये प्रियतमाः नवनद्यो महोत्तमाः ॥ २ ॥ सखीभूत्वा समागत्य क्रीडंति सीतयासह ॥ कौशिकी त्रियुगाचैव कमला च सरिद्वरा ॥३॥ अधोवारा धूमवती घोषा च वनघोषका स्वयं लक्ष्मीः लक्ष्मणाख्या गण्डकीति ततः परा ॥४॥ पुरायाः कथिता विप्र हिमवत्खण्डवर्णने ॥ तासांकेजनकाब्रह्मन्तेषां नामानि

अधोवारा धूमवती घोषा वनघोषा लक्ष्मणा गंडकी ॥ ४ ॥ यह सब नदी अत्यन्त पुण्यको देने वाली हैं और हिमालयके खण्डसे उत्पन्न हैं उनलोगोंकी उत्पत्ति किससे है हे पराशरजी यह

आप मुझसे कहिये ॥ ५॥ इस बातको सुनकर पराशर मुनिने कौशिकी आदि नदियोंकी कथा की कहना शुरू किया ॥६। पराशरजी मैत्रेयसे कहतेहैं तुम धन्यहो और कृतकृत्यहो जिसलिये मे वद ॥५॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य पाराशर्य्यो मुनीश्वरः ॥ सरितांकौशिक्यादीनां कथांवक्तुंप्रचक्रमे ॥६॥ श्रीपराशर उवाच ॥ धन्योसि कृतकृत्योसि यत्त्वया श्रोतुमिच्यते ॥ नदीनां पुण्यशीलानां कथां पापहरांपरां ॥ ७॥ कुशोनाम महाराजो धार्मिको ज्ञानवान्शुचिः। यस्यपुत्रोभवत्साक्षाद्विश्वामित्रो महान्नृषिः॥ ८॥ तस्य कन्या समुत्पन्ना लोकानां मुक्ति दायनी ॥ कौशिकीतिसमाख्याता ऋचीकेन विवाहिता ॥९॥ ऋचीकोपि मुनिस्तस्यां त्रीन्पुत्रानुपपादयसः ॥ सुनः पुण्य देनेवाली नदियों की पाप हरनेवाली कथाको पूछतेहो ॥ ७॥ कुशनामसे प्रसिद्ध धर्मको करनेवाले एक ज्ञानी ऋषिथे जिनके पुत्र विश्वामित्रहै ॥ ८ ॥ उन्हीकी पुत्री कौशिकी हैं मनुष्यों

को मुक्तिदेने के योग्यहैं यह कौशिकी ऋचिक मुनिसे व्याहीगई ॥ ९ ॥ और ऋचिक मुनिके कौ
शिकी से तीनपुत्रको उत्पन्न करके शुनःसेफ नामक मझले पुत्रको अम्बरीष राजाके यज्ञके लिए दे
दिया ॥ १० ॥ तव कौशिकी वहुत विह्वल हुई और पुत्र२ कहतीहुई शोचसे वह तपाश्विनी जल

सेफंमध्यमंतु यज्ञार्थे दत्तवांन्नृषिः ॥१०॥ अम्बरीषाय भूपाय कौशिकी विह्व-
लाभवत् ॥ पुत्रपुत्रेति शोचंती नदीभूता तपस्विनी ॥११॥ जानक्या सखिरूपेण
क्रीडंतीक्रीडनेतु सा ॥ अति प्रीतिकरासाध्वी नदीरूपा सरिद्वरा ॥१२॥ तस्यां
स्नानेन मुक्तिः स्याद् ब्रह्महत्यादि पातकात् ॥ जन्मजन्मार्जितंपापं मनसावच-

रूप नदीहोगई ॥ ११ ॥ वह जानकी की सखी होकर उनके साथ क्रीडा करनेलगी नदीरूप
जो कौशिकीहैं सो अति प्रिय करनेवालीहैं और सब सरोवरोंमे श्रेष्ठहैं ॥ १२ ॥ तपस्या करने
से तथा उसमें स्नान करनेसे पुरुषकी मुक्ति होतीहै और ब्रह्महत्या पातक से पुरुष छुटजाताहै

१३ ॥ स्नान करनेसे तथा ध्यान करनेसे दर्शनकरनेसे तीर्थोंको सेवनकरनेसे सवप्रकारका पाप छुटजाताहै इसमे संदेह नहीं है और मरने से विशेष करके मुक्तहोताहै ॥ १४ ॥ वैशाख महीना

सापि वा ॥१३॥ स्नानात्पानाद्दर्शनाच्च तत्तीर्थसेवनादपि ॥ मुच्यतेनात्रसंदेहो
मरणाच्च विशेषतः ॥१४॥ माधवेतु सितपक्षे वसन्तिस्नानतत्पराः ॥ ब्रह्मचर्य्यं
व्रतेनैव फलभक्षेणवाथवा ॥ १५ ॥ उपवासेन नक्तेन स्थितास्तत्रद्विजर्षभाः ॥
तेषामागमनंनास्ति ब्रह्मलोकात्कदाचन ॥१६॥ स्नान दानं जपं होमं तर्पणं
पिण्डपातनम् ॥ ये कुर्वंति नरास्तत्र तत्सर्वमक्षयंभवेत् ॥१७॥ माधवे दुर्ल्लभेमासे

के शुक्लपक्षमें स्नान में तत्पर और ब्रह्मचर्य पूर्वक फल भक्षण करने वाले ॥ १५ ॥ तथा उपवास करने वाले और व्रत करनेवाले जो ब्राह्मण क्षत्री वैश्य वहां रहतेहैं इन तीनो जातिके शरीर त्याग नेके वाद ब्रह्मलोक से फिर उनका आगमन नहींहोताहै ॥ १६ ॥ कोशकी में स्नान दान जप

२०७

होम तर्पण पिण्डदान आदि जो कर्म मनुष्य करताहै वह सब अक्षय होताहै ॥ १७ ॥ वैशाख
महीने में कौशिकी नदी दुर्लभहै जहां मिथिला भूमि पुण्यकी देनवाली वहां कब मुक्ति दुर्लभ
होगी सदा सुलभहीहै ॥ १८ ॥ हे मैत्रेय कौशिकी की उत्पत्ति तथा माहात्म्य आपसे अच्छी तरह

तत्रापि कौशिकीनदी ॥ मिथिला पुण्यदायत्र किं मुक्तिर्दुर्लभाभवेत् ॥१८॥ इति
ते कथितो विप्र कौशिक्याश्चसमुद्भवः ॥ त्रियुगायाश्च माहात्म्यं कथयामितवा
ग्रतः ॥ १९ ॥ हिमवत्पर्वतोनाम यस्य पत्नी तु मेनका । तस्याः सहोदराजा
ता मेनाकस्य सुता तु सा ॥२०॥ त्रियुगेति मम ख्याता जानकीवल्लभासखी ।

कह सुनाया अब तृयुगा का माहात्म्य आपसे कहताहूं ॥१९॥ हिमालय नाम एक पर्वतहै उसकी
स्त्री जिसका मेनका नामहै उसकी सहोदर बहिन तृयुगाहै ॥ २० ॥ वह जानकीके समान
प्रभावयुक्तहै और जानकी की प्रियसखीहै दर्शनसे स्पर्शनसे तथा स्नान करनेसे इन तीन कर्म

से मुक्ति देतीहै ॥ २१ ॥ इसलिये मुनि लोगोंसे यह तृयुगा नाम से प्रसिद्धहुई इसलिये यह
तृयुगा वहुत पुण्य देनेवालीहैं ॥२२॥ तृयुगा में स्नान मात्र करनेसे ब्रह्महत्यादि पातक से मनुष्य

दर्शनस्पर्शनस्नान त्रियोगैर्मुक्तिदायिका ॥ २१ ॥ त्रियुगेति ततः प्रोक्ताः मुनि
भिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ तस्मात्पुण्य तमाज्ञेया लोकस्यशुभदायिनी ॥२२॥ त्रियुगा
स्नानमात्रेण ब्रह्महत्यादिपातकात् ॥ मुच्यतेनात्रसन्देहो देवलोकेमहीयते ॥२३॥
पुत्रार्थीलभतेपुत्रं धनार्थी धनमाप्नुयात्। माघेमासेविशेषेण त्रियुगा फलदाम-
ता ॥२४॥ त्रियुगा कौशिकीसंगे मकरच दिवाकरे ॥ गत्वास्नात्वा नरोभक्त्या

छूट जाताहै और मरनेके वाद देवलोकमें निवास करताहै इसमें कुछ संदेह नही है ॥ २३ ॥
पुत्रकी कामना वाले पुत्र पातेहैं धनकी कामना वाले धनको पातेहैं विशेषतः माघ महीना में
तृयुगा अधिक पुण्यको देतीहैं ॥ २४ ॥ तृयुगा और कौशिकी इन दोनों में जव मकर रासिकें

सूर्य होवें तब वहां जाकर स्नान करनेसे फिर जन्म नहीं होता ॥ २५ ॥ और हे मैत्रेय बारंबार तुमको कहतेहैं तृयुगा और कौशिकी इन दोनोंके जलके संगममें माघ में स्नान करने मे मनुष्य

पुनर्जन्म न विद्यते ॥२५॥ भूयोभूयोब्रवीमि त्वां संगमेह्युभयोर्जले ॥ माघेमासे नरो स्नात्वा मुच्यते कोटि किल्बिषात् ॥२६॥ इति ते कथिता विप्र त्रियुगायाः कथा शुभा ॥ पठनाच्छ्रवणाच्चैव मुच्यते नात्रसंशयः ॥२७॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशर मैत्रेयसम्वादे एकोनविंशोऽध्यायः ॥१९॥

श्रीपराशर उवाच ॥ पुनर्वच्मि मुनिश्रेष्ठ कमलायाः कथांशुभाम् ॥ यस्याःश्रवण

कोटि कोटि पापमे छुट जाताहै ॥ २६ । यह तृयुगा की कथा पापको हरन करने वाली तुमको सुनाया जिसको सुनने से और पढनेमे सब पापक मे मुक्तहोताहै इसमें संशयनहींहै ॥ २७॥ इति श्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

दो० । कमलाभव तपवर लहेउ गंगासम महिमान, दीसवें अध्यायमें रामायण करुणान ॥२०॥

श्रीपराशरजी मैत्रेयजीसे कहते हैं हे मुनि सवोंमें श्रेष्ठ ! फिर मैं आपसे कमलाकी शुभ कथा कहताहूं जिसके सुननेसे प्राणीमात्र मनोवांछित फलको पाते हैं ॥ १ ॥ जब कमला मन्दराचल

मात्रेण सर्वान्कामानवाप्नुयात् ॥ १ ॥ मन्दराचलसंभूता हिमाद्रौ तपसि स्थिता ॥ कमला चेति विख्याता तपस्तप्त्वा सुदुष्करम् ॥ २ ॥ बहुवर्षसहस्राणि स्थिता तत्र महागिरौ ॥ तपःप्रभावात्सा देवी गङ्गायाः समतां गता ॥ ३ ॥ कदाद्धिमवान्दृष्ट्वा तपसा द्योतितं प्रभाम् ॥ कमलां स्वप्रकाशेन प्रकाशितदिगन्तराम् ॥ ४ ॥

से उत्पन्न होकर तपस्या करनेलगी तब हिमालयमें कमला नामसे ख्यात भई और बहुत कठिन तपस्या उसने किया ॥ २ ॥ कई हजार वर्ष हिमालयके ऊपर कमलाजी ने निवास किया तब बहुत समय तक तपस्या करनेसे गंगाके समान होगई ॥ ३ ॥ किसी कालमें हिमालयने कमला

को देखा तपस्यासे जिसका मुख उज्वल होरहाहै और जिसके तापसे दसो दिसामें प्रकाश होताहै ॥ ४ ॥ और नदी रूपको धारण किये हुइ है जैसे नारायण की माया लक्ष्मी होवे इस भांति कमला को देखकर हिमालय ने कमला से पूछा किसलिये तुम तपस्या करतीहो ॥ ५ ॥

दिव्यरूपां हरेःसाक्षान्मायामेवहि भूतले ॥ नगेन्द्रस्तु तदा प्राह किमर्थं कुरुषे तपः ।५॥ प्रसन्नोह वरंब्रूहि वाँछितार्थं ददाम्यहम् ॥ गिरिराज वचःश्रुत्वा स्तुत्वा तं च हिमालयम् ॥ ६ ॥ नत्वा प्रांजलिकं कृत्वा स्थिताचाग्रेति सुन्दरी ॥ उवाच हर्षिता बाला ह्रीश्रीकीर्त्यादि वंदिता ॥ ७॥ कमले उवाच ॥ यदित्वं वरदो देव

मैं तुह्मारे ऊपर प्रसन्नहूं जो तुम मागोगी सो देगें क्या मागतीहौ वर मांगो हिमालय की यह वात सुनकर कमलाने हिमालय को प्रसन्नकिया ॥ ६ ॥ और हाथ जोड़कर श्री कीर्तिआदिसे बंदित करने वाली हिमालये के आगे खड़ी हुई और बोली ॥ ७ ॥ कि हे प्रवतराज यदि आप मेरे

ऊपर प्रसन्नहोकर वरको देतेहो तो कृपापूर्वक हमारा वचन सुनो ॥ ८ ॥ कलिमे मनुष्य सब अत्यन्त पापीहोंगे और शास्त्र विद्या से विहीन होंगे हिंसा के करनेवालेहोंगे ॥ ९ ॥ न जप

प्रसन्नोसि मयिप्रभो ॥ शृणु त्वं वचनंमह्यं यदि दास्यासि वांछितं ॥८॥ कलौ सर्वे भविष्यन्ति पापकर्मरता जनाः ॥ शास्त्रविद्या विहीनाश्च जीवहिंसापरायणाः ॥९॥ न जपं न तपोध्यानं न दानं हरिकीर्त्तनं ॥ सत्कथां नैव कुर्वन्ति तेषां श्रेयः कथं भवेत् ॥१०॥ गङ्गायाश्चैव माहात्म्ये कलिकाले गतेसति ॥ सर्वे ते नरकंयान्ति ब्रह्महत्यादि पातकैः ॥११॥ तस्मान्मे देहि गङ्गायाः गुणान्पापहरान्परान् ॥ दर्श

करेंगे न तप करेंगे न दान न हरि कथा श्रवण यह कुछभी न करेंगे न उत्तम उत्तम कथाको दूस रोंसे वर्णनकरेंगे तब उनलोगों की सद्गति कैसेहोगी ॥ १० ॥ और कलि जब कुछ बीतजायगा। तब गंगाजीका भी माहात्म्य नहीं रहेगा तब सबमनुष्य ब्रह्महत्यादि पाप करनेसे घोर नरकको

२१३

प्र सहोगा ॥ ११ ॥ इसलिए गंगामें जो पाप हरनेका गुण है सो मुझको दीजिए दर्शनसे स्पर्शनसे और पीनेसे जिसभांति गंगामुक्तिको देतीहैं ॥ १२ ॥ उसीभांति मुक्तिको देनेवाली मुझको भी

नात्स्पर्शनात्पानाद्यथा गङ्गा तु मुक्तिदा ॥१२॥ तथैव मां कुरुष्वाद्य यदि ते मय्य-
नुग्रहः ॥ इत्युदीरितमाकर्ण्य प्रत्युवाचाद्रिराट् ततः ॥१३॥ हिमवान् उवाच ॥
यथा गङ्गा तथैव त्वं सन्देहो नात्रविद्यते ॥ दर्शनात्स्पर्शनात्पानान्मुक्तो भवतु
मानवः ॥१४॥ श्रीपराशर उवाच ॥ इतिदत्वा वरं तस्यै वाञ्छितं पातकापहम्
साधुवादोमहानासीद्देवानां मुनिभिस्तदा ॥१५॥ कमलापितरं प्राप्यहिमवद्गह्वरे

बनाइये यदि मेरे ऊपर अनुग्रहै ? कमलाके इस वचनको सुनकर ॥ १३ ॥ हिमालय बोले जैसी गंगाहैं वैसेही तुमहो इस में कुछ संशयनहीं है दर्शनसे स्पर्शसे पान करनेसे मनुष्य मुक्तिको प्राप्त होंगे ॥१४॥ श्री पराशरजी मैत्रेयजीसे कहतेहैं हे मैत्रेय इसभांति पापका हरनेबाला वर कमलाको

जव दिया तव देवता और मुनि लोग धन्यवाद करनेलगे ।१५। और कमलाजी हिमालयसे वरको पाकर हिमलयकी कन्दरामें चलीगई मिथिला में धर्मस्वनामक एक ब्राह्मण धर्म और सत्कर्म करनेमें निरत ॥ १६ ॥ और तप ब्रत अतिथिकी पूजा अच्छीतरहसे करनेवाला तत्परहोकर पूजा

गता ॥ धर्मस्वब्राह्मणस्तत्र धर्मकर्म रतः सदा ॥१६॥ तपोव्रतकरोनित्यं ब्राह्मणातिथिपूजकः ॥ वसत्येव तदा तत्र पूजाध्यानैकतत्परः ॥१७। तस्यशीलादिकं दृष्ट्वा विचार्य मनसा तदा ॥ निवसाम्यहमत्रैव सीताप्रीणनहेतवे ॥ १८ ॥ इति निश्चित्यकमला ब्राह्मणस्यगृहेगता ॥ प्राह भो ब्राह्मणश्रेष्ठ निवासार्थं भवद्गृह ॥

ध्यान करनेवाला रहताथा ॥ १७ ॥ उस ब्राह्मणको शील स्वभावको देखकर कमला अपने मन में विचार करनेलगी मैं इसीजगह रहूंगी सीताजीको आनन्द करूंगी ॥ १८ ॥ इन सव वातोंको विचारकर कमला ब्राह्मणके घरगई और बोली हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ निवास करनेके लिए आपके

यहां आईहूं ॥ १९ ॥ आप मेरेको अपनी दासी समझिए मैं कमला आपकी सेवाकरूंगी इस
वातको सुनकर ब्राह्मण वहुत खुशहुये ॥२०॥ और कमलासे बोले कि हमको मंजूरहै हमारी चेरी
१९ ॥ आगतां विद्धिमां दासीं कमलां सेवने रतां इति तद्वचनंश्रुत्वा ब्राह्मणोती-
वहर्षितः ॥२०॥ प्राह मे भवनेतिष्ठ दास्यं कर्मकरोषिचेत् ॥ अंगीकृत्यस्थिता तत्र
गृहकर्मसदाकरोत् ॥२१॥ कुट्टनं पेषणंचैव मार्जनं गृहलेपनं ॥ उच्छिष्टक्षेपणं
चैव दिवसे दिवसे तदा ॥ २२ ॥ निशीथे तु सदागच्छेत्सीता क्रीडन हेतवे ॥
गत्वा सा सखिरूपेण सीतायासह क्रीडति ॥ २३ ॥ क्रीडित्वा विविधान्क्रीडान्
होकर दासीका कर्मकरो कमलानेभी अंगीकार करके ब्राह्मणके घर रहगई और उनके घरके काम
करनेलगी ॥२१॥ कूटना छांटना घर वहारना लीपना चौकादेना आदिकर्म रोजरोज करलेगी ॥२२॥
और जव आधीरात होजय तव कमला ब्राह्मणके घरसे वाहर जानकीजीके पास जाकर वहां सखी

भावसे क्रीड़ा करनेलगी ॥२३॥ रात्रि मे नाना प्रकारकी क्रीड़ा करके जब प्रातःकाल होय तव अ० २०.
फिर ब्राह्मणके घर चली आतीथी और गृहका जो कामहो उसको करतीथी ॥ २४ ॥ इसीप्रकार

पुनः प्रातर्गतातु सा ॥ विप्रस्यभवने कृत्यं स्वयमेव चकार सा ॥ २४ ॥ एवमेव प्रकारेण बहुवर्षे गतेसति ॥ कदाचिद्दैव योगेन पुण्यकालः समागतः ॥ २५ ॥ तस्मिन् योगे तु विप्रोवै गंगा गन्तु प्रचक्रमे ॥ तदा गमनकाले तु विप्रं प्राहमहेश्वरी ॥ २६ ॥ मयार्पितण्डुलं किञ्चिद्गंगार्थं ते समर्पितम् ॥ तद्गृह्यगच्छ भो विप्र ममनामतुकीर्त्त्यंच ॥ २७ ॥ गंगायैदीयतां विप्र तण्डुलं यन्मयार्पितम् ॥

से बहुत वर्ष वीतगया तव कोई पुण्यका समय पहुंचा ॥ २५ ॥ उसकालमें उस ब्राह्मणने गंगाजी की यात्राकी जब ब्राह्मण चलनेलगे तव कमलाजी ब्राह्मणसे बोली ॥२६॥ हे ब्राह्मण गंगाजीके लिए मैंभी कुछ चावल जुगताकर रखचुकीहूं उसकोभी आप लेजाइए हमारा नाम कहकर उन

को देदेना ॥ २७ ॥ प्रीतिपूर्वक उनकोदेना जो चावल दियाहै तव ब्राह्मण चावलकी मोटरीको लेकर चले ॥२८॥ गंगामें स्नान दान तर्पण आदि कर्म जव करचुके तव प्रणाम अस्तुति करके अतिहर्षित होकर घरको चले ॥२९॥ जव थोड़ी दूर ब्राह्मण वहांसे चले तव राह भूलकर फिर

गृहीत्वा पोटलीं तस्य तण्डुलस्यगतो द्विजः ॥ २८ ॥ गंगायां स्नानदानादि कृत्वा च तर्पणादिकं ॥ स्तुत्वा नत्वा गृहं गन्तुं मनश्चक्रेति हर्षितः ॥ २९ ॥ किंचिद्दूरं गतो विप्रो मार्गभ्रष्टात्पुनः पुनः ॥ तीरंप्रातिपुनः प्राप्तो विक्षिप्तोह्यातुरो यथा ॥३०॥ मयापराधो गंगायः किं कृतो मे जितात्मना ॥ येन मे चित्तसंभ्रान्ति

गङ्गाजीके तीरके ऊपर पहुंच गये जैसे कोई वौराहा जिस स्थानको छोड़दे फिर उसी स्थानके ऊपर पहुंचे ॥ ३० ॥ और ब्राह्मण अपने मनमें विचार करनेलगे हमने क्या गंगाका अपराध कियाहै जिससे हमारे मनमें भ्रम होगया तथा देशांस होगया ॥३१। इस वात को विचार

कर कमला की दीहुई मोटरी को कमला नाम कहकर गंगा को दे दिया ॥ ३२ ॥ उस काल
श्रीगंगाजी जलसे निकल कर दिव्य स्वरूप धारण करके गठरी को लेलिया दोनों हाथसे

दिग्भ्रमोऽपि च जायते ॥३१॥ इति चिंत्य तदा तत्र स्मृत्वा तत्पोटलीं शुभाम् ॥
गंगायै दातुमारम्भे कमलानाम कीर्त्तयन् ॥३२॥ तदा प्रादुरभूद्गंगा जलंभित्त्वा
सुरूपिणी ॥ पोटलींगृह्य वाहुभ्यां तत्रैवान्तरधीयत ॥३३॥ तदाश्चर्यं समालोक्य
ब्राह्मणोविस्मयंगतः ॥ स्तुत्वा नत्वा निवृत्तोभूत् चिंतयन्गृहमागतः ॥ ३४ ॥
दृष्ट्वा तां देवतां ज्ञात्वा परिक्राम्य पदाम्बुजे ॥ ननामशिरसा तत्र विस्मयात्फुल्ल

गठरी खोलकर अन्तरध्यान होगई ॥३३॥ इस आश्चर्य घटना को देख कर ब्राह्मण ने विस-
मित होकर स्तुति प्रणाम कर अपने घरको गमन किया ॥ ३४ ॥ समझा कि यह देवताका
कामहै यह कोई देवताहै इसको समझकर कमलाको परिक्रमाकरके शिर नवाके प्रणामकिया

विस्मय से तथा भक्तिसे विकसित नेत्र होगये ॥ ३५ ॥ तब कमलके समान नेत्रवाली जो कमला
थी उससे ब्राह्मण बोले हे देवि हे कमले आपने दासीके कामको धारण करके अपनी मायासे हमे
ठगलिया ॥ ३६ ॥ हे कमले जो आपका गंजन अपमान तथा आपके ऊपर मैंने क्रोधकिया उस

लोचनः ॥३५॥ उवाचतांततोविप्रः कमलां पद्मलोचनाम् ॥ त्वयाहं वञ्चितादेवी
दासीरूपेणमायया ॥३६॥ गंजनंचापमानं च भर्त्सनंचैवमत्कृतं । तत्कथंशमये
त्पापं जन्मजन्मान्तरैरपि ॥३७॥ तस्मात्कथय त्वंकासि कस्यपुत्री किमागता ॥
तच्छ्रुत्वा वचनं प्राह माभैषीर्द्विजसत्तम ॥३८॥ श्रीकमला उवाच ॥ मन्दराचल

पापकी शान्तिजन्मजन्मान्तर में भी नहीं होगी ॥ ३७ ॥ इस लिए हे कमले आप बतलाइए
आप कौनहैं किसकी पुत्री हैं कैसे यहां आई इसबातको सुनकर कमला बोली हे ब्राह्मण तुम मत
डरो ॥ ३८ ॥ हे ब्राह्मण मेरा कमला नामहै मन्दराचलकी पुत्री हमको जान हे ब्राह्मण तुम्हारा

कुछभी अपराध नहींहै हम अपनेहीं मायारूपसे तुम्हारे यहा कामकरतीथी ॥ ३९ ॥ गोतमीनदी
का यहां संगमहै वह करोड तीर्थका फलदेनेवालीहै माघ महीनामें जो वहां निवासकरते हैं उस
का फलनहीं कहसकतेहैं ॥ ४० ॥ हे ब्राह्मण हमारीमूर्तिको वहां स्थापनकरके विधिपूर्वक पूजा

पुत्रीमां कमलांविद्धिनाम मे ॥ स्वयं मया कृतंकर्म नापराधोऽस्ति तेद्विज ॥३९॥
गौतमी संगमोऽप्यत्र तीर्थकोटिफलप्रदः ॥ माघे तत्र निवसतां फलंवक्तुं न शक्य
ते ॥४०॥ मन्मूर्तिंस्थापय तत्रैव पूजांकुरु विधानतः ॥ स्नात्वा मत्पूजनं कृत्वा
मुक्तिःस्यात कोटिकिल्बिषैः ॥४१॥ अस्मिन्मकर संक्रान्तौ मत्पूजां तु विशे
षतः ॥ ये कुर्वन्ति नरास्तेषां सर्वार्थान्पूरयाम्यहं ॥४२॥ इत्युक्त्वान्तर्दधेदेवी नदी

करो वहां स्नान तथा हमारी पूजाकरनेसे कोटि कोटि पापसे मनुष्य मुक्तहोताहै ॥ ४१ ॥ इस
मकरकी संक्रान्तिमें जो हमारीपूजा करताहै उसके सब मनोरथको मैं पूर्णकरतीहूं ॥४२॥ इसबातको

कहकर कमलाजी अन्तर्द्ध्यान होगईं और नदीरूप होगईं और ब्राह्मणभी उनकी रोजरोज पूजा
करनेलगे॥४३॥ इसीभांति बहुतवर्ष स्नानध्यानमें तत्पररहतेथे फिर उसीस्थानके ऊपर वह मरणको

भूता सनातनी ॥ ब्राह्मणोऽपि सदाकुर्वन् पूजांतस्या दिनेदिने ॥४३॥ न्यवसद्बहुवर्षाणि स्नान ध्यान रतःसदा ॥ तत्रैव मरणंप्राप्य मुच्यते भवबन्धनात् ॥ ४४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन सेव्या सा कमलासरित् ॥ दिव्यरूपा माहामाया कलौगङ्गा प्रकीर्तिता ॥४५॥ तस्यां स्नानेन पानेन तत्तीर्थसेवनेन च ॥ माघेमासे विशेषेण कोटियज्ञफलं लभेत् ॥४६॥ स्नानं दानं जपोहोमं तर्पणं पिण्डपातनम् ॥ तत्तीरे

पाकर संसारके बंधनसे मुक्तहोगए॥४४॥ इसलिये सब प्रकारसे कमला नामसे प्रसिद्ध जो नदी है
उसका सेवनकरना जरूरहै कमलाका दिव्यरूपहै और महामायाहैं कलिमें गंगावही है ॥४५॥
उसमें स्नानकरनेसे उसके जलको पानकरनेसे तथा सेवनकरनेसे कोटियज्ञका फलहोताहै विशेष

कर मात्रमें अधिक फल होताहै ॥४६॥ स्नान दान जप तप होम तर्पण पिण्डदान यह सबकर्म उसके तीरपर करनेसे अक्षय होताहै ॥ ४७ ॥ कमलाका सेवन करनेसे मनुष्य सब कामनाको पाताहै और उसका सब पाप नष्ट होताहै जिसलिये यह सब कामको पूर्ण करतीहै इसलिए इनका कमला

यत्कृतं कर्म तत्सर्वमक्षयं भवेत् ॥४७॥ सर्वान्कामानवाप्नोति सर्वपापक्षयो भवेत् ॥ कामान्पूरयते यस्मात् तस्मात्सा कमलास्मृता ॥ ४८ ॥ कमलामांदरी पुण्या हैमीभूमिसुतासखी ॥ कलिगंगाब्धि पत्नी च कामदा पापहारिणी ॥४९॥ ज्ञानदा मुक्तिदा चैव कर्मबन्धविमोचनी ॥ इति द्वादश नामानि प्रातरुत्थाय यः

नामहुआ ॥ ४८ ॥ कमला १ मान्दरी २ पुण्या ३ हैमी ४ भूमिसुतासखी ५ कलिगंगा ६ अब्धि पत्नी ७ कामदा ८ पापहारिणी ९॥ ४९ ॥ ज्ञानदा १० मुक्तिदा ११ कर्मबन्धविमोचनी १२ इन कमलाके बारह नामोंको प्रातःकाल उठकर जो पढ़ताहै ॥ ५० ॥ वह श्रीसीतारामके प्रसा

दसे सब मनोवांछित फल पाताहै और सब कामको पूर्ण करनेवाली कमलाभी उनके ऊपर प्रस न्न होतीहै ॥ ५१ ॥ पराशरजी मैत्रेयजीसे कहतेहैं हे ब्राह्मण मैत्रेय उत्तम जो यह कमलाकी कथा

पठेत् ॥ ५० ॥ सर्वसिद्धि मवाप्नोति सीताराम प्रसादतः ॥ कमलापि प्रसन्ना स्यात्सर्वकाम प्रदायिनी ॥ ५१ ॥ इति ते कथिताविप्र कमलायाः कथाशुभा ॥ यस्याः श्रवणमात्रेण वाजपेय फलं लभेत ॥ ५२ ॥ ❁ ॥ इतिश्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये विंशोऽध्याय ॥ २० ॥

श्रीपराशर उवाच ॥ पुनर्वक्ष्यामि ते विप्र नारायणी कथां शुभां ॥ गण्डकीति

है आपने सुना जिसके सुननेसे वाजपेय यज्ञ करनेका फलहोताहै ॥ ५२ ॥ इति श्री वृहद्विष्णु पुराणे मिथिला माहात्म्ये द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ २० ॥ ❁

दो० । गंडकि अघवरलक्ष्मणा मंडनजमुनाधूम्रा तथा, रामायणएकवीसमें वीरजावागमतीयथा २१

फिर मैत्रेयसे पराशरजी कहते हैं हे मैत्रेय तुमको फिर नारायणीकी शुभकथा सुनाताहूं उसमें शालग्राम शिलाके उत्पन्न होनेसे शालग्रामी तथा गंडकी भी इसको सब कहते हैं ॥ १ ॥ इसके दर्शनसे महापापी होय तो महापातकसे छूटकर ब्रह्मलोक को पयान करताहै ॥ २ ॥ पुष्पदंत्त

समाख्याता शालग्राम शिलायुता ॥ १ ॥ तस्यादर्शनमात्रेण महापापिजनोपि च ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो ब्रह्मलोकं स गच्छति ॥ २ ॥ पुष्पदन्तस्य पुत्री सा गन्धर्वस्य महात्मनः ॥ पुण्यकर्मरतानित्यं हिमाद्रौ तपसिस्थिता ॥ ३ ॥ बहुवर्ष सहस्राणि तपस्तप्त्वा स दुःसहम् ॥ तपः प्रभावात्सा देवी नदीभूता

नामसे प्रसिद्ध एक गन्धर्व महात्मा थे ॥ उनको एक पुत्रीथी वह पुण्यमें आसक्त थी और हिमालयके ऊपर तपस्या करती थी ॥ ३ ॥ कई हजार वर्षतक वहां बहुत कठिन तपस्या को करके तपस्याके प्रभावसे जल बहनेवाली नदी होगई ॥ ४ ॥ सखीरूप धारण करके भी सीताजी के

साथ क्रीड़ा करनेलगी और मिथिलाके समीपमें रहगई ॥ ५ ॥ उसके स्नान करनेसे तथा दर्शन करनेसे मनुष्य अत्यन्त पुण्य प्राप्त करताहै और कार्त्तिककी पूर्णिमासी के गण्डकीमें स्नान करने

जलावहा ॥ ४ ॥ सखीरूपेण गत्वा सा सीतया सह क्रीडति ॥ सीताप्रियकरी साद्धी मिथिलाभ्यन्तरेस्थिता ॥ ५ ॥ तस्यां स्नानेन दानेन महापुण्यफलं लभेत् ॥ कार्तिक्यां पौर्णमास्यां च बिशेषफलदा मता ॥ ६ ॥ नैवोपमा भवेत्तस्याः साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ॥ दर्शनात्स्पर्शनात्पापान्मुच्यतेनात्र संशयः ॥ ७ ॥ तथा सा लक्ष्मणाज्ञेया महापातक नाशिनी ॥ समुद्र तनया

से महापुण्य होताहै ॥ ६ ॥ जिसकी उपमा नहीं है गण्डकी जो है सो ब्रह्मस्वरूपिणी है गण्डकी के दर्शनसे और स्पर्शसे पुरुष सब पातकसे छूट जाताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ७ ॥ इस भाँति लक्ष्मणा नदी हैं वहभी महापातक को नाश करनेवाली और साक्षात् लक्ष्मी स्वरूपा समुद्र

की पुत्री हैं ॥ ८ ॥ श्रीजानकीजीके साथ क्रीडा करने के लिए जल रूपसे प्रसिद्ध हुई हैं उसमें स्नान तथा दान करनेसे मनुष्य विष्णुरूप होजाताहै ॥ ९ ॥ उसमें वैशाख शुक्ल नौमीको स्नान

साक्षात्स्वयंलक्ष्मी प्रकीर्तिता ॥ ८ ॥ जानक्या सह जानित्या कलशाभ्यन्तरोद्गता ॥ तस्यां स्नानेन पानेन विष्णुरूपोभवेन्नरः ॥ ९ ॥ वैशाखस्य सिते पक्षे नवम्यां स्नानजं फलं ॥ तथा चैत्र नवम्यां वै मयावक्तुं न शक्यते ॥ १० ॥ कोटिजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ११ ॥ जानक्या क्रीडनार्थाय सखीरूपेण संस्थिता ॥ तस्याः द-

करनेसे अधिक पुण्य होताहै तथा चैत्र शुक्ल नौमी को स्नान करनेसे जो पुण्य होताहै उसको हम नहीं कहसकते हैं ॥ १० ॥ करोड़ जन्मका पाप थोड़ा हो या बहुतहो सब भस्म होजाता है और विष्णुलोक को प्राप्त होताहै ॥ ११ ॥ श्रीजानकीजी के साथ सखी रूपसे क्रीडा करती हैं उन

के दर्शन करनेसे सब पापसे मनुष्य मुक्त होजाताहै ॥ १२ ॥ स्वयं तीर्थ ऋषिकी अधोवारा इस नामसे ख्यात पुत्रीने बहुत तपस्याको किया ॥१३॥ तपके प्रभावसे वह कन्या नदीरूप होकर

र्शनमात्रेण सर्वपापात्प्रमुच्यते ॥१२॥ स्वयंतीर्थऋषेःपुत्रीजातासीतासहायिनी अधोवारेति विख्याता तपस्तप्त्वासु दारुणं ॥१३॥ तपःप्रभावात्सा कन्या नदीभूतासमागता ॥ सखीरूपेण सा गत्वा सीतया सह क्रीडति ॥१४॥ तस्यां स्नानेन पानेन सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ अधोगतिं गतान्लोकान्निवार्य्योर्ध्वगतिं नयेत् ॥१५॥ तस्मादधोवराप्रोक्ता मुनिभिस्तत्वदर्शिभिः ॥ दर्शनात्स्पर्शना

श्रीजानकीजी के साथ क्रीडा करती है ।१४। उसमें स्नान करनेसे तथा उसके जलको पान करनेसे मनुष्य सब पापसे मुक्त होताहै और अधोगति को प्राप्त जो मनुष्य है उसको वहांसे निवारण कर उर्द्ध गतिको देती है ॥ १५ ॥ इसीलिये तत्त्व ज्ञानी मुनिलोग अधोवारा कहते हैं इसके

दर्शन तथा स्पर्शनसे मनुष्य सब पापसे छूटजाताहै इसमें सन्देह नहींहै ॥ १६ ॥ अब फिर पराशरजी मैत्रेयसे कहतेहैं हे मैत्रेय अब पापोंकी हरनेवाली दुसरी कथा कहताहूं शाण्डिल्य ऋषि की पुत्री तपस्या करनेके लिये वनको गई ॥ १७ ॥ बहुत वर्षतक दुष्करतपस्या को वहां किया

तपापं मुच्यतेनात्र संशयः ॥ १६ ॥ तदन्यां कथयिष्यामि वनघोषां महानदी ॥ शाण्डिल्यस्य ऋषेः पुत्री तपस्तप्तुंगतावनम् ॥ १७॥ बहुवर्ष सहस्राणितपस्तप्त्वासु दुस्करम् ॥ जानकी प्रियकामा सा नदीभूता तपः फलात् ॥ १८॥ वनं शब्दैर्घोषमानं वनघोषाप्रकीर्तिता ॥ तद्वने मण्डनाच्चैव मण्डनाकथिताबुधै १९

श्रीजानकीजीको आनंद देनेकेलिए तपके प्रभावसे नदी होगई ॥१८॥ और वनघोखा नामसे प्रसिद्ध हुई शब्दसे वनको पूरित करती है इसलिए यह वनघोखाहुई और उस वनको मंण्डित (शोभित) करनेसे वह मंडना नामसे ख्यातहुई ॥ १९ ॥ यहभी सखी रूपसे श्रीजानकीजी के

साथ क्रीडा करती है जो भाग्यवान पुरुषहै वही इसमे स्नान दान तपस्या करतेहै और भाग्य
वानहीके इसके निकटमें मरण होताहै ॥२०॥ जिसका मरण होताहै उसका फिर भू मण्डलमें
आवागमन नहीं होता फागुन की पूर्णमासी को इसमे स्नान करनेसे बहुत पुण्यहोताहै ॥२१॥

सखीरूपंसमाश्रित्य जानक्यासह क्रीडति॥तस्यास्नानं च दानं च मरणंयस्य
वा भवेत् ॥ २० ॥ न तस्य पुनरावृत्तिर्भवेच्च क्षितिमण्डले ॥ फाल्गुने स्नानजं
पुण्यं कोटिकल्मषनाशनं ॥२१॥ कोटिब्रह्माण्ड तीर्थेषु स्नात्वा यत्फलमश्नुते ॥
तत्फलंलभते तस्यां स्नात्वा कुम्भगतेरवौ ॥२२॥ पुनर्वच्मि महाभाग माहात्म्यं

इसमें स्नान करनेसे कोटि२ कल्मष अर्थात् पाप नाश होतेहैं ब्रह्मांडमे जितने तीर्थहैं उनमें
स्नान करनेसे जो पुण्य होताहै सो सब पुण्य इस नदीमें कुम्भराशिके जब सूर्य्यहो तब स्नान
करनेसे होताहै ॥२२॥ फिर पराशरजी मैत्रय से कहते हैं हे मैत्रेय मैं पापको विनाश करनेवाले

२३०

माहात्म्यको वर्णन करताहूं सुनो तपनाद्रिकी पुत्रीयमुना थी ॥ २३॥ उसने वडीभारी तपस्याको वहुतवर्षतक किया तपस्यामे पत्रका अहार जल आहार तथा वायुका आहार करके ॥ २४ ॥ अ० २१.

पापनाशनम् ॥ तपनाद्रेः सुताजाता यमुनीति प्रकीर्तिता ॥२३॥ तयातप्तं तपो घोरं वहुवर्षसहस्रकं ॥ पत्राहारं जलाहारं वाय्वाहारं तथैवच ॥ २४ ॥ अनाहारं च कृत्वा तु तपते च दिवानिशं ॥ ततोयेन त्रयोलोकास्तापिताः स्युर्दिवा-निशं ॥२५॥ दिवि भुव्यन्तरिक्षे च महाघोषमभूत्ततः ॥ तेन घोषवती नाम्ना देवतावरसंभवा ॥२६॥ यमस्य भगिनी जाता सीताविश्राम हेतवे ॥ सदालिरूप

२३१ कभी उपवास से भी रात दिन तपस्या किया उसकी तपस्यासे तिनोलोकमें जरनेलगे ॥ २५ ॥ आकाश और भूमण्डलमें हाहा कार होनेलगा इसलिए वह घोषवती नाम से प्रसिद्ध नदीहुई ॥ २६ ॥ वह यमकी वहिन श्रीजानकीके विश्रामके लिये सदा सखीके रुपको धारण करके श्रीजा २३१

नकी केसाथ क्रीडाकरतीहै ॥ २७ ॥ स्नान जप होम तर्पण इसमें जो करताहै सो जीवन् मुक्त
होताहै ॥ २८ ॥ कार्तिक महिनामे विसेषतः उन महीनेका कियाहुआ धर्मकार्य्य कोटि कोटि

मास्थाय जानक्या सह क्रीडति ॥ २७ ॥ स्नानं दानं जपोहोमं तर्प्पणं श्राद्ध
मेवच ॥ तत्तीरे कुरुतेयस्तु जीवनमुक्तः सदाभवेत् ॥२८॥ कार्तिके तु विशेषेण
तत्रधर्मादिकं चरेत् कृतं शुभाशुभंकर्म तत्तत्कोटिगुणं भवेत् ॥२९॥ पुनरन्यां
प्रवक्षामि कथांपाप हरांपरां ॥ सुकलोनाम गोपस्तु वसन्कश्चित्तपोवने ॥३०॥
तस्य पुत्री समुत्पन्ना धूम्राख्या च तपोवने ॥ तपस्तप्त्वासुघोरं वै समाधिं

गुणहोताहै ॥ २९ ॥ पराशरजी कहते है कि हे मैत्रेय फिर दूसरी कथा तुमको कहताहूं सुकुल
नाम से प्रसिद्ध कोइ गोआलथा वह तपोवनमें रहताथा ॥३०॥ उसकी एकपुत्री थी उसका धूम्रा
नामथा उसने उसतपोवनमें बहुत भयानक तपस्याकी और समाधि करनेलगी ॥ ३१ ॥ उसी

के प्राणायामसे धूम्रकासमुह निकला उस धुम्रसमूह से दशोदिशामे अंधकार होगया ॥ ३२ ॥ तब देवतालोग उसकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उससे कहा तपस्या तुह्मारी पुरीहोचुकी हे पुत्री

कुरुतेसदा ॥ ३१ ॥ प्राणायाम समुद्भूत धूमावलिसमुत्थिता तद्धूमनैवसर्वत्र व्याप्तं दशदिगन्तरम् ॥ ३२ ॥ तेनदेवास्तुतांप्राहुः फलितं ते तपोमहत् ॥ धूम्रानाम नदीभूत्वा तिष्ठत्वसेयथासुखं ॥ ३३ ॥ इतितस्यैववरंदत्वा गतास्ते च दिवौकसः ॥ सखीरूपंसमाश्रित्य सीतयासहक्रीडति ॥ ३४ ॥ वीराद्गोपात्समुद्भूता वीरजा कथिताबुधैः ॥ तस्यां स्नानेन पानेन महापुण्य फलं लभेत ॥ ३५ ॥ श्रावणेमासि

तुमइसस्थानमें धूम्रानामसे प्रसिद्धनदी होकर आनन्दसे यहांविचरो ॥ ३३ ॥ यहवर धुम्राको देकर देवतालोग अपने२ स्थानको गये और धूम्रा सखीरूपको धारण करके श्रीसीताजीके साथ क्रीडाकरनेलगी ॥ ३४ ॥ और विरगोपसें उत्पन्न जोनदी सो विरजानामसें प्रसिद्धहुई उसके ज

लको पानकरनेसे और उसमे अस्नान करनेसे वडा पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ३५ ॥ विरजा नदी में सावनके महीनामें जो स्नान तथा दानकरता है वह सवपापों से छुटकर विष्णुलोक में निवास करताहै ॥ ३६ ॥ और इसीतरह से वाग्मती आदि नदी मिथिलामें निवास करती है वह

यः स्नात्वा कृत्वा दानादिकां क्रियां ॥ सर्वपापैर्विनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ३६ ॥ एवमेव प्रकारेण वाग्मत्यादि सरीद्वराः ॥ वसन्ति मिथिलां प्राप्य भुक्तिमुक्ति प्रदायिका ॥३७॥ तासु स्नानेन पानेन तपो दानादिकात्तथा ॥ तज्जलं स्पर्शने नैव मुच्यते सर्वपातकैः ॥ ३८ ॥ षड्नद्यो वर्णिता विप्र सीताप्रीति

सव भुक्तिमुक्तिको देनेवाली है ॥ ३७ ॥ इन सभों में स्नान से तथा इनके जलको पान करनेसे वहां तपस्या करनेसे उसके जलको स्पर्श करनेसे मनुष्य सव प्रकारके पापसे रहित होताहै ॥३८॥ हे मैत्रेय जो सव नदी का वर्णन कियाहै वह सव श्रीजानकी के चरणमें प्रीतिको देनेवाली हैं

जिनकी कथा सुननेसे मनुष्य मुक्त होताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ ३९ ॥ ❀ इति श्रीवृहद्
विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये त्रय त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ २१ ॥ अ० २२.

करासुभाः ॥ यत्कथाश्रवणेनैव विमुक्तःस्यान्न संशयः ॥ ३९ ॥ ❀ ॥ इतिश्री
वृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे एकविंसोऽध्यायः॥ २१॥

श्रीपराशर उवाच ॥ इदं समासतः प्रोक्तं तव प्रीत्या मयाधुना ॥ माहात्म्यं
मिथिलायाश्च मया वक्तुं न शक्यते ॥ १ ॥ रामस्वरूपा सा भूमिर्मिथिलावर्णि

दो० । जपतपतीरथ साधना जोग्य यग्य उपवास, रामायण वाइसलहरी मिथिलासमकृतवास २२

पराशरजी मैत्रेयसे कहते हैं कि हे मैत्रेय तुम्हारे ऊपर कृपा करके संक्षेपसे इस कथाको इस
कालमें वर्णन कियाहै परन्तु मिथिलाके माहात्म्य को कहनेकी शक्ति मुझको नहीं है ॥ १ ॥
रामस्वरूपा मिथिला पहले निर्माण हुई है श्रीरामचन्द्रके मस्तक भागमें हिमालय का एक खंड

है ॥ २ ॥ और श्रीरामचन्द्रके दोनों चरणमें गंगाजी हैं दहिने हाथमें गण्डकी बायें हाथमें कोश
की नाभी में जनकालय ॥ ३ ॥ हृदयमें कमलाहै वह जानकीकी अत्यन्त प्रियहै इसी भाँति
और और जो तीर्थ है वह सब श्रीरामचन्द्रके अंग प्रत्यंग में विद्यमान है ॥४॥ सम्पूर्ण कामना

तापुरा ॥ शिरोभागेनरामस्य हिमवत्खण्डमास्थितं ॥ २ ॥ पादयोर्जाह्नवी देवी
गण्डकीदक्षिणेकरे ॥ वामे तु कौशिकीज्ञेया नाभौ च जनकालयः ॥ ३ ॥ हृद
ये कमलादेवी जानकीवल्लभासखी ॥ एवं सर्वाणि तीर्थाणि प्रत्यंगेषु स्थितानि
हि ॥ ४ ॥ रामतुष्टिकरी लोके सर्वकामसमेधिनी ॥ मिथिलासर्वतःपुण्या सुरा
णामपिदुर्ल्लभा ॥ ५ ॥ प्रयागे बहुवर्षाणि काश्यां वा बहुवर्षकम् ॥ नैमिषे वा

के देनेवाली और लोकमें श्रीरामचन्द्रजी की तुष्टि करनेवाली देवताओंको दुर्लभ यह मिथिला
सदा पुण्याहै ॥ ५ ॥ प्रयागमें अथवा काशी में अनेक वर्ष निवासकरे अथवा नैमिषारण्य अथवा

कुरुक्षेत्र में जन्मपर्य्यन्त निवासकरै ॥ ६ ॥ अथवा विष्णुकांचीमें अथवा अवन्तिका में अथवा बद्रीनारायणम अथवा वेंकटादि महापीठ में अथवा गंगासागरके संगममें ।७। अथवा मुक्तिक्षेत्रमें अथवा हारद्वार में अथवा ब्रह्मावर्त्तमें अथवा गयामें जो जन्मभर निवास करै अथवा जो सब

कुरुक्षेत्रे जन्मावधि वसेन्नरः ॥ ६ ॥ अवन्त्यां विष्णुकांच्यां च नरनारायणाश्रमे ॥ व्यंकटाद्रौ महापीठे गंगासागर संगमे ॥ ७॥ मुक्तिक्षेत्रे हरिद्वारे ब्रह्मावर्ते गयाशिरे ॥ आजन्मनिवसद्यस्तु परिक्रामेद्ध्रुवं तथा ॥८॥ गवां लक्षप्रदाता च शतग्रामप्रदायकः ॥ सुवर्णमेरुदाता च रत्नाकर प्रदायकः ॥९॥ याजकः सर्व

पृथ्वीकी परिक्रमा करै ॥ ८ ॥ और जो विधिपूर्व्वक लक्ष गोदान करै और सैकडो गाव दान करै अथवा शोनेके पहाड दानकरै और जो रत्नकी खानि दानकरै ॥ ९ ॥ और जो सब यज्ञ करताहै और जो सदा स्वध्याय अर्थात् (वेदपाठ) में प्रवृत्त रहताहै और कृच्छ आते कृच्छ

अर्थात अति कष्ट करके व्रतादिक करताहै और जो सदा प्रजापत्य व्रत करताहै ॥१०॥ और जो पराक व्रत अर्थात् एकवार भोजन करताहै और सदा अग्नि सेवामे रत रहताहै जिसे अग्निहोत्री कहते हैं और जो चन्द्रायण व्रत करताहै और जो निराग्नि अर्थात कभी अग्निको नहीं छूताहै

यज्ञानां स्वाध्याय निरतस्तथा ॥ कृच्छ्रातिकृच्छ्रकर्ता च प्राजापत्येनवर्तकः ॥ १० ॥ पराकादि व्रतैर्युक्तश्चान्द्रायण प्रवर्त्तकः ॥ निराग्निश्च तिलाशी च पंचगव्येन वर्तकः ॥ ११ ॥ पत्राहारो जलाहारो निराहारस्तथैव च ॥ दरीशायी गिरौवासी ग्रीष्मेपंचाग्निसेवकः ॥१२॥ वर्षासुस्थण्डिलं वासी शिशिरं सलिले

और जो तिलासी अर्थात् सदा तिल भोजन करताहै और जो नित्य पंचगव्यसे स्नान करताहै ॥११॥ और जो मनुष्य पत्र खाकर अथवा सदा जलही पीकर रहतेहैं अथवा निराहारही रहते हैं और जो कन्दरामें शयन करते है और जो वृक्षकेतले रहते है और जो ग्रीष्मकालमें पंचाग्नि तापते

हैं।१२। और जो वर्षाऋतुमें विनाछायाके रहते हैं और जो जाड़ेमें जलशयन करताहै और जो ऊर्द्ध
वाहु रहते हैं और जो अशय्या रहते हैं और जो सदाएकही स्थानपर रहते हैं और जो कपाली अ० २२.
अर्थात् विनावस्त्रके रहते हैं।१३। और ब्रह्मयज्ञमें रत रहते हैं और जो तत्वज्ञानके चिन्तक हैं और

शयः ॥ ऊर्ध्ववाहुरसय्यश्च स्थाणुकापालिकस्तथा ॥ १३ ॥ ब्रह्मसूत्रानुवर्ती च तत्वज्ञानैक चिंतकः ॥ योगेष्वभिरतश्चैव देवतार्चन तत्परः ॥ १४॥ पुरश्चर्यार तश्चैव हविष्याशीजितेंद्रियः ॥ निखिलैःसाधनैश्चैव वहुजन्मसमार्जितैः ॥१५॥ महापुण्यातिरेकैश्च जन्मलब्ध्वा तु भारते ॥ मिथिलायां निवासेन नराःसंयां

जो सदा योगमें रत रहते हैं और जो देवता पूजनमें तत्पर रहते हैं॥१४॥ और जो पुरश्चरणमें रत
रहते हैं और जो सदाहविष्यान्न भोजनकरते हैं और जो जितेंद्रिय होकर रहते हैं और जो अपना
सम्पूर्ण साधन वहुतजन्मतक करते हैं ॥ १५ ॥ और जोकोई अतिपुण्य कियेहुयेहैं वेलोग भा र २३९

तखण्ड में जन्मपाकर जो एकबार मिथिलापुरी में वासकरै तो जितने साधन ऊपर कहआय है उनके अनुसार फलपाते है ॥१६॥ हे मैत्रेय ब्रह्माजी जिस तत्वको वसिष्ठको सुनायाथा वह सव वर्णन कियाहै मनुष्यके उपकारके लिए ॥१७॥ और जो लोग इस मिथिला माहात्म्यको सुनते

ति योग्यताम् ॥ १६ ॥ यदुक्तंब्रह्मणातत्वं वशिष्ठायमहात्मने ॥ तन्मयावर्णितं तेच लोकानां हितकाम्यया ॥ १७ ॥ य इदं श्रावयेनित्यं श्रुत्वा वाहृदि धारयेत् सीतारामौ हृदित्यस्य सरामंप्राप्नुयाद्धुवं ॥ १८ ॥ प्रीयन्तेपितरस्तस्य प्रीयन्ते तस्यदेवताः ॥ देवनां साम्यतां लब्ध्वा सर्वान्कामा न वाप्नुयात् ॥ १९ ॥ ये

या सुनाते या अपने हृदयमें धारण करते हैं उनके हृदयमें श्रीरामचन्द्रजी निवास करते हैं और मनुष्य अवश्य रामचन्द्रजीमें प्राप्त होताहै ॥१८॥ और उस मनुष्यके देवता और पितर सव तृप्त होजाते हैं और देवताओंमें उस मनुष्य का मान होताहै और उसकी सव कमना पूरी होती है

॥१९॥ जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस तत्वको रामभक्त होकर पढ़ताहै उसको फिर ब्रह्मलोकसे लौट कर जन्म नहीं होताहै ॥२०॥ मिथिलाकी परिक्रमाके समय जो इसको पढ़ते हैं तथा श्रवण

पठंति नराभक्त्या रामभक्तसभासु च ॥ तेषामागमनंनास्ति ब्रह्मलोकात्कदाच न ॥२०॥ मिथिलायाःपरिक्रम्यै शृण्वंति ये पठंतिच ॥ तेषां सा सफला यात्रा विधिहीनापि सर्वदा ॥२१॥ पंचाह्निकी कथाप्रोक्ता नियमेनशृणोति चेत् ॥ मण्डपंकारयेत्प्राज्ञः कदलीस्तम्भ मंडितं ॥२२॥ तोरणादि विचित्रैश्च कलसादि विशोभितां ॥ पुस्तकं तत्र संस्थाप्य पूजयद्विधि पूर्वकम् ॥२३॥ वाचकं

करते हैं उन लोगोंकी यात्रा विधिहीन भी हो तथापि सफल होती है ॥२१॥ पांचरोज यह कथा नियमसे श्रवण करे मण्डपको बनावे और मण्डपके चारो तरफ केराके वृक्षोंको रोपे ॥२२॥ कलश स्थापनकरे और मण्डपके चारोतरफ वन्दनवारको लगावे उस मण्डपमें पुस्तकको रख

२४१

कर विधिपूर्वक पूजनकरै ॥ २३ ॥ इस पुस्तकके पूजाकरने के बाद कथा बाँचनेवाले व्यासका पूजा करै कथा आरम्भके समयमें तथा समाप्ति के समय मंगलाचरण करै शंख ध्वनि अर्थात्

पूजयेत् पश्चाद्वाचयेत्तदनंतरं ॥ आद्यंते मंगलं कुर्याच्छंखवाद्यादिकध्वनिम् ॥ २४ ॥ वक्ताभिमुखमास्थाय श्रोतृणां बोधनाय च ॥ स्पष्टाक्षरं वदेत्सर्वं पदं भावार्थसंयुतम् । २५॥ सर्गान्ते पुस्तकं पूज्याच्छ्रोता पुष्पाक्षतादिभिः ॥ सीतारामौ हृदिन्यस्य श्रवणे सन्मुखस्थितः ॥ २६ ॥ अनेनैव विधानेन मौनेनश्रवणंवरं पुस्तकंपूजयेद्भक्त्या श्रृणुयाच्च समाहितः ॥ २७ ॥ पठेद्वा श्रृणुयाद्वापि श्लोकं

शब्द करै ॥२४॥ वक्ता कथा बाँचने वाला श्रोतालोगोंके तरफ मुख करके उच्च स्वरसे साफ२ अर्थ कहकर समझावैं ॥२५॥ और जब अध्याय समाप्तहो तब कथा सुननेवाला श्रोता फूल और अक्षतसे पूजन करै इसी प्रकार से श्रोता कथाको श्रवणकरे यह उत्तमप्रकारहै ॥ २६ ॥ एकाग्र

चित्तसे पुस्तकको पूजनकरे और एकाग्रचित्त होकर भक्तिसे कथाको श्रवणकरे तो ॥ २७ ॥ पुस्तकको एकश्लोक अथवा आधा श्लोक श्रवणकरे या पढे ऐसा जो पुरुषहै उसको न यहां कुछ दुःखका भोग करनाहोताहै और न मरनेकेबाद परलोकमें दुःखको भोगना होताहै ॥ २८ ॥ और

श्लोकार्द्धमेवच ॥ न तस्यदुरितं किंचिदिहलोकेपरत्र च ॥ २८ ॥ सर्वान्कामान् वाप्नोति रामचन्द्र प्रसादतः ॥ यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितं ॥ २९ ॥ प्रथमाऽध्याय मारभ्य यावद्द्वविंशतिर्भवेत् ॥ एकाह पाठमात्रेण मुक्तो भवति मानवः ॥ ३० ॥ तत्पुस्तकं च योदद्याद्वाचकायद्विजातये ॥ प्रत्यक्षरन्तु

सब मनोरथको प्राप्त होताहै श्रीरामचन्द्रजी के प्रसादसे मनुष्य जो२ इच्छा करे वह सब भगवान की कृपासे अवश्य पूर्ण होताहै ॥ २९ ॥ पहिले अध्यायसे आरम्भ करके २२ वां अध्याय तक एक दिनमें पाठ करनेसे मनुष्य मुक्त होताहै ॥३०॥ और इस पुस्तकको जो प्राणी कथा वांचने

वाले ब्राह्मणको देतेहैं उनको पुस्तकमें जेतने अच्छरहैं उतना गोदान करनेका पुण्य होताहै इसमे

गोदान फलंप्राप्नोति निश्चितं ॥ ३१ ॥ इतिश्री बृहद्विष्णुपुराणे मिथिलाखण्डे मिथिलामाहात्म्ये पराशरमैत्रेयसम्वादे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ समाप्तं इति

कुछभी सन्देह नहीं है ॥३१॥ इतिश्रीवृहद्विष्णुपुराणे मिथिलामात्म्ये चतुर्विंशोऽध्यायः॥३४॥२२

दोहा माधवद्वितीय बुद्धदिन उन्नैसरुदनवशाल । मिथिलामे पूरणभयो सवसंतनउरमाल ॥२३॥

दोहार्थ ॥ माधव नाम बेशाख कृष्णा पक्ष के द्वितीया तिथि वुद्ध दिन शम्वत उन्नैससै खट्ट नव नाम कही शाठि नव उनहत्तर ॥ ६९ ॥ इति ॥ ❁ ॥ ❁ ॥ ❁ ॥

भाषाव्याख्या समायुक्तं मिथिलाया माहात्म्यकम् वैष्णवेन मयातिर भुक्तौ निवसतासदा ॥ १ ॥
भक्तोपकार सिद्धयर्थं मुद्रापयितु मिच्छता । सतांनित्यानु रक्ताय श्रीमतेऽमृत संज्ञिने ॥ २ ॥
ग्रामे करजनाह्वाख्ये वासिने सं प्रदर्शितम् । श्रीमान् महन्थलालस्तु स्वपुत्रस्तेन देशितः ॥ ३ ॥
तेनाज्ञां पितुरासाद्य मुद्रणव्यय दानतः । मद्द्वारा दरभंगास्थ श्रीरमेश्वरयन्त्रके ॥ ४ ॥
मुद्रायित मतश्चास्मै धन्यवादो वितीर्यते । तन्महामहो पाध्याया द्यनेक विरुदाङ्कितः ॥ ५ ॥
श्रीमच्चित्रधरोमिश्रः शोधयामास सकृपः । अस्मैदयाल वेतेन धन्यवादः सहस्रशः ॥ ६ ॥

इति निवेदयति ।मिथिलाभक्तः श्रीरामायण शरणदासो महन्थः देवधास्थान निवासी—

पुस्तक [illegible] पेलनेकापता—

श्री[illegible] लाल मालिकके ड्योढीपर

मोकाम दे[illegible]० देवोधा जि० दरभंगा।

॥ इति ॥

॥ श्रीमिथिलामाहात्म्यं भाषाटीका सहितं ॥

॥ समाप्तम् ॥